Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका

जुलाई १९७५

समांतर कहानी विशेषांक: १०

नवलेखन: दो तथा लघुकथाएं

आम आदमी के आसपास: आज की कहानियां

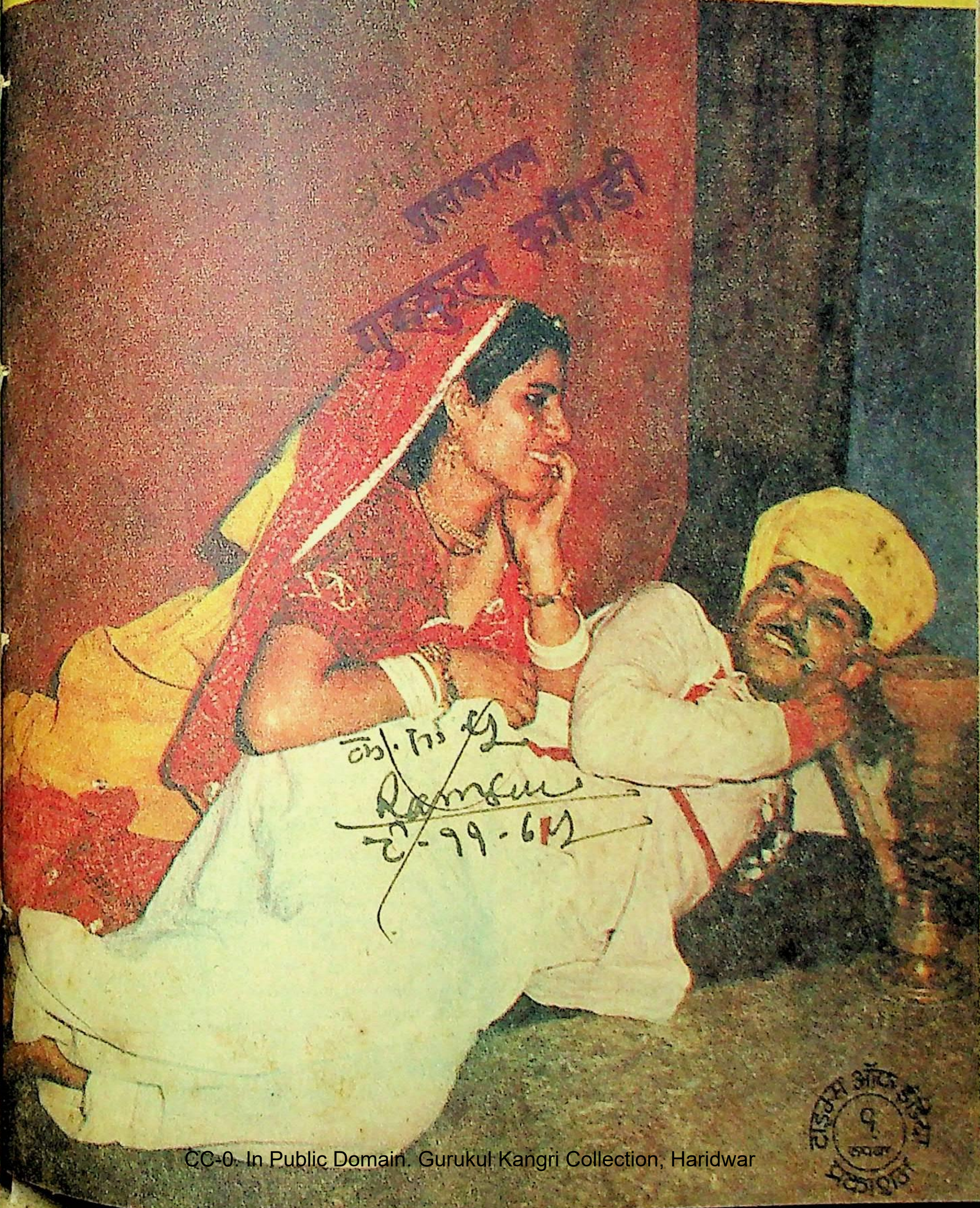

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्द पॉकेट बुक्स

द्वारा प्रकाशित

श्रेष्ठ उपन्यास

पॉकेट बुक्स में ऐसा गौरवपूर्ण साहित्य प्रकाशित करने का श्रेय केवल हिन्द पॉकेट बुक्स को है

अच्छी पुस्तकों का दूसरा नाम : हिन्द पॉकेट बुक्स

कुछ अन्य लोकप्रिय हिन्द पॉकेट बुक्स

उपन्यास

निर्मला प्रेमचन्द 2.50
दादा कामरेड यशपाल 4.00
अनाड़ी उपेन्द्रनाथ अश्क 3.00
शतरंज के मोहरे अमृतलाल नागर 4.00
अपने खिलौने भगवतीचरण वर्मा 5.00
नरक मन्मथनाथ गुप्त 4.00
पुष्पगंधा भगवतीप्रसाद वाजपेयी 4.00
कलंक-मुक्ति रेणु 2.50
गोली आचार्य चतुरसेन 5.00
रति विलाप शिवानी 3.00
भैरवी चक्र गुरुदत्त 6.00
भंवर भैरवप्रसाद गुप्त 3.50
प्यार या पाप भ्रमर 3.00
कार्निवाल कृश्न चन्दर 3.00
एरियल अमृता प्रीतम 2.00
एक चादर मैली सी राजेन्द्र सिंह बेदी 3.00

रोमांटिक उपन्यास

कटी पतंग गुलशन नन्दा 5.00
सोने की लंका ,, 3.00
झील के उस पार ,, 3.00
शराफत शेखर 3.00
तेरे मेरे चेहरे शेखर 3.00
कुंवारी सुहागिन ,, 3.00
बाज़ी मीनाक्षी माथुर 3.00
आग बनी सुहाग ,, 3.00
दिल और दर्द ,, 3.00

वैज्ञानिक उपन्यास

सूरज की भेंट प्रो० दिवाकर 3.00
नक्षत्रों का युद्ध ,, 3.00
समय के स्वामी ,, 3.00
शुक्र ग्रह पर धावा ,, 3.00

जासूसी उपन्यास

काला शाल कर्नल रंजीत 3.00
मौत का महल ,, 3.00
11 बजकर 12 मिनट ,, 3.00
सफेद खून ,, 3.00

जीवनोपयोगी

अनमोल मोती 3.00
सफलता के आठ साधन 3.00
भावनाओं के चमत्कार 3.00
महापुरुषों की सूक्तियां 3.00

विविध

स्त्री-पुरुष डा० लक्ष्मीनारायण 3.00
उर्दू की बेहतरीन शायरी सं० प्रकाश पंडित 4.00

हिन्द पॉकेट बुक्स सभी पुस्तक-विक्रेताओं के यहाँ पर मिलती हैं। यदि प्राप्ति में कोई कठिनाई हो तो घर बैठे अपनी मनपसंद पुस्तकें प्राप्त करने के लिए

हिन्द पॉकेट बुक्स द्वारा संचालित

घरेलू लाइब्रेरी योजना

(बुक-क्लब)

के सदस्य बनिए तथा प्रति मास 12 रु० की पुस्तकें 8 रु० में प्राप्त कीजिए। मासिक पत्रिका 'साहित्य संगम' निःशुल्क

नीचे दिए कूपन या किसी पोस्टकार्ड पर यहाँ दी गई पुस्तकों में से अपनी पसंद की 12 रु० की पुस्तकों के नाम लिखकर भेज दें। हम आपको सदस्य बनाकर वी० पी० पैकेट से पुस्तकें भेजनी शुरू कर देंगे। डाक-व्यय के दो रु० भी वी० पी० राशि में जोड़ कर दस रु० की वी० पी० भेजा करेंगे। केवल पहली वी० पी० में सदस्यता-शुल्क के दो रु० भी जोड़े जाएंगे (जो कि आपकी जमानत के रूप में हमारे पास जमा रहेंगे। इस प्रकार पहली वी० पी० बारह रुपये की होगी।

घरेलू लाइब्रेरी योजना (बुक-क्लब) — सदस्यता-कूपन

नाम ____________________
पता ____________________
____
____

1. ____________
2. ____________
3. ____________
4. ____________
5. ____________

मुझे घरेलू लाइब्रेरी योजना का सदस्य बनाएं। शुल्क के 2 रुपये पहली वी० पी० में जोड़कर 12 रुपये की वी० पी० से पुस्तकें भिजवा दें।

घरेलू लाइब्रेरी योजना-बुक-क्लब (क), जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली-32

हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा. लि.

जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली- 110032

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप इनमें से किस पुरुष जैसे दिखते हैं?

आप अपने शरीर को शक्तिशाली मर्दाना बनाइए— सिर्फ़ १४ दिन में परिणाम देखिए— अन्यथा दाम न दीजिए!

आदम कद शीशे के सामने खड़े होकर, अपनी शारीरिक अवस्था के बारे में खुद भ्रम में पड़ जाना कितना सरल है। क्या सचमुच आपका शरीर वैसा ही मर्दाना है जिससे दूसरे पुरुषों में ईर्षा जाग उठे और स्त्रियों में प्रशंसा? अगर नहीं तो यह खबर सुन आप झूम उठेंगे। एक अति क्रांतिकारी, नये किस्म का साधन बनाया गया है जो आपको वैसाही बदन देगा जैसा आप हमेशा से चाहते रहे हैं और वह भी सिर्फ कुछ सप्ताहों में ही। कल्पना कीजिए... आपकी मांस पेशियाँ फ़ौलादी हो... बाहों की मछलियों का शक्तिशाली मर्दाना उभार... पेड़ के प्रचंड तने जैसी रानें। अब आप इसे हक़ीकत बना सकते हैं। इस नये साधन का नाम है— बुलवर्कर ३ विश्व के नवीनतम वैज्ञानिक सिद्धांत आइसोटॉनिक/आयसोमेट्रिक पर बने होने के कारण बुलवर्कर ३ आपके पूरे शरीर में प्रचंड नई ताक़त और स्फूर्ति भर देता है— परंपरागत पद्धतियों से कई गुना तेज़ रफ्तार से। और आप स्वयं यह केवल १४ दिनों में सिद्ध कर सकते हैं।

नये पावर मीटर

से आप अपनी मांस पेशियों की शक्ति को दिन-ब-दिन बढ़ते हुए देख सकते हैं।

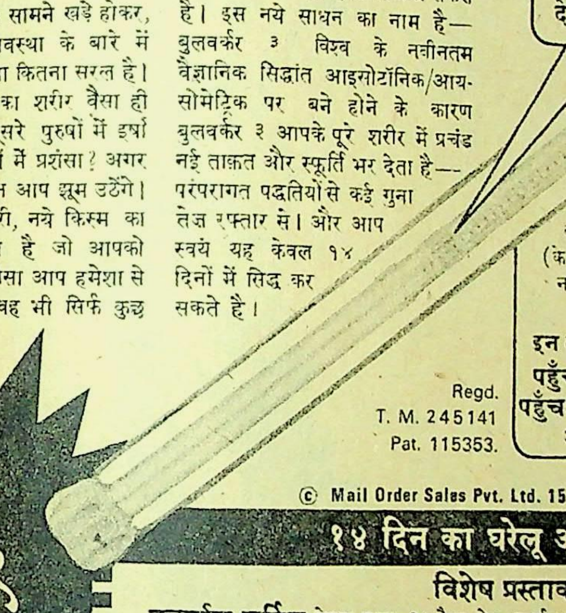

Regd.
T. M. 245141
Pat. 115353.

बुलवर्कर की लोगों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उदाहरण के तौर पर देखिये:

"मैंने सब कुछ आजमा कर देखा, किंतु शरीर को गठीला बनाने में बुलवर्कर '३' का जवाब नहीं" (के. आर. चौधरी, आन्ध्र प्रदेश) "मुझे विश्वास ही नहीं हुआ कि इतने थोड़े अभ्यास से इतना कमाल हो सकता है। (ए. हाल बर्नली)

इन लोगों को बुलवर्कर ने अद्भुत लाभ पहुँचाया है। यह आपको भी अद्भुत लाभ पहुँचायेगा। इस मुफ्त प्रस्ताव का फायदा उठाइए और स्वयं ही देख लीजिए...

अब सिर्फ रु. ३९ तथा शेष आसान माहवारी किस्तों में।

© Mail Order Sales Pvt. Ltd. 15 Mathew Road, Bombay 400 004

१४ दिन का घरेलू अभ्यास कूपन

विशेष प्रस्ताव

SB9 208/39-H

बुलवर्कर सर्विस मेहता महल, १५ मैथ्यू रोड, बम्बई ४०० ००४

मुझे १४ दिन के घरेलू अभ्यास के लिये तुरंत बुलवर्कर-३ भेजिये। यदि मैं परिणामों से संतुष्ट न हुआ तो अपनी पूर्ण रकम तुरंत वापस पाने के लिये सबकुछ १४ दिन की अभ्यास अवधि के भीतर लौटा दूंगा।

कृपया अपनी पसंद के खाने में ☑ निशान लगाइये।

☐ वी.पी.पी. द्वारा बुलवर्कर मिलते ही मैं डाकिये को रु. ३९ (तथा रु. ९ भेजने का खर्च) दे दूंगा। १४ दिन की अभ्यास अवधि के बाद मशीन को अपने पास रखने की हालत में मैं स्वीकार करता हूं कि बाकी रकम १३ अतिरिक्त मासिक किश्तों में प्रतिमाह रु. १९ के हिसाब से चुकाऊंगा। ☐ रु. ४८ चेक/बैंक ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल ऑर्डर द्वारा प्रेषित हैं। उपर्युक्त मासिक किश्त योजना स्वीकृत है। ☐ रु. ४८ मनी-ऑर्डर द्वारा (रसीद नं.......... दिनांक.........) प्रेषित हैं। उपर्युक्त मासिक योजना स्वीकृत है। तुरंत नकद रकम अदा कर **रु. ३२ की बचत कीजिये।** ☐ वी.पी.पी. द्वारा बुलवर्कर मिलते ही मैं डाकिये को रु. २६३ (तथा रु. ९ भेजने का खर्च) दूंगा। ☐ मैं रु. २६३ चेक/मनी ऑर्डर/भारतीय पोस्टल ऑर्डर द्वारा प्रेषित हैं। ☐ रु. २६३ मनी ऑर्डर द्वारा (रसीद नं.......... दिनांक.........) प्रेषित हैं— १४ दिन में वापसी के विशेषाधिकार सहित।

हस्ताक्षर.................................... (अथवा मा बाप के अगर १८ से कम आयु हो)

नाम..

पता..

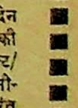

मुफ़्त २०वीं शताब्दी का कॅलेन्डर —सचित्र, रंगबिरंगा, आकर्षक कॅलेन्डर इस कूपन के ५ दिन में भेजने पर!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विक्रेता एजेंट : बम्बई तुलसीदास कनोरिया एण्ड कम्पनी, पहली मंज़िल, जाम्बुलवाडी (पूर्व), कालबादेवी रोड, बम्बई। मध्य प्रदेश, विदर्भ और मराठवाडा: रथी एण्ड कम्पनी, १७, पाप्युलर होलसेल क्लाथमार्केट, गांधी बाग़, नागपुर। दिल्ली और हरियाणा : बाम्बे ट्रेडिंग कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड, कटरा अशर्फ़ी, चाँदनी चौक, दिल्ली। राजस्थान : हरीश एण्ड कम्पनी, मेहता मार्केट, जोधपुर। पंजाब, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर: ओमेगा इंडस्ट्रियल कारपोरेशन, कटरा आहलुवालिया, अमृतसर। उत्तर प्रदेश : केजरीवाल ट्रेडिंग कारपोरेशन, विश्भर हाउस, २५/२६ ए, कराची खाना, कानपुर। पश्चिम बंगाल: अश्विनी कुमार एण्ड कम्पनी, ४, इंडियन ऐक्सचेंज प्लेस, कलकत्ता। बिहार : ओरिएण्टल ऐन्टरप्राइज़िज़ एण्ड एजन्सीज़, इंडिया मशीनरी बिल्डिंग (दूसरी मंज़िल), एग्ज़ीबिशन रोड, पटना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

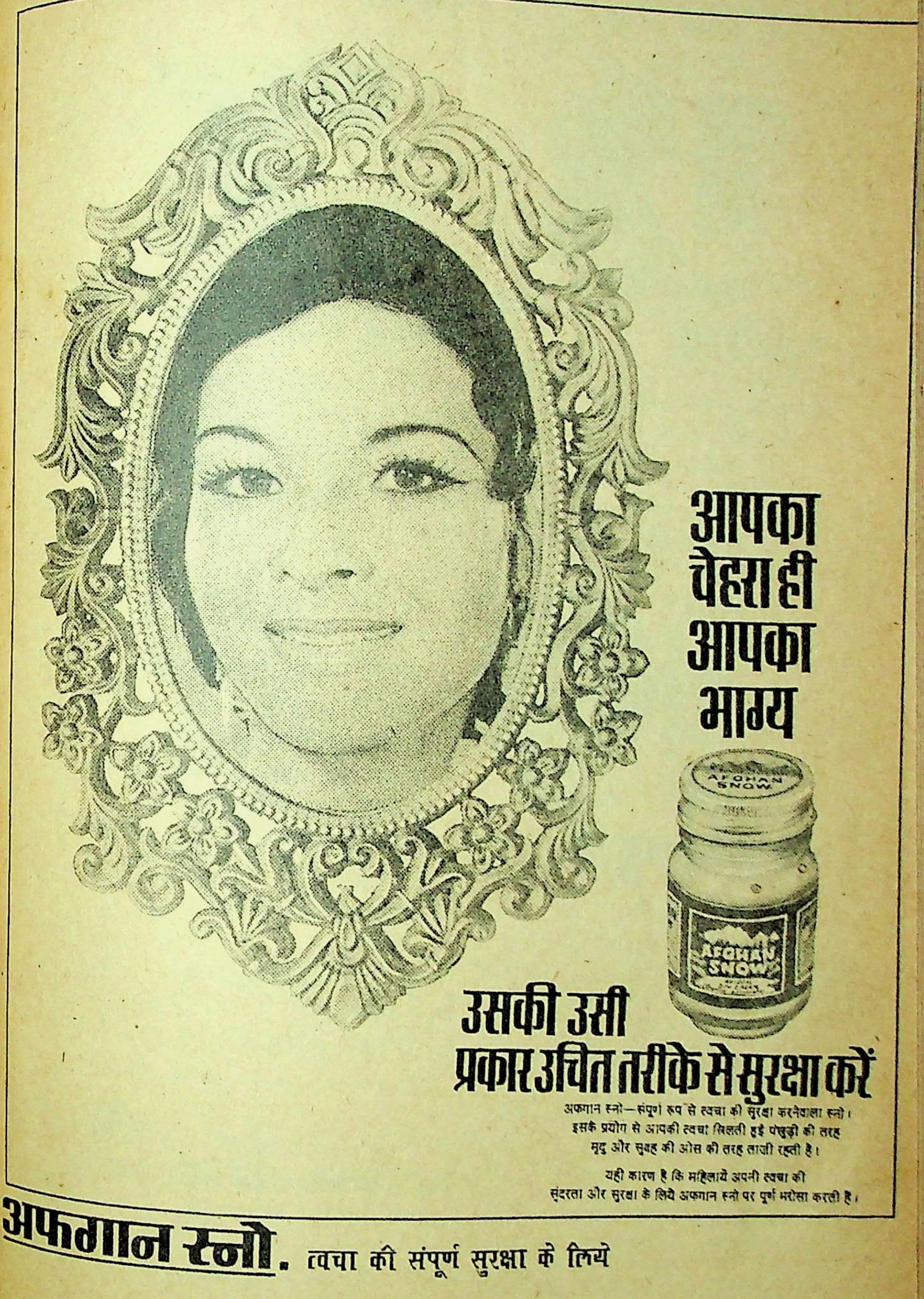

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एयर-इंडिया प्रस्तुत करती है सप्ताह में एकसठ उड़ानें—५ महाद्वीपों के लिए.

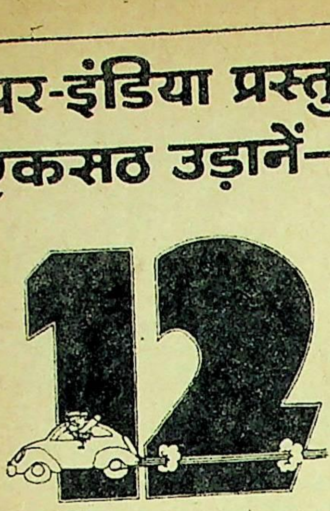

यूरोप

यूरोप के लिए सप्ताह में १२ उड़ानें
लंदन? आठ ७४७ विमानों को आपका इंतज़ार है. इनमें से दो केवल बेरूत हो कर जाते हैं, मंगलवार और शनिवार को. दूसरे छह में आपको रोम, पेरिस या फ्रैंकफर्ट हो कर जाने की सुविधा मिलती है. इसके अलावा दो ७०७ विमान जिनेवा होकर जाते हैं. मॉस्को? दो ७०७ विमान.

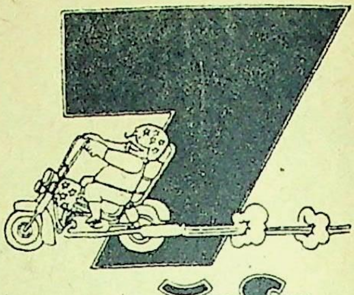

न्यू यॉर्क

न्यू यॉर्क के लिए सप्ताह में ७ उड़ानें
हर दिन ७४७ विमान की एक उड़ान. मध्य पूर्व और यूरोप होते हुए. हमारे विशेष एक्सकर्शन फ़ेयर के अन्तर्गत न्यू यॉर्क जा कर वापस लौटने का किराया आम तौर पर लगनेवाले एकतरफ़ा किराये से भी कम पड़ता है.

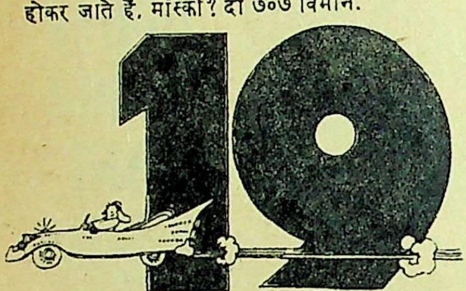

मध्य पूर्व

मध्य पूर्व के लिए सप्ताह में १९ उड़ानें
बेरूत? पाँच ७४७ विमान उड़ान भरने को तैयार. कुवैत? तीन ७४७ विमान और दो ७०७ विमानों में से आप मनपसंद चुनाव कर सकते हैं. दुबई के लिए चार ७०७ विमानों में से कोईसा भी चुनिए. बहरैन के लिए तीन उड़ानें; और आबू धाबी, मस्कत, कैरो और तेहरान में से प्रत्येक के लिए दो उड़ानें. इसके अलावा अदन, दोहा या दहरान में से प्रत्येक के लिए एक ७०७ विमान.

साथ ही हर सप्ताह:
६ उड़ानें
जापान के लिए हौंग कौंग हो कर—
४ टोकियो के लिए
२ ओसाका के लिए. १० उड़ानें
दक्षिण पूर्व एशिया के लिए—
६ बैंकॉक के लिए और
४ सिंगापुर के लिए.
२ उड़ानें
ऑस्ट्रेलिया के लिए
३ उड़ानें
पूर्व अफ्रीका के लिए
२ उड़ानें
मॉरिशस के लिए.

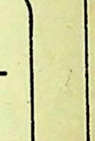

एयर-इंडिया
आपकी मनपसंद एयरलाईन

HT. AI. 8720

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानियों और कथा-जगत की संपूर्ण पत्रिका

सारिका

जुलाई, १९७५
वर्ष : १५ ; पूर्णांक : १७१

समांतर कहानी
विशेषांक–१०
नवलेखन अंक–२

कहानियां

आनंद कुरैशी : अल फातेहा : ३४
रजा जाफरी : घरौंदा : ३६
अभय : अवरोध : ४४
नवनीत मिश्र : जरा-सी बात : ४८
रामनारायण सिंह चौहान : एक और महाश्वेता : ५२
रवींद्रनाथ उपाध्याय : घर : ६०
शंकर : दुर्घटना : ६४
रामदेव शुक्ल : ग्रामदेवता : ७२
दिलीपकुमार बनर्जी : उपहार : ८४

लघुकथाएं

एरनांदेस : फैसला, मधु पुरोहित : जलने का रहस्य, शाहिद नकवी : कालपात्र : १२
कुमार अशोक : जो भी कहूंगा, हरिकृष्ण तैलंग : शिकारी और भोले कबूतर, विनयकुमार श्रीवास्तव : भविष्य कथा : १३
प्रेम सेठिया : कूटनीति, चतुर अर्जुन, हबीब कैफी : वीर : १५
मनीषराय यादव : पांच लघुकथाएं : १६
सूर्यनारायण रणसुभे : चार लघुकथाएं – १७
विकास गोतामें : स्वातंत्र्य, रामकृष्ण खुराना: राजनीतिज्ञ, असद जैदी: चींटे : १८
राजेंद्रकुमार पटेल : तटस्थता की नीति; जीवन महता : स्थायित्व की कूटनीति, बलजीत पहाड़ी : जिरह : १९
राजा दुबे : सवालिया चेहरे : २१
कृतनारायण प्यारा : पहचान, सनत दवे : समाजवादी बजट, सुरेंद्र प्रबुद्ध : सूखा और बलिष्ठ मछुआरा : २२
अमलतास : महाभारत बंद नहीं हुआ, असद जैदी : कछुआ, टखना : २३
शाहिद तकवी : उद्घाटन, मनोहर वर्मा : फर्क कार्य-पद्धति का, प्रमोदकुमार : नया रिकार्ड: २४
जयचंद्र झा 'प्रमोद' : अथ लक्ष्मी-नारायण संवादम्, जीवन सिंह ठाकुर : इलाज, किशोर काबरा : अंत्याक्षरी : कल और आज : २५
घनश्याम अग्रवाल : आजादी की दुम : २६
[redacted]
नवीन चतुर्वेदी : अंततोगत्वा, [redacted] २८
कंनेडीवाला : शब्दों के आंसू, कुणाल : अभिजात्य, जोड़े : २९
'मधुप' मगधशाही : विकास, दिनेश बरनवाल:
मृत्यु-दर्शन ; ३०
[redacted], अनिल-मधुर : प्रजातंत्र, ३१
हसन जमाल छीपा : सबूत, नाशेर जमाल : विवशता, अनूपकुमार : भूख : ३२
प्रभु जोशी : पत्रकारिता, नीरज बख्शी : भविष्य में, पन्नालाल : मानसरोवर : ३३
समीरकुमार : राजा भोज और बूढ़ा : ४७
कुमार सरदार हसन : अकाल : ५१
[redacted] ५६

विशिष्ट लेख

से. रा. यात्री : एक परिसंवाद : ५७
डॉ. विनय : समय की भयानकता से जूझता समांतर साहित्य : ६८

स्थायी स्तंभ

पाठकीय : ८, मेरा पन्ना : १०, गुस्ताखियां: प्रकाश पंडित : ४०, चंद सतरें और : अनीता औलक : ८६, कृतियां : ९०

आमुख : भगवानदास रूपानी.
लघुकथा-खंड के सज्जाकार: आबिद सुरती

●

संपादक : कमलेश्वर

● मुख्य उप-संपादक :
आनंदप्रकाश सिंह

● उप-संपादक :
अवधनारायण मुद्गल, सुदीप.

● कार्यालय सहयोगी :
श्रीनाथ पांडेय, देवचंद्र झा, भिकाजी शिर्के.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकीय

समांतर विशेषांक : ७

'सारिका' के समांतर कहानी विशेषांक : ७ पर हमें देश के विभिन्न भागों से पाठकों के लगभग २००० पत्र प्राप्त हुए हैं. अधिकांश पत्रों में 'सारिका' के इस प्रयास की प्रशंसा करते हुए केवल अनुकूल प्रतिक्रियाएं व्यक्त की गयी हैं, जिन्हें छापना हमारे लिए जरूरी नहीं है. अनेक पाठकों ने बौद्धिक और संवेदनात्मक स्तर पर कुछ प्रश्न उठाये हैं या प्रतिकूल प्रतिक्रियाएं व्यक्त की हैं. उनमें से कुछ पत्र हम यहां दे रहे हैं, जिनमें कही गयी बातें विचारणीय हैं.

● **श्री मदनराव 'भोमली' (बेतिया, बिहार) ने बौद्धिक स्तर पर प्रश्न उठाया है :**

'सारिका' के अप्रैल-अंक को देखने के पश्चात सर्वप्रथम इच्छा यह जानने की हुई कि दलित कहते किसे हैं?. . .क्या इस देश की एक बड़ी जन-संख्या घृणा एवं सामाजिक अन्याय की शिकार नहीं है? संत्रास एवं कुंठा की जिंदगी बिताने वाले केवल हरिजन ही नहीं, अन्य भी हैं. . . अत्याचार की चक्की में पिसने वाले सभी लोगों को साथ ले कर चलने वाला साहित्य ही दलित साहित्य होने का दावा कर सकता है. जाति के आधार पर साहित्य का वर्गीकरण मात्र एक संकीर्ण मनोवृत्ति का परिचायक है. . .घटनाओं को सवर्णों एवं हरिजनों के वर्ग में बांट कर प्रस्तुत करने से कोई समस्या हल होने की नहीं. . .आवश्यकता इस बात की है कि बढ़ावा आपसी विद्वेष को नहीं, परस्पर सद्भावना को मिले. यह अंक उन सवर्णों को निस्संदेह दुख पहुंचायेगा जो हरिजनों को समाज में एकाकार करने के भगीरथ प्रयत्न में लगे हैं. ☐

● **आचार्य प्रतापादित्य (गोरखपुर, उ. प्र.) का वर्णाश्रम व्यवस्था में विश्वास नहीं और इस कारण पिछले दस वर्षों से वह सवर्णों की घृणा के पात्र बने हुए हैं. सवर्णों द्वारा दलित वर्ग पर अत्याचार किये जाने के वह विरुद्ध हैं, किंतु साथ ही लिखते हैं :**

सवर्णों के दलित वर्ग पर अत्याचारों का जो रूप आपके पत्र में सामने आया है, उससे ऐसा लगा कि आपका पत्र तथा ऐसी विचारधारा समाज में इन समस्याओं को बढ़ावेगी, न कि घटावेगी. . .दलित वर्ग में प्रतिशोध का भाव बढ़ रहा है. वे असंयम से काम ले रहे हैं जिससे समाज में घृणा और द्वेष और मार-काट का वातावरण बढ़ रहा है. . . मैं समझता हूं कि आपमें इस पत्र को छापने का साहस नहीं होगा. ☐

● **श्री प्रमोदकुमार (इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद) ने समांतर कहानी विशेषांक : ७ में प्रकाशित कहानी 'गारबी' में प्रयुक्त एक शब्द को अश्लील बताते हुए रोष प्रकट किया है, फिर लिखा है :**

. . .आप नहीं जानते कि कहीं-कहीं तो हरिजनों ने सवर्णों को इतना सताया है कि सवर्ण बेचारे कुछ कर ही नहीं सकते. सरकार ने [redacted] इन हरिजनों को बहुत सिर चढ़ाया है. . .हरिजनों को जो सुविधाएं दी जाती हैं, उनके पीछे गरीबी को मूल कारण बताया जाता है. क्या सवर्ण सदा धनवान होता है और क्या हरिजन धनवान नहीं होता? हरिजनों को नौकरी में सुविधा क्यों? क्या यही समानता है?. . .मैं सवर्ण हूं, शायद इसलिए आप मेरा पत्र न छापें. ☐

● **श्री रविरंजन प्रसाद (हजारीबाग, बिहार) ने अपने पत्र में दो मुद्दे उठाये हैं :**

पहला यह कि दलित कौन हैं—क्या केवल हरिजन ही दलित हैं? दूसरा यह कि केवल हरिजनों के धर्म-परिवर्तन से ही यह समस्या हल होने वाली नहीं है. . . सिर्फ हरिजन ही दलित नहीं हैं. विश्व में नीग्रो, रेड इंडियन, यों कहिए, हर देश में अल्पसंख्यक दलित ही हैं. सबसे बड़ी चीज है अपने अधिकारों के लिए लड़ना. . .काश, आंबेडकर साहब कहते, मैं अपने अधिकारों को लड़ कर लूंगा. धर्म-परिवर्तन से कुछ नहीं होता. . .ईश्वर का कोई पुत्र ऊंचा नहीं, कोई नीचा नहीं. जो मनुष्यों में ऊंच-नीच मानता है, वह ईश्वर को नहीं मानता. ☐

● **श्री हरनाम सिंह (गिदड़बाहा, पंजाब) मजबी सिख (हरिजन) हैं और उनका भी यही मत है कि केवल धर्म-परिवर्तन से ही हरिजनों की समस्या हल नहीं होगी. वह लिखते हैं :**

. . .इस बात से मैं सहमत नहीं हूं कि बौद्ध बनने से इस समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है. . . इस प्रकार की कमोबेश समस्याएं अन्य जातियों को भी झेलनी पड़ती हैं. . .इस समस्या का वास्तविक संबंध शिक्षा और आर्थिक स्थिति से अधिक है. . .असल बात है हीन भावना का निकलना. वह केवल बौद्ध बन जाने से नहीं निकलती. इसके लिए शिक्षा के अलावा असली जरूरत है अन्य जाति के गरीब मजदूरों के साथ मिल कर आर्थिक संघर्ष करना. ☐

● **श्रीमती रजनी पोद्दार (सदर बाजार, नागपुर) सामाजिक कार्यकर्त्री हैं और अनेक वर्षों से वह हरिजन बस्तियों में काम करती आ रही हैं. 'सारिका' का अप्रैल-अंक देखने के बाद उन्होंने लिखा है:**

आपने एक दुखभरे चित्र को बड़े ही सुंदर ढंग से सामने रखा है, लेकिन इसका एक पहलू और है. शहरों में, चाहे स्कूल-कालेज हो या दफ्तर, बाजार हो या बस का सफर, हमारे इन भाइयों का मूल रूप बड़े ही गंदे ढंग से बेनकाब हो जाता है. कालेजों-स्कूलों में विद्यार्थियों में फैलने वाली अनुशासनहीनता के लिए इस वर्ग से आये छात्र बहुत हद तक जिम्मेदार हैं. कम प्रतिशत अंकों पर मिल जाने वाला प्रवेश एवं भरपूर छात्रवृत्ति इनमें से अधिकांश छात्रों को गुमराह कर रही है. . .ये अपने निरंकुश आचरण से शिष्ट समुदाय को त्रस्त कर देते हैं. . .

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कारहीनता, अशिक्षा और गरीबी से तो ये उबर ही न पायेंगे यदि इन्हें शराब मिलती रहेगी. . . छोटे-छोटे बच्चे चोरी, जुआ, जेबकटी आदि करने में दिल लगाते हैं. . .एक दफा श्री वियोगी हरिजी ने कहा था—यदि सचमुच ऊपर हरिजनों को उठाना है, जाति-भेद मिटाना है, तो सरकार की ओर से दी जाने वाली सारी सुविधाएं बंद कर दी जानी चाहिए. तब वे सचमुच अपने श्रम, अपनी लगन से ऊपर उठ सकेंगे. □

● **सुश्री अनीता सिंघी (८।७९, ईस्ट ऑफ कैलाश, नयी दिल्ली-२४) संवेदनात्मक स्तर पर लिखती हैं :**

जब से मैंने 'सारिका' पढ़ना शुरू किया है, जीवन की कठोर वास्तविकता को समझने लगी हूं. हर अंक की कहानियों में जीवन का एक नया ही रूप देखने को मिलता है. विशेष तौर पर 'सारिका' का अप्रैल-अंक पढ़ कर तो मानव जीवन के प्रति मन में संवेदना ही उत्पन्न होती है. समझ में नहीं आता कि अभी भी हमारे देश में हरिजनों को एक अलग ही जाति क्यों माना जाता है. □

● **श्री श्रीकांत पांडेय (लोकवार्ता शोध संस्थान, राबर्ट्सगंज, उ. प्र.) ने लिखा है :**

'सारिका' ने भारतीय आदिवासियों पर दो अंकों में सामग्री छाप कर जो शुरुआत की है, वह देश के तमाम लेखकों, पत्रकारों एवं पत्र-पत्रिकाओं के लिए आईना भी है और चश्मा भी. □

● **डा. शिवमंगल प्रसाद चौधरी (गौशाला, सतना, म. प्र.) ने सवाल उठाया है :**

धर्म के नाम पर हरिजनों को मंदिरों में जाने से रोका जाता है, कुओं पर पानी नहीं भरने दिया जाता, किंतु जब मंदिर बनवाते समय और कुआं खुदवाते समय उनसे काम लिया जाता है, तो निर्माण हो जाने पर वहां उनके जाने से वे अपवित्र कैसे हो जाते हैं? उनका उपजाया हुआ अन्न भी क्यों अपवित्र नहीं हो जाता? □

● **श्री ओमप्रकाश वाल्मीकि (चंद्रपुर, महाराष्ट्र) ने लिखा है :**

दलित साहित्य छाप कर आपने उन करोड़ों लोगों की समस्याओं को पूरे देश के समक्ष रखा है, जो सदियों से उपेक्षित, घृणित जीवन जी रहे हैं. . .निःसंदेह उन करोड़ों दलित लोगों की शुभ कामनाएं 'सारिका' को मिलेंगी, जो बेजबान हैं. . .प्रत्येक कहानी अपने भीतर एक दर्द लिये है, जो किसी एक व्यक्ति, एक पात्र का नहीं है, वस्तुतः करोड़ों लोगों का दुख-दर्द है. बहुत दिनों से ख्वाहिश थी कि वामन निंबालकर, केशव मेश्राम, दया पवार, नामदेव लक्ष्मण ढसाल का कुछ पढ़ने को मिले. यह सुयोग भी 'सारिका' ने ही दिया. □

एक पाठिका का पत्र

● **सुश्री गीता गरोवर (दिल्ली-३१) लिखती हैं :**

'सारिका' एक ऐसे वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है, जिसके घायल और लहू-लुहान कंधों से टपकने वाले रक्त की एक-एक बूंद सदियों से कुछ सफेदपोश आदमखोरों की कभी न मिटने वाली पाशविक प्यास की भरसक पूर्ति करती रही है. . .और वह आदमखोर अजगर की तरह मुंह बाये आज भी प्यासा-का-प्यासा खड़ा है. . .आज निम्न वर्ग की लड़ाई इसी अजगर के खिलाफ अपने अस्तित्व को बनाये रखने की लड़ाई है. . . 'सारिका' ने इस निम्न वर्ग को अपने अहम् का एहसास कराया है. . .उसे अपने बारे में सोचने के लिए एक नया दृष्टिकोण दिया है. उस दिन की प्रतीक्षा है, जब यह 'अनादि बंध' टूट कर टुकड़े-टुकड़े हो जायें और हर आम व्यक्ति को साफ हवा में सांस लेने का मौका मिले. □

● **श्री आशीश कुमार चौधरी (लहेरियासराय, बिहार) लिखते हैं :**

किसी भी पिछड़े समुदाय का विकास तब तक संभव नहीं होता जब तक कि वह खुद अपनी उन्नति न करे. . . मेरी समझ में धर्म-परिवर्तन से समस्याओं का कोई हल नहीं होता, बल्कि इससे नयी समस्याएं जन्म ले लेती हैं. . .लोग 'आदमी' की तरह पैदा होते हैं, बाद में उन्हें हिंदू या ऊंच-नीच का जामा पहना दिया जाता है. अच्छा हो, आज के युवा दलित नेता (साहित्यकार) उसी 'आदमी' को प्रतिष्ठित करने के प्रयास में संलग्न हो जायें. □

दूर-दराज इलाकों से

● **श्री महेंद्रकुमार शर्मा (फकीराग्राम, ग्वालपारा, असम) लिखते हैं :**

. . .हिंदी-ज्ञान प्राप्त कराने के क्षेत्र में अ. रा. भा. प्र. समिति के साथ-साथ यदि किसी भी अन्य जरिये का नाम लूंगा तो वह सिर्फ 'सारिका' ही होगी, जिसने यहां हिंदी के लेखकों को, उक्त समिति द्वारा परिचित कराने के बाद, हमारे बीच प्रिय बनाने का कार्य किया या कर रही है. . . 'सारिका' के चलित 'सामान्य जन' के विशेषांक इतने आवश्यक हैं कि वे हिंदी साहित्य के इतिहास के मोटे पन्ने बन जायेंगे. □

● **श्री हरि अधिकारी (चिकंमुगल, काठमांडौ, नेपाल) 'वेणी' नामक पत्रिका के संपादक हैं. उन्होंने लिखा है :**

'सारिका' के अप्रैल-अंक की सभी कहानियां भारत में विद्यमान सामाजिक विषमता का बहुत ही दर्दनाक चित्र प्रस्तुत करती हैं. इन कहानियों के संसार में ससंवेदन प्रवेश करना एक आतंक से गुजरने के समान है. लगता है, आदमी की दुरवस्था और उस पर होने वाले अत्याचार की कोई सीमा नहीं है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज का यथार्थ : समांतर संसार (१०)

कानूनी स्वतंत्रता और कारगर स्वतंत्रता का सवाल हमारे सामने था. कानूनन जो स्वतंत्रताएं मिलती हैं, वे आदमी की कारगर स्वतंत्रताएं तभी बन सकती हैं, जब उसे अपने समाज में न्याय प्राप्त हो! न्याय का यह प्रश्न इतना उलझा हुआ है कि इसे करोड़ों अदालतें नहीं सुलझा सकतीं. असल में यह प्रश्न अदालतों का है भी नहीं. आज के आदमी के संदर्भ में हम जिस 'न्याय' की बात कर रहे हैं, वह अन्याय के विरुद्ध न्याय का प्रश्न है. वह अन्याय जो समाज-प्रणाली के विकास के साथ-साथ पैदा होता है. न्याय के लिए उठाये गये कदमों में निहित अंतर्विरोधों के कारण जो कालांतर में अन्याय में तबदील हो जाता है, या कर दिया जाता है. जो समाज में पनपते मूल्यों और आदर्शों के कारण या उनकी खामियों की वजह से अन्याय में बदल जाता है. जब भी हम आम आदमी की कारगर स्वतंत्रता का सवाल अपने सामने रखेंगे, और उसकी घटती-बढ़ती औकात का पता लगाना चाहेंगे, तो सीधे-सीधे समकालीन मूल्यों और आदर्शों की बात उठेगी ही. असल में ये मूल्य और आदर्श भी सार्वजनिक और प्राइवेट सेक्टर की तरह विभाजित हो जाते हैं. (यहां व्यक्तिगत मूल्यों और आदर्शों का प्रश्न नहीं है.) एक मूल्य और आदर्श वे हैं जो समाज अपने लिए बनाता है और दूसरे मूल्यादर्श वे हैं, जो समाज अपनाता है. इनमें से भी एक वे हैं, जो वह अमल में लाता है और दूसरे वे हैं, जिन्हें वह सिर्फ नकाब के रूप में इस्तेमाल करता है. मूल्यादर्शों की कोई साफ-सुथरी तस्वीर जो समाज पेश नहीं कर पाता, वह अंततः अन्याय की यथास्थिति में जीने के लिए स्वयं बाध्य हो जाता है. हमारा समाज कानूनी स्वतंत्रता का न्याय-पक्ष तो पेश कर सकता है, पर आदमी की कारगर स्वतंत्रता के न्याय पक्ष की कोई साफ तस्वीर सामने नहीं रख पाता. इसका कारण यही है कि बनाये हुए, अपनाये हुए, अमल में लाये हुए और नकाब की तरह इस्तेमाल किये हुए मूल्यादर्शों के स्वार्थ हमेशा टकराते रहते हैं. यह टकराहट वर्ग-स्वार्थों के कारण भी होती है और व्यक्ति-स्वार्थों के कारण भी. और इस टकराहट में 'न्याय' रुका रह जाता है. क्योंकि न्याय की सही व्याख्या होते ही टकराने वाले स्वार्थों में से एक पक्ष का स्वार्थ निश्चय ही अन्याय घोषित हो जाता है. 'न्याय' को रोक सकने के लिए ही यह टकराहट उन स्वार्थी वर्गों द्वारा पैदा की जाती है जो बनाये हुए मूल्यादर्शों को सिर्फ नकाब के रूप में इस्तेमाल करते हैं. कितनी हास्यास्पद स्थिति तब सामने आती है जब 'न्याय' को रोक रखने के लिए ही न्याय का सवाल उठाया जाता है! जब दूसरे की स्वतंत्रता को अवरुद्ध करने वालों की स्वतंत्रता को कायम रख सकने के लिए 'स्वतंत्रता' का मसला सामने लाया जाता है! यानी हर उचित सवाल को उसके समय और संदर्भ से अलग करके 'आधारभूत मौलिक प्रश्न' के रूप में उठा कर बेकार कर दिया जाता है, क्योंकि हमारी भारतीय आत्मा इस उक्ति को ले कर कराहने लगती है कि न्याय के दौरान किसी के साथ अन्याय न हो जाये! वही भारतीय आत्मा इस बात के लिए कभी परेशान नहीं होती कि अन्याय के दौरान किसी को न्याय मिल जाये!

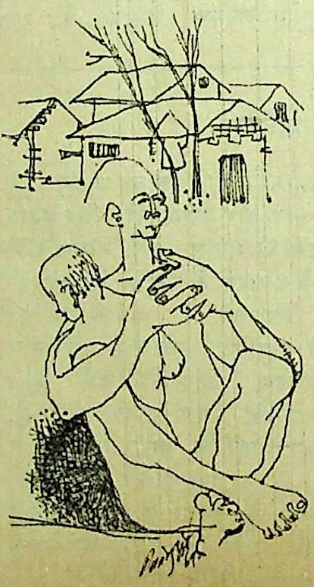

विनोद

न्याय की सही व्याख्या को रोक रखने या स्थगित किये रहने के लिए सब हथियार इस्तेमाल किये जाते हैं—धर्म, नीति, दर्शन, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, और पुरातन संस्कार. कुल मिला कर यदि बात को संक्षेप में रखा जाये तो यही कि संस्कृति का इस्तेमाल कैसे किया जाये और न्याय की व्याख्या न होने देने के लिए उसे कैसे सांस्कृतिक जामा पहना कर रखा जाये, यह कोशिश लगातार होती रहती है, उस वर्ग द्वारा जो अपने लिए राजनीति के प्रश्न का राजनीतिक उत्तर देता है, आर्थिक प्रश्न का आर्थिक उत्तर देता है और सामाजिक प्रश्न का सामाजिक उत्तर. वह प्रश्नों को (अपने लिए) गड्ड-मड्ड नहीं होने देता. उन्हें सांस्कृतिक जामा नहीं पहनाता. वह वर्ग तब यह नहीं सोचता कि पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था का मुनाफे का मूलाधार सांस्कृतिक रूप से कितना जघन्य है, कि व्यक्तिगत संपत्ति का सवाल सांस्कृतिक रूप से कितना ओछा और अन्याय-पूर्ण है, कि सामाजिक विषमता का प्रश्न सांस्कृतिक रूप से कितना क्रूर और अमानवीय है!

पर जब न्याय मांगने और चाहने वाला औसत आदमी अपनी टूटी अर्थ-व्यवस्था, भूख की संपत्ति और सामाजिक अन्याय का सवाल उठाता है तो 'संस्कृति' का बवाल खड़ा किया जाता है. कि अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

आर्थिक स्थिति को बदलने के लिए क्या असांस्कृतिक हो जाना जरूरी है? भूख मिटाने के लिए असांस्कृतिक तरीकों को अपनाना क्या लाजिमी है? सामाजिक अन्याय के प्रतिकार में अपनी तहजीब छोड़ देना क्या जरूरी है? यही वह महीन साजिश है, जो विषमता-पीड़ित और शोषित वर्ग के सीधे-सपाट, साफ और जरूरी प्रश्नों को सांस्कृतिक प्रश्नों में बदल देती है और आर्थिक प्रश्नों के आर्थिक उत्तर, राजनीतिक प्रश्नों के राजनीतिक उत्तर और सामाजिक प्रश्नों के सामाजिक उत्तर देने से रोकती है. संस्कृति के नाम पर पीड़ित आदमी की आत्मा को उकसा कर उसकी मानवीयता का शोषण भी अपने हितों के लिए बड़ी कुटिलता से कर लेती है.

ऐसी उलझी हुई स्थिति में, जहां हम अन्याय के विरुद्ध अन्यायी नहीं हो सकते, आम आदमी को बर्बर बना देने की सीमा तक नहीं ले जा सकते, उसके भीतर के शुभ और सौंदर्य को मार नहीं सकते, उसकी करुणा को सुखा देने की गलत भूमिका नहीं निभा सकते, उसकी संवेदनाओं को अमानवीय नहीं होने दे सकते—यानी उसकी सदियों की अर्जित मनुष्यता की महान संपदा को नष्ट नहीं होने दे सकते, तो फिर उसके लिए न्याय की प्राप्ति का कौन-सा जरिया अख्तियार कर सकते हैं? क्या साहित्य सिर्फ शोषित और पीड़ित की पक्षधरता का झंडा बलंद करके सुविधावादी नकाबपोश ही बना रहेगा? या नकाबपोशों के काम आता रहेगा? अगर आज का साहित्य इस सुविधावाद से निकलना चाहता है और न्याय के इस विराट संघर्ष में अपनी भूमिका सचमुच निभाना, चाहता है और इस संघर्ष को निर्णायक सीमांतों तक ले जाना चाहता है, तो उसका काम बहुत जटिल और कठिन हो जाता है. . .क्योंकि साहित्यिक, रचनात्मकता की रक्षा करना भी 'मनुष्यता की महान संपदा' को ही बचाना है और

● विनोद

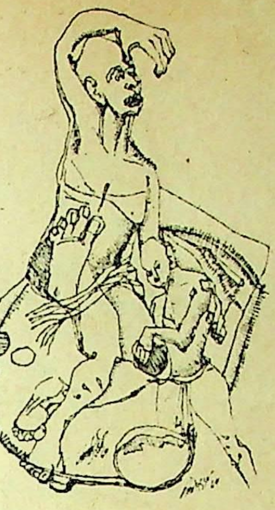

उसे बचाते हुए भी वह निर्णायक संघर्ष में शामिल हो सके, यह आसान काम नहीं है.

तो क्या यह मान लिया जाये कि साहित्य की भूमिका एक जगह जा कर (ऐसे संघर्ष के लिए) समाप्त हो जाती है? उसके आगे वह कारगर नहीं हो सकता! कि मनुष्य के लिए न्याय की प्राप्ति में वह 'जहां तक जो हो सकता है' करके, अपनी राह लग जाता है? यह दृष्टिकोण भी असल में साहित्य के अपने मूल्यादर्शों की देन है, जिन्हें साहित्य अपने लिए बनाता है या बना चुका है. 'इससे ज्यादा साहित्य कर ही क्या सकता है' वाली मानसिकता रचना को वहीं तक ले जा सकती है, जहां तक उसके अपने स्थापित मूल्यादर्श साथ देते हैं. पर साहित्य के इन्हीं मूल्यादर्शों में यह जरूरी बात भी छिपी है कि ये मनुष्य ने ही बनाये थे, मनुष्य ने ही साहित्य की एक भूमिका अपने लिए निर्धारित की थी और आज यही भूमिका आज के मनुष्य के लिए फिर निर्धारित की जा सकती है!

भूमिका-निर्धारण का यह सवाल कोई नया नहीं है. सच तो यह है कि समकालीन साहित्य ने अपनी रचनात्मक गरिमा से यह प्रतीति पहले ही दे दी है कि यह भूमिका अब बहुत हद तक बदल गयी है. कि आज का साहित्य अंधी करुणा और विवेकहीन संवेदना का वाहक नहीं है. पर संघर्षशील समकालीन साहित्य इस धारणा से अभी तक अपने को पूरी तरह नहीं तोड़ पाया है कि वह मात्र एक सांस्कृतिक माध्यम ही है! यह धारणा ही उसे अटकाती है.

आज की उसकी बदली हुई भूमिका उसे मात्र सांस्कृतिक माध्यम के रूप में अब नहीं रहने दे सकती, बल्कि उसे 'मनुष्य का माध्यम' बनने के लिए तत्पर कर चुकी है.

और मनुष्य का माध्यम बनते ही मनुष्यता के विकास की वैज्ञानिक समझ यह रास्ता साफ कर देने में देर नहीं लगाती कि आदमी को उसका न्याय और उसकी सांस्कृतिक स्वतंत्रता तब तक नहीं मिलती, जब तक कि वह निर्णायक राजनीतिक विजय हासिल नहीं कर लेता!

इसलिए न्याय का सवाल अब सिर्फ न्याय का ही सवाल नहीं है. कारगर स्वतंत्रता का प्रश्न और आदमी की औकात का सवाल भी मात्र आर्थिक या सांस्कृतिक प्रश्न नहीं है—ये सब सवाल आज के राजनीतिक सवाल हैं और रचनात्मक भी हैं, क्योंकि यदि आज की रचना मनुष्य का माध्यम नहीं है, तो वह रचनात्मक भी नहीं है और तब वह स्वतंत्रता या न्याय का झंडा तो बुलंद कर सकती है, पर भारतीय आत्मा को इस बात के लिए कभी परेशान या आकुल नहीं कर सकती कि अन्याय के इस चौतरफा दौर में किसी को न्याय मिल जाये! वह इसी बात से पीड़ित रहेगी कि न्याय के दौरान किसी के साथ अन्याय न हो जाये! और यह सोच ही न्याय को न्याय के नाम पर रोकती और काटती है.

कमलेश्वर

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

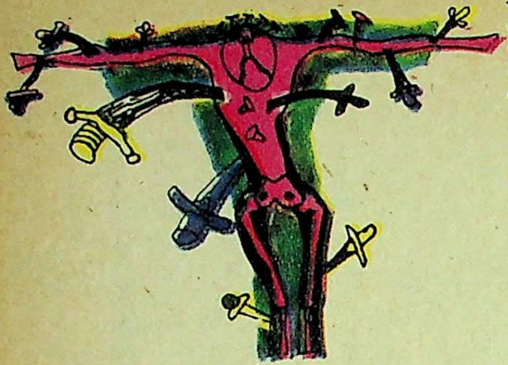

फैसला • एरनांदेस

एक राज्य में किसी व्यक्ति के मन में यह विचार आया कि लोकमत द्वारा यह पता लगाया जाये कि भयानक खतरे की अवस्था में किसको बचाना आवश्यक है – राज्य के राजा को, या वहां के सबसे छोटे बालक को.

एक मजदूर का विचार था कि छोटे बालक को बचाया जाना चाहिए. भविष्य में वह उसके काम को संभालेगा. वृद्ध सैनिक का विचार था कि बालक को ही बचाया जाये, जिससे वह वीर सेनानी बन कर देश की रक्षा कर सके. कलाकार ने कहा––मैं भी बालक की रक्षा करूंगा क्योंकि वह कला से जीवन को सुंदर बना सकता है.

धार्मिक नेता ने पहले तो इस प्रश्न को टालने की कोशिश की, परंतु अंत में कहा–ईश्वर ही इस बात का फैसला कर सकता है.

अंत में जब धनी व्यापारी के विचार पूछे गये तो उसने तुरंत कहा––मैं तो निःसंदेह राजा को ही बचाऊंगा. उसकी सत्ता, अनुभव और न्याय की हमें बहुत आवश्यकता है. और उसने अपने मन में सोचा, बालक से मुझे क्या मिलना है? □

(रूपांतर : सुजान सिंह पन्नू)

कालपात्र

• शाहिद नकवी

मेरा विचार है–[redacted]कालपात्र में समय-समय के महत्वपूर्ण कागजात के अतिरिक्त समय-समय की महत्वपूर्ण वस्तुएं भी सुरक्षित रखनी चाहिए ताकि भावी संतानें जान सकें कि हमारा देश औद्योगिक प्रगति की किन-किन मंजिलों से गुजरा है. एक सामाजिक विचारक ने अपने मित्र से कहा.

––हां! हां! आप बिल्कुल ठीक कहते हैं––कम-से-कम ऐसी वस्तुओं का संग्रह तो सुरक्षित करना ही चाहिए जिनके विषय में निश्चित नहीं है कि ये कब लुप्त हो जायेंगी. विचारक के मित्र ने कहा.

––अरे दोस्त, तब तो आज की दैनिक उपयोग की सारी चीजें ही कालपात्र में रखनी पड़ेंगी––इनके विषय में भी तो यह निश्चित नहीं है कि ये कब लुप्त हो जायेंगी. पहले विचारक ने कहा.

––और नहीं तो कम-से-कम गेहूं, चावल और दाल के चंद दाने, डालडा का एक डिब्बा, मिट्टी के तेल का एक पीपा. नहाने और कपड़ा धोने के साबुन की कुछ बट्टियां तथा सफेद कागज के कुछ टुकड़े तो कालपात्र में सुरक्षित करके रखवा ही देने चाहिए ताकि आगे आने वाली संतानें गर्व कर सकें कि हमारे देश में कभी गेहूं, चावल, दाल एवं साबुन जैसी अद्भुत चीजें भी आम जनता को देखने को मिल जाती थीं. यद्यपि इनके लिए उसे काफी समय एवं बेतहाशा धन खर्च करना पड़ता था. उसके मित्र ने कहा, जो स्वयं भी एक विचारक था. □

जलने का रहस्य • मधु पुरोहित

एक प्रसिद्ध नेता का शव जल ही नहीं रहा था. मिट्टी का तेल, घी, पेट्रोल, सबका प्रयोग व्यर्थ हो गया. आखिर में एक पुराने जानकार ने स्वयं आगे बढ़ कर इस कार्य को पूरा करने का बीड़ा उठाया.

वह नेता के शव के पास गया और उसके कान में कुछ फुस-फुसाया, फुस-फुसा कर जैसे ही वह अलग हुआ, नेता का शव भभक उठा और कुछ ही मिनटों में जल-भुन कर खाक हो गया.

यह चमत्कार देख कर उनकी शव-यात्रा में आये हुए लोगों ने आश्चर्य के मारे अपने कपड़े-लत्ते तक फाड़ डाले. जब उस पुराने जानकार से जोर दे कर शव के एकाएक जल-भुन कर खाक हो जाने का रहस्य पूछा गया तो उसने बहुत ही शांत भाव से जो भी जवाब दिया वह इस प्रकार है––

भई, मैंने तो उनके कान में सिर्फ इतना कहा कि गुरु! तुमने अपने घोर प्रयत्नों से जिसे मुख्य मंत्री बनवाया था, उसीने तुम्हारे खिलाफ जांच आयोग बिठा दिया है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो भी कहूंगा

• कुमार अशोक

अदालत में चल रहे एक केस के सिलसिले में सरकारी वकील को विपक्ष के एक गवाह पर यह शक था कि वह झूठ बोल रहा है.

अगली सुनवाई के समय जब वह गवाह साक्षी कटघरे में आ कर खड़ा हुआ और उसे सच बोलने के लिए शपथ दिलायी जाने लगी, तभी अदालत से इजाजत ले कर सरकारी वकील ने उसके आगे एक छोटी, पतली-सी पुस्तिका बढ़ाते हुए कहा––आप इस पर हाथ रख कर शपथ लीजिए कि जो भी कहूंगा सच कहूंगा और सच के सिवा कुछ नहीं कहूंगा.

और सचमुच इस बार उस गवाह ने सब कुछ सच-सच ही कहा तथा अपने पिछले सारे बयान बदल दिये.

इस परिवर्तन पर सबको बहुत आश्चर्य हुआ. . आखिर वह ऐसी कौन-सी वस्तु थी कि जिसकी शपथ ने उस गवाह को सच बोलने पर मजबूर कर दिया.

वह उस गवाह का राशनकार्ड था !

शिकारी और भोले कबूतर

• हरिकृष्ण तैलंग

शिकारी ने जाल फैलाया. चार कबूतर उसमें आ फंसे. ओट में छिपा शिकारी खुश होता हुआ उनके पास आया. उसने कबूतरों की गर्दन मरोड़ने के लिए हाथ फैलाया ही था कि कबूतरों ने गिड़गिड़ाकर प्रार्थना की––महाशय, हम गरीब और निरीह पक्षी हैं. हमारे छोटे-छोटे बच्चे हैं. यदि आप हमें मार डालेंगे तो वे नन्हें-नन्हें बेपर के बच्चे बेसहारा हो जावेंगे. उनका पालन-पोषण फिर कौन करेगा? मेहरबानी करके हमें छोड़ दें. आपको आपके बाल बच्चों की कसम है.

शिकारी का दिल यह सुन कर भर आया. पर दूसरे ही क्षण उसकी जीभ पर कबूतरों के स्वादिष्ट मांस का जायका तैर आया. तब भी वह बाल-बच्चों की कसम उतारना चाहता था. एक क्षण सोच कर उसने कबूतरों से कहा––मुझे तुम लोगों पर दया आ गयी है. अब मैं तुम लोगों को नहीं मारूंगा. तुम लोगों को उड़ जाने की अब पूरी आजादी है.

कबूतर बड़े खुश हुए. सच्चे दिल से उन्होंने शिकारी को दुआएं दीं. फिर उड़ जाने की कोशिश करने लगे. पर जाल में पैर फंसे होने के कारण बेचारे वहीं फड़फड़ा कर रह जाते. जी-तोड़ मेहनत और भूख-प्यास ने उनका शरीर तोड़ डाला. कुछ घंटों बाद वे स्वयं मर गये.

शाम को शिकारी फिर आया. कबूतर उठाये और खुश होता हुआ घर लौट गया.

शिकारी जाल अब भी फैलाता है. पर जाल में फंसे हुए भोले कबूतरों को उड़ जाने की आजादी देकर वह दयावान कहलाना सीख गया है. □

भविष्य कथा

• विनयकुमार श्रीवास्तव

साथियो ! आज मैं आप लोगों को अनोखी कथा सुनाने जा रहा हूं. अनोखी इसलिए कि कथाएं हमेशा भूतकाल की होती हैं लेकिन यह कथा भविष्य काल की है. हां तो सुनिए.

आज से सैकड़ों या हजारों साल बाद जब दुनिया भूकंप से नष्ट हो जायेगी और एक नयी सृष्टि की रचना होगी, एक नया संसार बनेगा. तब किसी गांव में कुछ लड़के खेल रहे होंगे. उनमें से एक लड़का किसी मिट्टी के टीले पर जा बैठेगा और उस पर बैठ कर वह जो कहेगा गलत कहेगा व झूठ बोलेगा. पहले तो लोग ध्यान न देंगे लेकिन जब यह घटना हर लड़के के साथ घटेगी तब उनका ध्यान उस टीले पर जायेगा और खुद वे लोग उस पर बैठ कर इस बात की पुष्टि कर लेंगे कि इस पर बैठने से आदमी सच बोल ही नहीं सकता जब बोलेगा तो झूठ ही बोलेगा. तब उत्सुकतावश लोग उस मिट्टी के टीले को खोदेंगे और उसके नीचे पायेंगे एक लोहे का बर्तन. काफी परिश्रम के बाद वे लोग जान पायेंगे कि यह किसी जमाने का काल-पात्र है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

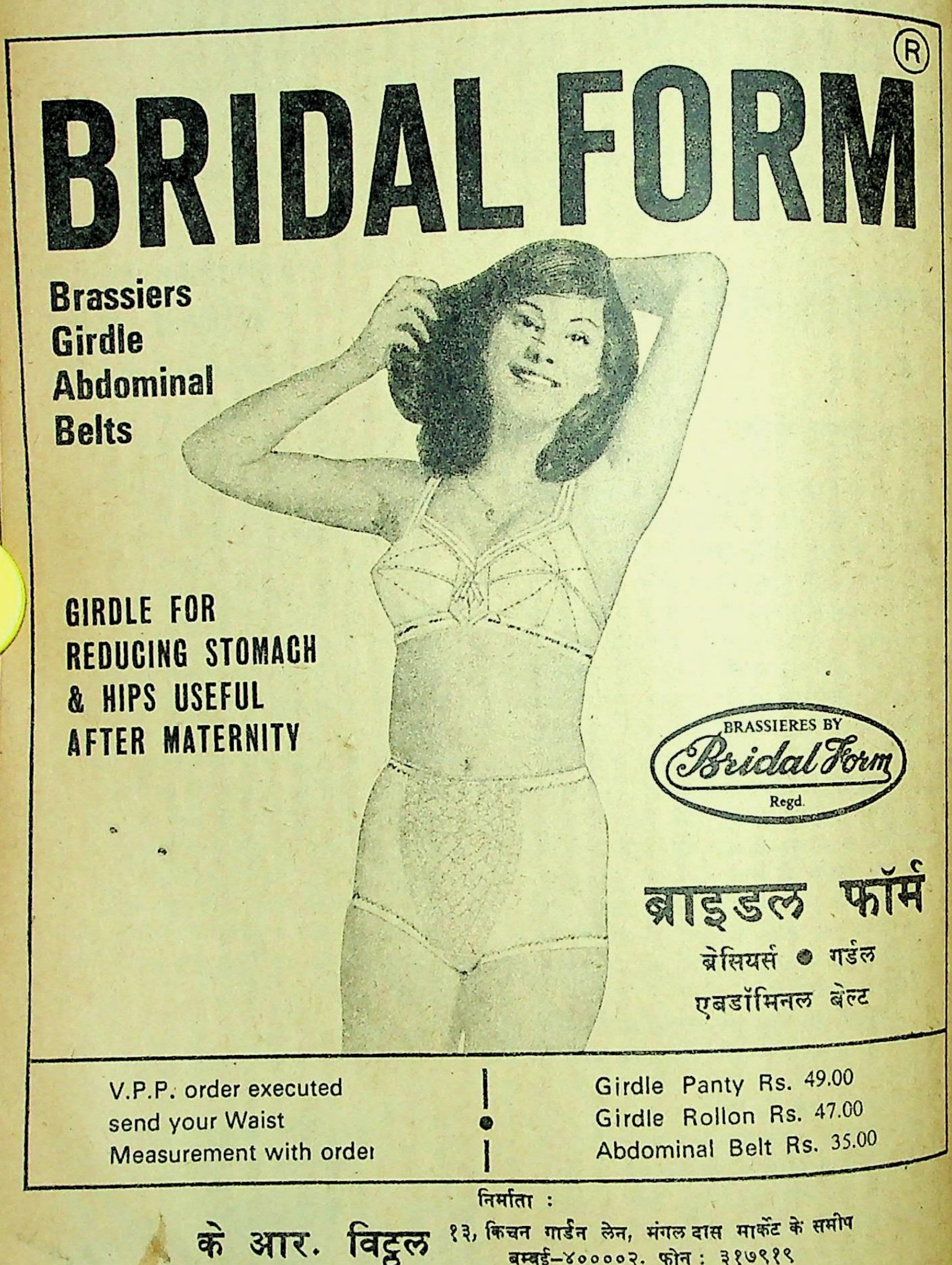

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

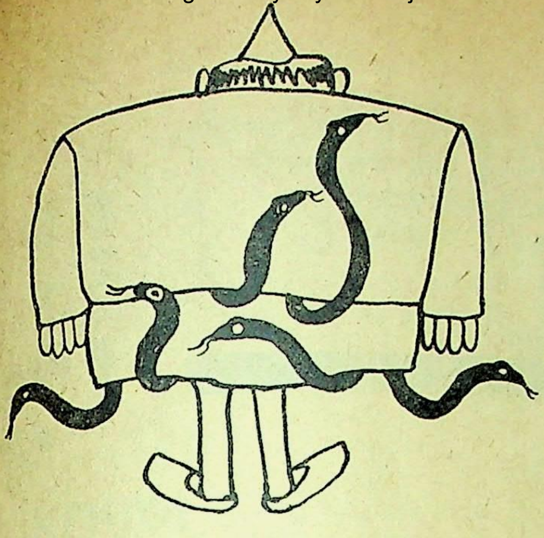

कूटनीति • प्रेम सेठिया

राम चौदह वर्ष कठिन वनवास सहने के बाद सपत्नीक, भाई लक्ष्मण के साथ अयोध्या लौटे. भरत ने भव्य पैमाने पर सत्ता हस्तांतरण की योजना बनायी तथा संपूर्ण तैय्यारी से राम की आगवानी की. राम बेहद प्रसन्न थे.

ऐन शपथविधि के पहले विरोधियों ने एक स्थानीय धोबी नेता के माध्यम से विद्रोह खड़ा कराया तथा सीता पर लांछन लगाते हुए राम से 'स्टेटमेंट' मांगा. राम ने एक विज्ञाप्ति में इसका खंडन किया तथा इसे विरोधियों का राजनीतिक स्टंट तथा [redacted] एजेंटों की करतूत बतायी. लेकिन जनता विरोध पर डटी रही. राम को शपथ तब लेने दी जायेगी जब वह सीता को त्याग दें.

राम चिंतित थे. सीता छोड़ें तो कुर्सी मिले. चिंतित राम की ओर देखते हुए लक्ष्मण ने यों कहा-- हे पितृतुल्य भ्राता! चिंतित न हों. कूटनीति इसका हल देती है. मुख्य बात कुर्सी बचाना है. यथा सीता का त्याग जरूरी है. अतः सीता को देशनिकाला दे स्विटजरलैंड भेज दीजिए. [redacted] कोष से धन निकाल स्विस बैंक में जमा कीजिए. सीताजी मजे में स्विटजरलैंड रहेंगी. महीने में २५ दिन का दौरा आप निकाल सकते हैं. यों आपकी नैतिक तथा राजनीतिक दोनों विजय हैं.

राम ने लक्ष्मण को गले लगा लिया तथा सीता को तुरंत वायुयान में बैठा देशनिकाला दिया.

राम ने बड़ी चिंतित तथा दुखी मुद्रा में सिंहासन ग्रहण किया. लक्ष्मण पास बैठे मुसकरा रहे थे. प्रजा ने राम की न्यायप्रियता पर धन्य-धन्य कहा.

नोट--इसी कथा का विवरण बाद में तुलसीदास ने अपने ढंग से रामायण में दिया. □

वीर • हबीब कैफी

मोहल्लेवालों को यकीन नहीं आ रहा था. बात ही कुछ ऐसी थी कि लोगों ने इसे महज अफवाह समझ लिया. लेकिन यही अफवाह जब हकीकत की सूरत में सब जगह फैल गयी तो सबने इसकी सच्चाई को अपनी आंखों से देख लेना उचित समझा. विश्वास कर लेने की गरज से लोग घरों से निकल आये थे.

और आखिर वह वीर नजर आ ही गया. सबने अपनी नंगी आंखों से एक ठोस सच की तरह उसे देखा. लोगों की आंखों में प्रशंसा थी. औरतों को आश्चर्य हो रहा था था. कुमारियां उसे अपने दिल में जगह देने के लिए तैयार हो गयी थीं. युवकों को उससे ईर्ष्या हो रही थी. वृद्ध उसे शाबाशी दे रहे थे. बच्चे बड़े हो कर उसके पदचिन्हों पर चलने का संकल्प कर रहे थे. और वह--सब से बेपरवाह-सा अपने घर की तरफ बढ़ रहा था.

वास्तव में वह पसीने में शराबोर बोझ से दबा जा रहा था. उस वीर के एक कंधे से शक्कर का थैला लटक रहा था. दूसरे कंधे से लटके थैले में अनाज, साबुन और वनस्पति तेल का छोटा टिन था. एक हाथ में वह घासलेट का भरा हुआ टिन थामे हुए था.दूसरे हाथ में कोयले का गट्ठर था. □

चतुर अर्जुन • प्रेम सेठिया

भीष्म पितामह युद्धस्थल में बाणशैय्या पर अंतिम सांसें गिन रहे थे. दिनभर की घोर गर्मी के कारण पितामह का गला खुश्क हो गया था. कराहते हुए उन्होंने पानी मांगा. कौरव, पांडव रत्नजड़ित स्वर्णकलश में पानी ले आये. पितामह ने निराशा तथा दुखः में इंकार करते हुए आंखें मूंद लीं; और अर्जुन को आज्ञा दी. अर्जुन ने तुरंत बाण जमीन में मारकर जलधारा हाजिर कर दी.

अगले दिन कारपोरेशन ने अर्जुन के ऊपर पाइप लाइन फोड़ने के जुर्म में जुर्माना कर दिया.

उपरोक्त ऐतिहासिक कथा का उपयोग कोका कोला कंपनी ने विज्ञापन के बतौर यूं किया--

'पितामह बाणशैय्या पर पड़े सूर्य अस्त होने का इंतजार कर रहे थे. दिनभर की गर्मी से त्रस्त, पितामह ने कराहते हुए, उपस्थित लोगों से पानी मांगा. सब लोग दौड़ कर स्वर्णकलशों में पानी ले आये पर पितामह ने इंकार कर दिया. तभी अर्जुन मुसकराते हुए वहां से चल दिये.

कुछ क्षणों बाद ही अर्जुन कोका कोला की बाटल लिये वहां आये. भीष्म पितामह ने अर्जुन को आशीर्वाद दे 'कोक' पिया और नश्वर शरीर त्याग दिया. सभी लोगों ने अर्जुन की ओर देख धन्य-धन्य कहा. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पांच लघुकथाएं ● मनीषराय यादव

सिफारिश

महोदय के बंगले पर मिलने वालों का लंबा 'क्यू' लगा हुआ था. उनका चपरासी सिफारिशी पत्रों के आधार पर लोगों को मिलने की अनुमति दे रहा था. एक व्यक्ति क्रम तोड़ कर अंदर आ गया. चपरासी ने कड़कदार आवाज में पूछा—सिफारिशी पत्र लाये हो?

उस व्यक्ति ने 'हां' भरी और एक बंद लिफाफा चपरासी को पकड़ा दिया.

—किसका पत्र है?

—रिजर्व बैंक के गवर्नर साब का.

चपरासी की मुद्रा बदल गयी—आप अंदर जाइए, हुजूर. □

परंपरा

एक नवयुवक की नियुक्ति खाद्य अधिकारी के पद पर हुई. पहले ही दिन उसके समक्ष एक ग्रामीण ने १० बोरी सीमेंट के लिए आवेदन पत्र प्रस्तुत किया. जिसमें उस कार्यालय की परंपरा अनुसार १० रुपये का नोट नत्थी था. नोट देख कर नये खाद्य अधिकारी आग बगूला हो गये. शांत होने पर जब वे उस ग्रामीण को निःशुल्क परमिट, नोट सहित देने लगे तो उसने परमिट लेने से इंकार कर दिया. खाद्य अधिकारी ने कारण पूछा तो ग्रामीण ने उत्तर दिया—साब, आप अकेले के लिए मैं परंपरा तोड़ कर, पूरे 'स्टाफ' से बुराई मोल नहीं ले सकता. □

त्यागपत्र

सचिव की कानूनी अड़ंगेबाजी से मंत्री महोदय परेशान हो चुके थे. उनकी 'गरीबी हटाओ' योजना सफल नहीं हो पा रही थी. उन्होंने सचिव का विभाग बदलने के लिए बहुत प्रयत्न किये परंतु असफल रहे. अंत में उन्होंने मुख्य-मंत्री महोदय को इस्तीफा भेजते हुए लिखा. 'वे अपने सचिव की हठधर्मी के कारण इस्तीफा दे रहे हैं. शासकीय योजनाओं के प्रति इनकी कोई दिलचस्पी नहीं है. न ये गरीबी हटाते हैं और न हटाने देते हैं.

मुख्य मंत्री ने तत्काल इस्तीफा नामंजूर कर सचिव का विभाग बदल दिया. □

प्रायश्चित

एक ग्रामीण पहली बार अदालत में गवाही देने आया. उसका क्रम आने से पहले पांच-दस गवाहों के बयान उसके सामने हुए, लोग आते सच बोलने की कसम लेते और वकील के सिखाये अनुसार बयान दे कर चले जाते. ग्रामीण की बारी आने पर जब उसे कसम दिलायी जाने लगी तो उसने कसम लेने से इंकार कर दिया. न्यायाधीश द्वारा कारण पूछे जाने पर उसने भोलेपन से कहा—हुजूर, लोगों ने 'कसम ले कर वकील साब' के कहे अनुसार झूठे बयान दिये हैं. मैं सच बोलना चाहता हूं. इसलिए कसम खाने की जरूरत नहीं समझता.

पर न्यायालय के नियमानुसार उसे कामस लेनी पड़ी. इसलिए उसने मजबूर हो कर वकील के कहे अनुसार बयान दिये और घर जा कर प्रायश्चित के लिए एक दिन का उपवास किया. □

प्रशिक्षण

देश प्रेम से ओत प्रोत फिल्म की सूटिंग चल रही थी. निर्देशक बार बार खलनायक को अभिनय का अंश समझा रहे थे. लाख प्रयत्नों के बावजूद जब खलनायक निर्देशानुसार अभिनय करने में असमर्थ रहे तो निर्देशक ने कहा—मेरी सलाह मानें तो आप किसी नेता से प्रशिक्षण प्राप्त करें. खलनायक ने नेक सलाह मान ली और आज वे चोटी के खलनायक हैं. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूढ़ों की जरूरत

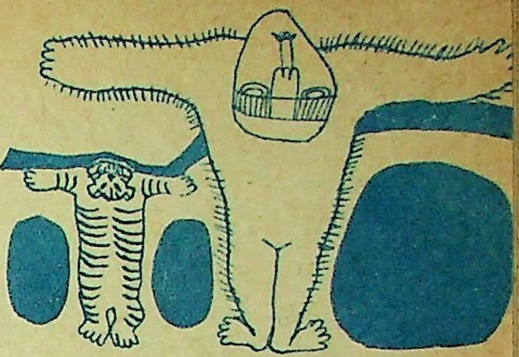

बूढ़े ने अपनी बूढ़ी पत्नी से कहा कि उसे कुछ रुपयों की जरूरत है. बुढ़िया ने अपने बड़े बेटे से कहा कि उसके बूढ़े पिता को कुछ रुपयों की जरूरत है. बड़े बेटे ने अपनी पत्नी से कहा कि उसकी मां कह रही है कि उसके पिता को रुपयों की आवश्यकता है. जवान बहू ने अपनी पड़ोसिन को धीरे से कहा कि बूढ़ों को रुपयों की क्या जरूरत ? □

चार लघुकथाएं • सूर्यनारायण रणसुभे

क्लॉक रूम

एक मनहूस रात में मैंने एक मनहूस सपना देखा. सपने में मैंने अपने आपको एक ऐसे नगर के बीच पाया जहां चारों ओर भीड़-ही-भीड़ थी. किंतु सभी खामोश थे. सभी यंत्रवत्! मैंने कई से बातचीत करने की चेष्टा की. किंतु सब व्यर्थ! परेशान हो कर मैं इधर-उधर भटकने लगा. अंत में मैं एक बड़े भवन के पास आया. उस विशाल भवन के अंदर के कमरे में मैं जैसे ही गया आश्चर्य से भर गया. वहां पर अनेक हृदय लटक रहे थे. कुछ हृदयों को कांच के बर्तनों में रखा गया था, और कुछ यूं ही लटक रहे थे. वहां पर काम करने वाले सभी लोग व्यस्त थे. हृदयों को देखते-देखते शाम हो गयी. थक कर मैं बाहर आया. देखा—एक लंबी कतार वहां पर लगी है. बहुत ही कोशिश करने के बाद पता चला कि उस नगर के सभी लोग रोज सुबह अपने-अपने हृदय को निकाल कर इस भवन के अंदर रख कर कामकाज को चले जाते हैं. और शाम को अपने घर वापस जाते समय फिर उसे ले जाते हैं. उस नगर का यही नियम था. वहां पर रहने वाले प्रत्येक को ऐसा ही करना पड़ता था. इस स्थिति से मैं घबरा गया. उस नगर से दूर बहुत दूर मैं भाग जाना चाह रहा था. किंतु व्यर्थ--सभी व्यर्थ! ! क्योंकि उस नगर के दरवाजे चारों ओर से बंद थे. और मैं उसमें बंदिस्त था हां बंदिस्त! □

जीने की स्थिति

बकरे ने गधे से कहा--तुम क्यों जीते हो! तुम्हारा पेट बहुत ही बड़ा है, मेरा बहुत छोटा? तुम जीना छोड़ दो. गधे ने एक घोड़े से कहा --यार, तुम क्यों जीते हो? तुम्हारा पेट मुझसे बड़ा है. जीना छोड़ दो, मैं सुखी रहूंगा. घोड़े को यह प्रश्न ठीक लगा किंतु उसने एक हाथी से कहा-- तुम क्यों जीते हो, जीना छोड़ दो. तुम्हारा पेट मुझसे बहुत बड़ा है. मैं सुखी हो जाऊंगा.

हाथी ने एक दिन एक शेर से कहा--तुम क्यों जीते हो ? तुम बहुत ही क्रूर हो. जीना छोड़ दो. मुझ जैसे सुखी हो जायेंगे. शेर ने क्षणभर सोचा, फिर हाथी पर आक्रमण कर उसके मांस को चाव से खाते हुए उसने मन-ही मन कहा--समझा तुमने, मैं क्यों जीता हूं ? □

चरित्र और अनीति

एक दिन चरित्र अनीति के पास उदास चेहरा ले कर गया. उसने कहा--अनीति बहन! अब तुम्हारी यह हुकूमत मैं देख नहीं सकता. मैं जहां भी जाना चाहता हूं, वहां तुम आ जाती हो. मुझे कहीं पर भी तुम रहने नहीं देती. अब बताओ मेरा क्या होगा ?

अनीति ने उलटे चरित्र से ही शिकायत करते हुए कहा--तुम भी बड़े अजीब हो चरित्र! रहती तो मैं सभी के पास हूं. किंतु नाम तो तुम्हारा ही होता है. निवास मेरा किंतु गुणगान तुम्हारा! बताओ अब मैं क्या करूं?

चरित्र ने सिसकियां भरते हुए कहा--मेरे न रहते हुए भी नाम तुम्हारा होता है. दुःख तो इस बात का है कि जहां मैं रहता हूं. वहां भी मेरा नाम नहीं रहता. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वातंत्र्य • विकास गौतम

एक दिन विष्णुजी ने अपने प्राइवेट सेक्रेटरी नारद को बुलाया और कहने लगे—नारदजी, आप पृथ्वी पर जाइए और देखिए कि कौन-कौन प्राणी दुःखी हैं!

—आपका जो हुकुम! कह कर नारद पृथ्वी पर उतर आये और रिपोर्ट ले कर विष्णुजी के यहां पहुंचे. लिखा था—पृथ्वी के सब प्राणी सुखी हैं किंतु अकेले सूअर को बहुत तकलीफ है.

उसके बाद विष्णुजी बोले—नारदजी, उस सूअर का जल्दी ही पृथ्वी से उद्धार करके यहां लाइए!

—जी सरकार! नारद फिर पृथ्वी पर आये और सूअर के पास जा कर कहने लगे—ऐ सूअर, देख तुझे यहां पर भारी दुःख है. ईश्वर ने तुझ पर कृपा करके स्वर्ग में स्थान दे दिया है. चल अब!

सूअर बोला—जैसा मैं पृथ्वी में करता हूं, उसी तरह वहां पर भी मैं कर सकता हूं?

—अभोज्य खाद्य खाना, इस तरह के कीचड़ पर रहना तो नहीं मिलेगा. स्वर्ग है ना इसलिए.

सूअर ने कहा—तब आप जाइए. मैं नहीं जाऊंगा! क्योंकि वहां स्वतंत्रता नहीं है.

सूअर की बात सुन कर नारदजी अकेले ही स्वर्ग की ओर लौट पड़े. □

राजनीतिज्ञ • रामकृष्ण खुराना

प्राचीन काल में एक जंगल में एक शेर राज्य किया करता था. उसके तीन मंत्री थे—बंदर, भालू और खरगोश. दरबार लगा हुआ था. तीनों मंत्री राजा के इर्द-गिर्द बैठे हुए थे. अचानक शेर ने जुमहाई लेने को मुंह खोला तो उसके पास ही बैठा भालू बोला पड़ा—जहांपनाह, आप सुबह उठकर टूथ-पेस्ट अवश्य किया करें. आपके मुंह से बदबू आती है.

शेर का पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया. वह गरज कर बोला—यू ब्लडी! उसने झपट्टा मारा और भालू को खा गया.

दूसरे दिन जब शेर दरबार में आया तो उसने बंदर से पूछा—मंत्रीजी, बताइए, हमारे मुंह से कैसी गंध आ रही है?

बंदर ने भालू का अंत अपनी नंगी आंखों से देखा था. वह हाथ जोड़ कर बोला—वल्लाह जहांपनाह! क्या बात है! आप हंसते हैं तो फूल गिरते हैं. जब आप बोलते हैं तो मोती झड़ते हैं. आपके मुंह से इलायची की खुशबू आती...

—शट अप! शेर ने बंदर को अपनी बात पूरी करने का अवसर भी न दिया. हम जंगल के राजा हैं, रोज कई जानवरों को मार कर खाते हैं, हमारे मुंह से इलायची की खुशबू कैसे आ सकती है? तुम झूठ बोलते हो! इतना कहकर शेर बंदर को भी हड़प कर गया.

तीसरे दिन शेर ने अपने तीसरे मंत्री खरगोश से भी यही प्रश्न किया.

खरगोश दोनों का हश्र देख चुका था. वह हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया. एक कदम पीछे हट कर, सिर झुका कर बोला—गुस्ताखी माफ हो सरकार! मुझे आजकल जुकाम लगा हुआ है जिसके कारण मैं आपके प्रश्न का उत्तर दे पाने में असमर्थ हूं.

खरगोश राजनीतिज्ञ था. □

चींटे • असद जैदी

अशोक के साथ एक बार हम लोग बैठे थे. देखते-देखते उसका ध्यान मेज पर चलते हुए चींटे पर केंद्रित हो गया. अशोक ने पूछा—बताओ यह चींटा किस तरफ जायेगा? हमने (मैं उन सबका प्रतिनिधि था) कहा—यह चींटा शक्कर के दाने की तरफ जायेगा. अशोक ने कहा—अच्छा देखे लेते हैं. चींटा, हमारे अनुमान से विपरीत, शक्करदाने के ऐन बगल से गुजरता हुआ आगे निकल गया. अशोक ने कहा—अब? हमने कहा—अब यह चींटा मेज का चक्कर लगायेगा. लेकिन चींटा मेज के किनारे पर जा कर नीचे उतर गया.

—वह कहां गया, अशोक ने कुछ देर बाद पूछा. हमने कहा—गायब हो गया. अशोक ने कहा—नहीं, वह अभी भी मेज के नीचे चल रहा है. मैंने चींटे को जूते से मसल दिया और अब चींटे के बारे में निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि वह मर गया है. अशोक ने धीमे से कहा—मगर इससे चींटों को समझने में क्या मदद मिलती है, मूर्खो? तुम कहां के बुद्धिमान हो? हमने कहा. अशोक बोला—ठीक है, मगर इससे क्या वास्तव में कोई फर्क पड़ता है? □

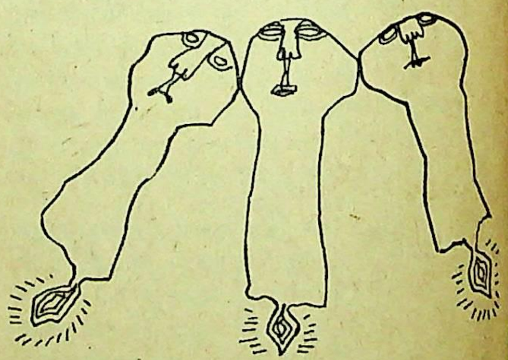

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

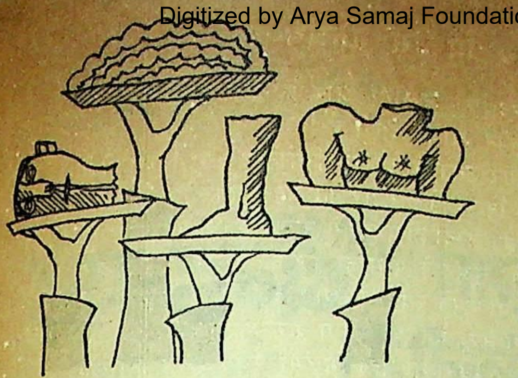

तटस्थता की नीति

● राजेंद्रकुमार पटेल

एक समय एक ऋषि हवन कर रहे थे. सहसा कोई आवाज हुई. उन्होंने देखा कि एक हिरन घबड़ाहट के मारे उनकी कुटिया में घुस गया.

उसी समय एक शिकारी आया और ऋषि से पूछा—महाराज, आपने यहां से एक हिरन को जाते देखा? वह किस तरफ गया सो बताइए.

ऋषि सोच में पड़ गये. क्या करूं?

उनको सोच में डूबे हुए देख कर शिकारी ने फिर वही पूछा.

ऋषि ने जवाब दिया—-भाई, तुम जानते हो कि देखने का काम आंख करती है लेकिन वह बोल नहीं सकती. जीभ बोलने का काम करती है, लेकिन वह देख नहीं सकती. जब तुमने मुझसे पूछा, पर जवाब देने का काम जीभ का है वो कुछ देख ही नहीं सकती. और जो देखती है वो आंख बोल नहीं सकती. अब तुम ही बताओ, किस वस्तु के द्वारा जवाब की आशा रखते हो? इतना सुनकर शिकारी चला गया.

इस तरह सत्य और अहिंसा के मेल का ही दूसरा नाम 'तटस्थता की नीति' हो गया. □

जिरह

● बलजीत पहाड़ी

कहां रहते हो?

—जां जगा मिल गया, हुजूर.

—क्या तुमने चोरी की?

—नईं हुजूर...

—झूठ मत बोलो. क्या दुकान के अंदर पायी गयी टायर की चप्पल तुम्हारी नहीं थी?

—थी हुजूर.

—तुमने चोरी क्यों की?

—...एक रुपये के लिए हुजूर...

—क्या जरूरत थी तुमको एक रुपये की?

—हुजूर, नाम के फारम में नाम लिखवाना था.

—कौन-सा नाम का फारम?

—हुजूर, चुनाव का नाम का फारम..

—लेकिन, वोटर लिस्ट में तो बिना रुपये-पैसे दिये नाम लिखते हैं. तुम झूठ बोल रहे हो!

—नईं माई-बाप, झूठ नईं बोल रआऊं. मैंने पेलेई का, मेरा कोई छह-बार नईं है... माई-बाप नाम कौन लिखता!

—क्या नाम है तुम्हारा?

—....हुजूर...कुनपुईया.

—तुमने पहले पुलिस को नाम क्यों नहीं बतलाया?

—हुजूर. . .थान्दार सा'ब ने इत्ता मारा कि आवाज-ई नईं निकली, माई-बाप.

—खैर, ठीक है. परंतु यह जरूरी है कि तुम्हारे वोट से पार्टी जीत ही जायेगी?

—नईं माई-बाप.

—तो फिर?

—..हुजूर...

—हां-हां, कहो. डरो मत.

[redacted] □

स्थायित्व की कूटनीति

● जीवन महता

अपने विरोधियों की कई कुटिल चालों और चुनौतियों का सामना करने के पश्चात् अग्निमित्र बड़ी कठिनाई से सत्तारूढ़ होने में सफल हुआ. लेकिन अपने विरोधियों की संगठित शक्ति के कारण उसे अपनी सत्ता के अस्थायी होने का भय बराबर बना रहता था.

एक दिन अवसर पा कर उसने अपने गुरु के सम्मुख अपनी इस समस्या को प्रस्तुत किया. कूटनीति के पंडित गुरु ने समस्या के यथार्थ के निवारण हेतु उसे उपदेश दिया:

'वत्स, जनकल्याण के लिए कुछ करो या न करो लेकिन कभी भी अपने विकल्प को पैदा मत होने दो. विकल्पहीन राजनीति की स्थिति में जनता कभी भी राजसत्ता को चुनौती दे कर अपने लिए अराजकता और असुरक्षा की स्थिति को आमंत्रित करने के लिए तुम्हारे विरोधियों का साथ देने की मूर्खता नहीं करेगी.'

अग्निमित्र ने गुरु के उपदेश में छिपे हुए सत्य को पहचाना और अपने सभी विरोधियों को आपस में लड़वा कर विभाजित और प्रभावहीन बना दिया. फलतः व्यापक [redacted]-असंतोष के होते हुए भी वह निश्चित और निरापद हो कर शासन करने लगा. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घाव अलग-अलग आकारों के और छोटे-बड़े हो सकते हैं।

उसी तरह घावों के अनुसार नयी बैन्ड-एड* ब्रान्ड पट्टियाँ मिलती हैं।

स्टैण्डर्ड स्ट्रिप
कटाव और खरोंच के लिए

जायन्ट स्ट्रिप
बहुत बड़े घावों के लिए

लार्ज स्ट्रिप
बड़े घावों के लिए

पैच
जहाँ पट्टियाँ न बाँधी जा सकें उन घावों के लिए

स्पॉट
फोड़े-फुन्सियों के लिए

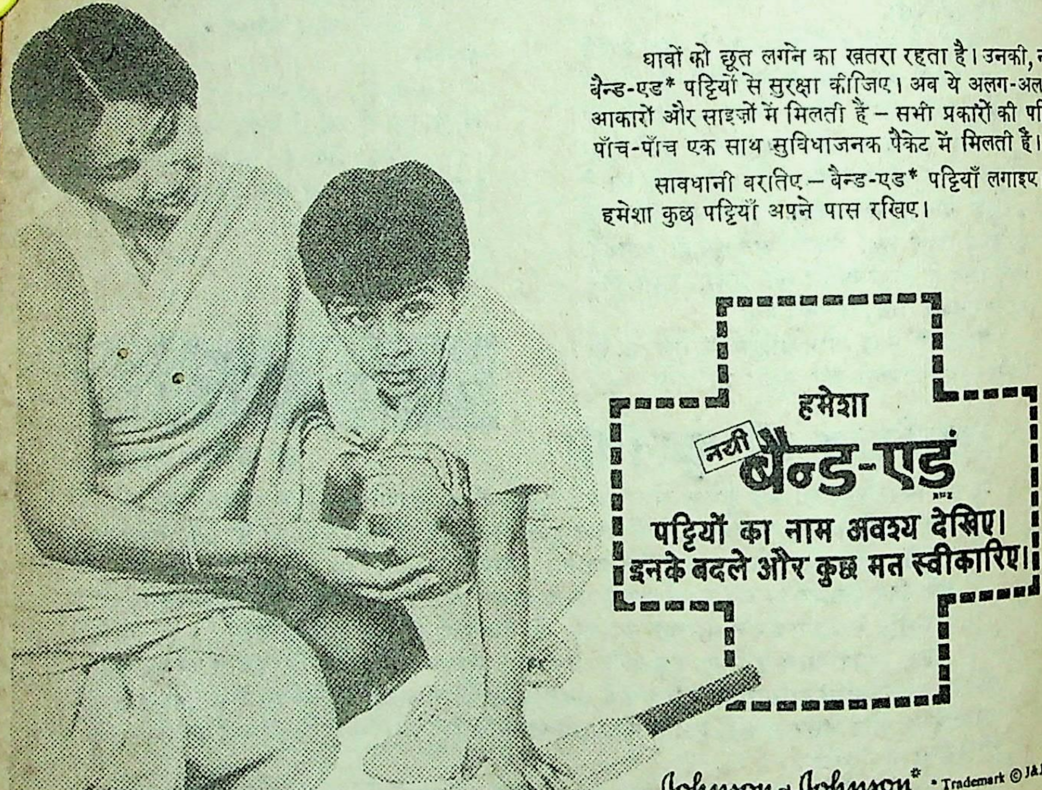

घावों को छूत लगने का खतरा रहता है। उनकी, नयी बैन्ड-एड* पट्टियों से सुरक्षा कीजिए। अब ये अलग-अलग आकारों और साइज़ों में मिलती हैं – सभी प्रकारों की पट्टियाँ पाँच-पाँच एक साथ सुविधाजनक पैकेट में मिलती हैं।

सावधानी बरतिए – बैन्ड-एड* पट्टियाँ लगाइए। हमेशा कुछ पट्टियाँ अपने पास रखिए।

हमेशा नयी बैन्ड-एड ब्रान्ड पट्टियों का नाम अवश्य देखिए। इनके बदले और कुछ मत स्वीकारिए।

OBM/4533 HIN

Johnson & Johnson* • Trademark © J&J 75

व्यावसायिक पूछ-ताछ के लिए वितरकों को लिखें: हसमुख एजेन्सी, गोखले रोड, (दक्षिण), बम्बई-४०० ०२५ । हसमुखलाल एण्ड कम्पनी, गोखले रोड, (दक्षिण), बम्बई-४०० ०२५ । ठक्कर परषोत्तम हीरजी एण्ड कम्पनी, जॉली सेंटर बेसमेंट, सांताक्रुज, बम्बई-४०० ०५४ । जवाहर मेडिकल एण्ड जेनरल स्टोर्स, ९९-१०१ के. एन. रोड, बम्बई-४०० ००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

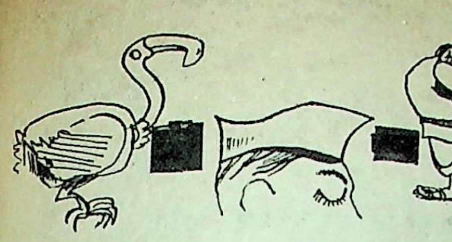

सवालिया चेहरे

● राजा दुबे

पैंट की जेब में उंगलियां घुसेड़ते समय जब उनकी पोरें नोटों की सतह से टकरायीं तो उसने अपने निश्चय को फिर से मन-ही-मन दोहराया. उसने तय किया कि कोट सिलने की खबर वह स्वीटी को भी पहले से नहीं देगा. वह किसी भी दिन, जब स्वीटी जॉली मूड में होगी, उसे कोट दिखला कर सरप्राइज देगा. स्वीटी शायद उसे भी मांगा हुआ समझेगी—उसे अपने ही विचार पर हंसी आ गयी. लेकिन इसी बीच एक प्रश्न उसके मस्तिष्क में उठा—वह कब तक स्वीटी के मूड का इंतजार करेगा? और फिर यह भी तो संभव है कि जब जी. बी. मास्टर फायनल टच दे कर कोट पैक करे, तब तक स्वीटी का मूड ही अच्छा न हो पाये. खैर, कुछ भी हो, इस बार वह कोट जरूर सिलवायेगा. सुनते हैं, कोट के साथ चप्पल पहनना भी ऑकवर्ड लगता है. फिर तो उसे चप्पल के स्थान पर जूते भी खरीदने होंगे. वह जूते सस्ते ही खरीदेगा. बग्गा की दुकान का इंस्पेक्शन करना है, उसी से कहा जायेगा—शायद कुछ कम कीमत ले. वर्मा भी तो इंस्पेक्टर है. कह रहा था 'बूंद-बूंद से घट भरता है' उसकी बात मैं समझ गया था लेकिन उस समय टाल गया. देर तक सोचा किया रिश्वत छोटी ही क्यों न हो, कुछ-न-कुछ तो खोना ही पड़ता है, और फिर अब यदि बग्गा से ५० का कहूंगा तो वह भी हंसेगा—फिर? फिर ऐसा करूंगा, उससे जूते ले लूंगा और कह दूंगा, आई. आर. नहीं दे रहा हूं. उसे शायद यह सुन कर खुशी होगी, हो सकता है बाद में वो मुझ पर हंसे. . .हूं! हंसे तो हंसा करे, मैं क्या कर सकता हूं? वर्मा, विजय, झांजरी सभी इन्सपेक्टर तो कंपाउंड करते हैं. क्या उन पर नहीं हंसते होंगे? वो कहां चिंता करते हैं? तो फिर मैं ही क्यों करूं?

★ ★

हाथ को 'काल बेल' तक ले जा कर भी स्विच को नहीं दबाया. जेब की गरमी पूरे शरीर में उतर आयी थी, आवाज को भरपूर सुरीली बना कर पुकारा "स्वीऽऽटीऽऽऽ". थोड़ी देर तो कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई, उसके बाद चिटिक के स्वर के साथ चिटकनी खुली. दरवाजा 'मड़ाऽऽक्' के बेसुरे स्वर के साथ किरण ने खोला. किरण को सामने देख कर ऐसा लगा जैसे नंगे पांवों पर किसी फौजी का जूतों वाला पैर रखा गया है. मैं तेजी से ड्राइंग रूम से होते हुए बेड रूम में घुसा. स्वीटी पलंग पर बैठी कुछ सी रही थी. . .थैंक्स गॉड! स्वीटी ठीक-ठाक है, और एक गहरी सांस ले कर वह स्वीटी के ठीक सामने फोल्डिंग चेयर पर बैठ गया. स्वीटी अब भी चुप थी, शायद वो उसकी उपस्थिति को कोई अहमियत नहीं देना चाहती थी. एक बार सिर्फ स्वीटी ने उसे देखा. और फिर कपड़े की तह 'एडजस्ट' कर हैंडल घुमाने लगी—'घर्रऽऽ घर्रऽऽऽ' का स्वर पूरे कमरे में हो गया. स्वीटी के चेहरे पर पसीने की बूंदें तिर आयीं थीं. एक क्षण को इसे लगा, वह अपने करचीफ से स्वीटी के चेहरे का पसीना पोंछ दे. लेकिन फिर स्वीटी का मूड बिगड़ने की संभावना से उसने अपना विचार बदल दिया. पास के कमरे में 'खड़क. . .' का स्वर सुनाई दिया—शायद किरण ने फ्रंट विंडो खोली है. और इस खड़क के स्वर से जैसे उसकी चेतना लौट आयी हो. उसने स्वीटी के पीछे वाली खिड़की खोल दी. हवा का एक हलका-सा झोंका भीतर घुस आया. स्वीटी के ठीक पीछे खड़े हो कर उसने धीरे से स्वीटी के कंधों पर अपने हाथ झुला दिये. . . एकदम देवानंद के अंदाज में. आवाज को आवश्यकता से अधिक मधुर बना कर उसने कहा—स्वीटी, गर्मी में खिड़की खोल लिया करो डार्लिंग. . . .अरे वाह! यह क्या सिल रहा है?. . . लेकिन स्वीटी कुछ नहीं बोली. ऐसे ही अर्थहीन संवादों के बाद जब स्वीटी का मौन टूटा, तब, तब लगा जैसे स्वीटी उफन पड़ी हो. स्वीटी लगातार बोले जा रही थी. —यू मीन जो कुछ मिसेस आचार्या कहे वह मैं सुनती रहूं. . .! यही चाहते हो न तुम . . .? वेंटीलेशन. वेंटीलेशन,. . .स्टुपिड कहती है, योर रूम इज वेंटीलेड विदाऊट फैन, मिसेस राव. और इतना कह कर स्वीटी फफक-फफक कर रो पड़ी. स्वीटी का सवालिया चेहर बेनकाब हो गया था.

★ ★

काउंटर बॉय की गर्दन मेरी ओर घूमी—क्या नाम लिखूं सर? प्रश्न उससे पूछा गया था लेकिन जवाब 'भाटिया इलेक्ट्रिकल्स' के सरदार गुरुबचन सिंह ने दिया—तैनूं बिल बणाण दी किस आरया सी? साब दा फैन ट-ताइ ले जा. भारी पैक लिये काउंटर बॉय जैसे ही नीचे उतरा, मैं बिना भाटिया सेठ से निगाहें मिलाये नीचे उतर आया. आइवरी केस ब्लाक में सवा आठ बजे थे. उसे ९ बजे जी. बी. मास्टर ने बुलाया था. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहचान • कृतनारायण प्यारा

एक हीरे का टुकड़ा बीच सड़क पर कई वर्षों से पड़ा था. संयोग, एक दिन एक जौहरी उसी सड़क से हो कर जा रहा था. हीरे का टुकड़ा दूर से ही उस जौहरी को आते देख अति प्रसन्न हुआ और मन ही मन वह सोचने लगा-- कई वर्षों से लात-जूतों की ठोकर खाते-खाते आज उन ठोकरों से बचूंगा और राजमहल में आराम करूंगा. तब तक वह जौहरी उसके नजदीक आ गया था. वह भी उसे देख नहीं पाया. जौहरी के पैरों की ठोकर ज्यों ही उसे लगी, त्यों ही हीरे का वह टुकड़ा चूर-चूर हो कर उसके सामने बिखर गया और रुआंसे स्वर में बोला-- मैं बहुतों की ठोकरें खाने के बावजूद भी बचा था कि कोई मुझे पहचानने वाला नहीं है मगर तुम भी पहचानने में असफल रहे इसलिए आज तुम्हारे सामने मैं चूरचूर हो कर बिखर गया हूं. [redacted] □

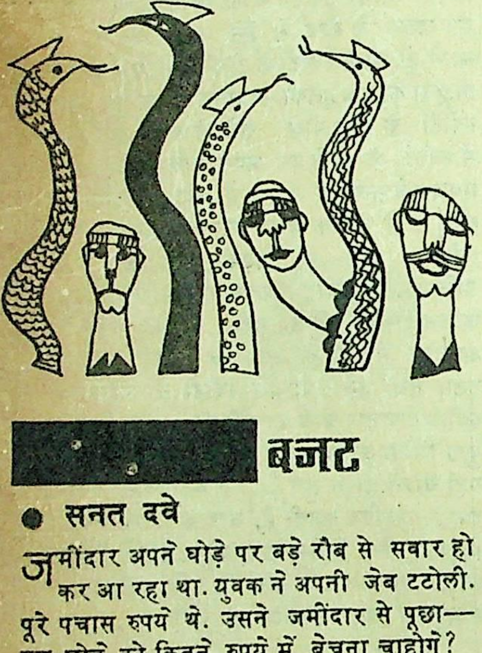

[redacted] बजट

• सनत दवे

जमींदार अपने घोड़े पर बड़े रौब से सवार हो कर आ रहा था. युवक ने अपनी जेब टटोली. पूरे पचास रुपये थे. उसने जमींदार से पूछा— इस घोड़े को कितने रुपये में बेचना चाहोगे?

—पूरे सौ रुपये में.

—मेरे पास तो सिर्फ पचास ही हैं.

—बाकी के पचास बाद में दे देना.

सौदा हो गया. लेकिन सहसा जमींदार ने कहा—तुम ऐसा नहीं कर सकते कि पचास रुपये जो तुम बाद में देना चाहते हो, उसके बदले में तुम इसी घोड़े को मुझे दे दो.

[redacted]

सूखा और बलिष्ठ मछुआरा

• सुरेंद्र प्रबुद्ध

भैंसे की भांति रंग और शरीर की मांस-पेशियों के मछली जैसे आकार के लिए वह गांव में चर्चित रहता था. वैसे पेशे से मछुआरा था. इस वर्ष वर्षा बिलकुल नहीं हुई. खेत और तालाब में मछली मारने का काम ठप्प हो गया. निश्चित ही मछुआरा कई दिनों से भूखा था

एक दिन जोर से पानी गिरा. खेतों में जलधारा बह गयी. वह प्रसन्न था, यद्यपि मछलियां पाने की आशा नहीं थी. सूखे में मछलियां तक सूख गयी थीं. वह ऐसे ही मेंडों पर घूम रहा था. पानी की बहती धारा में उसे दो मागुर-पिलें तैरती दिखीं. उसने हथेलियों का थुपा बना कर उन्हें पकड़ लिया.

उसकी मुट्ठियों की पकड़ इतनी गुस्सैल होती थी कि सेर-सेर की मछलियां एक बार में मर जाती थीं. वे दोनों पिलें अलग-अलग मुट्ठियों में कैद थीं, कभी-कभी गलफड़े फुला-कर किर्र किर्र की आवाज करती थीं. वह मुट्ठियां खोल कर गहरी ममता की दृष्टि से ताकता था. पिलों का चमकीला, कसैला रंग और पूछों की कोमलता उसे असीम आनंद दे रही थी. वह पुलकित घर लौट रहा था.

मछुआरा निपट अनपढ़ आदमी था. बाहर से जितना कुरूप और भद्दा दिखता था, भीतर से वैसा नहीं था. गांव में सुबह उसका मुंह देखना अशुभ संकेत था. वह निस्संतान था. उसकी घरवाली बीमार थी, जिसे वह बेहद प्यार करता था.

उसके सुगठित शरीर में सुखद कंपन हो रहा था. वह कुछ दूसरा अनुभव कर रहा था. मुट्ठी को एक-एक करके चुंबन की मुद्रा में सूंघता था. उसकी इच्छा थी कि पिलें जिंदी रहें. घर पहुंचते ही हर्ष से चिल्लाया—सुना ...? मैंने आज मागुर-पिलें पकड़ी हैं. इस वर्ष मैं इन्हें कुएं में पालूंगा. वह घरवाली का प्रत्युत्तर सुने बिना बाड़ी की ओर बढ़ गया.

अंधी बाउली की तली में थोड़ा-सा पानी थिरक रहा था. नीचे घुप्प अंधेरा. उसने मुट्ठियां खोल कर जिंदा पिलें नीचे छोड़ दी. भाव विह्वल हो कर जोर से ताली पीटी और झूमता हुआ घर की ओर बढ़ गया.

उस बलिष्ठ मछुआरे को पता नहीं था कि नीचे गिरते ही पिलें दम तोड़ चुकी थीं. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाभारत [redacted] नहीं हुआ

● अमलतास

महाभारत का युद्ध शुरू हुए कुछ दिन हो चुके थे. दोनों तरफ की सेनाओं के कलेजे कांपने लगे थे. दोनों तरफ के कुछ समझदार नेताओं ने कृष्ण से कहा--महाराज, यह तो अनर्थ हो रहा है. कुछ उपाय कीजिए. नेताओं की बात सुन कर कृष्ण [redacted] दुर्योधन के पास पहुंचे. परस्पर अभिवादन के बाद कृष्ण को आसन कर दुर्योधन से पूछा--महाराज, इधर आने का कोई खास प्रयोजन?

—मैं कभी, कहीं निष्प्रयोजन नहीं जाता.

--तो फिर बताइए?

--सुनिए, इतने बड़े साम्राज्य से अगर एक प्रांत आप [redacted] युधिष्ठिर को दे दें तो यह महाभारत बंद हो सकता है.

—नहीं, नहीं कृष्ण! ऐसा मत कहो. एक प्रांत दे देने से अगर यह महाभारत बंद हो जाता तो मैं ऐसा सोच भी लेता, मगर एक प्रांत देने के बाद दूसरे प्रांत की बात उठ खड़ी होगी. वैसे ही साम्राज्य के कई प्रांत मेरी पकड़ के बाहर हैं.

--तो फिर महाभारत के बंद होने का कोई रास्ता नहीं ?

--मैं पांडव [redacted] युधिष्ठिर को [redacted] मंत्रिमंडल में ले सकता हूं या किसी भी प्रांत का [redacted]पाल बना सकता हूं मगर यह प्रांत उन्हें नहीं दे सकता.

—ठीक है. मैं तुम्हारा प्रस्ताव युधिष्ठिर तक पहुंचा देता हूं.

दुर्योधन का यह प्रस्ताव ले कर कृष्ण जा पहुंचे युधिष्ठिर के पास. कृष्ण को देखते ही सब लोग खड़े हो गये.--क्या प्रस्ताव लायें हैं. महाराज?

--प्रस्ताव तो कोई खास नहीं, फिर भी फायदे का है.

—तो फिर जल्दी बताइए?

—सुनिए [redacted] दुर्योधन [redacted] में युधिष्ठिर को लेने को तैयार हैं. आप लोगों की राय क्या है?

—नहीं, युधिष्ठिर [redacted] नहीं जा सकते [redacted] युधिष्ठिर [redacted] के बाद भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव कहां जायेंगे. लोग कहेंगे कि कुर्सी पाने के लिए महाभारत रचा गया था. इसलिए हम [redacted] लड़ेंगे.

[redacted] दुर्योधन ने पांडवों को उनका प्रांत नहीं दिया और युधिष्ठिर ने [redacted] जाना स्वीकार नहीं किया [redacted] □

कछन्ना ● असद जैदी

कछन्ना अंडरवियर को कहते हैं. जांघिया दूसरी चीज होती है, हालांकि कुछ लोग कछन्ने को भी जांघिया कहते हैं.

कई बार लोग जो कछन्ना पहनते हैं, वह इतना गंदा हो जाता है कि उन्हें स्वयं घृणा होने लगती है. लोगों के कछन्ने दिखाई नहीं देते. इसी-लिए उनके साथ आमतौर पर यही सलूक किया जाता है. कभी-कभी फुटपाथ पर कछन्ने ढाई-ढाई रुपयों में बिकते देखे जाते हैं, जिससे मुझे काफी शर्म आने लगती है.

कछन्नों के बाजार में बिकने के दृश्य को देख कर जिस दिन शाम को मैं घर लौटता हूं, उस दिन कपड़े बदलते वक्त अपनी निगाहें अपने शरीर पर, खास कर कमर पर नहीं पड़ने देता. या अगर रात का वक्त हो चुका होता है तो बत्ती बुझा कर कपड़े बदलता हूं.

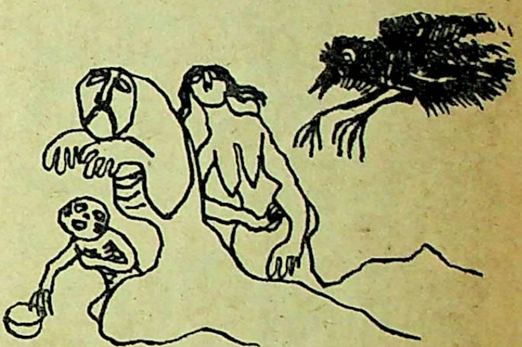

टखना ● असद जैदी

कुर्सी ठीक दरवाजे के बीचोंबीच रखी हुई थी और दरवाजे पर परदे पड़े हुए थे. जब कमरों में जाना तय हो जाता है तो किसी को उनके दरवाजों पर पड़े हुए परदों की चिंता नहीं रहती.

लिहाजा जब चपरासी ने आ कर चप-रासी की तरह कहा कि साहब बुला रहे हैं तो मैं सीधा दरवाजे पर था और परदों की चिंता किये बिना कमरे में घुस जाना चाहता था. परदे के पीछे और दरवाजे के बीच कुर्सी होने का पता नहीं चला और कुर्सी से बहुत जोर से मैं टकराया. आवाज होते ही कई लोग भाग कर आये जिनमें वह चपरासी आगे था. उसने फौरन कुर्सी उठा कर दीवार के सहारे टिका दी. टखने की तरफ देखने की हिम्मत मुझ में नहीं हो रही थी क्योंकि टखना टूट चुका था और कालीन पर खून फैलना शुरू हो गया था. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्घाटन ● शाहिद नकवी

विपक्षी दल अफवाह फैलाते हैं कि उद्घाटन की प्रथा शासकीय तंत्र ने अपने मंत्रियों के फायदे के लिए ही चलायी है—इससे मंत्रियों को लोकप्रियता के साथ-साथ [redacted] प्रचार भी हो जाता है—राज मार्ग [redacted] का उद्घाटन करने के लिए पधारे हुए मंत्री महोदय ने अपने भाषण में कहा—यह बात सरासर गलत और बेबुनियादी है कि उद्घाटन ऐलेक्शन के समय ही कराये जाते हैं—अगर आप भारत का प्राचीन इतिहास पढ़ें तो मालूम होगा कि यह प्रथा कदापि नयी नहीं है. भगवान राम ने पुल का उद्घाटन करवाने के लिए रावण को निमंत्रित किया था— इससे सिद्ध होता है कि भगवान राम के जमाने में भी उद्घाटन प्रथा थी.

—जी हां! आप ठीक कहते हैं—इससे यह भी सिद्ध होता है कि उस समय भी उद्घाटन करने के लिए [redacted] लोग [redacted] बुलाये जाते थे. मजमे में से [redacted] पार्टी के एक सज्जन ने जोर से चिल्ला कर कहा.

□

अंत्याक्षरी—कल और आज ● किशोर काबरा

सन् १९५९. एक स्कूल, स्कूल की एक कक्षा. हिंदी के अध्यापक ने छात्रों की अंत्याक्षरी आयोजित की. लड़के-लड़कियां बड़े उत्साह से कविताएं सुना रहे थे. सूर, तुलसी, कबीर, मैथिलीशरण गुप्त आदि कवियों की रचनाएं मानो बच्चों को कंठस्थ थीं.

अचानक एक दल 'ब' अक्षर पर अटक गया. शिक्षक ने खतरे की घंटी बजायी. एक लड़का सकपकाते हुए बोला—

'बरसात में, हमसे मिले तुम,
सजन, तुम से मिले हम, बरसात में.

सारी कक्षा ठहाका मार कर हंस पड़ी . शिक्षक बड़े नाराज हुए बोले—अंत्याक्षरी में फिल्मी गीत नहीं चलता. कोई दूसरी कविता सुनाओ.

* *

सन १९७४. वही स्कूल, स्कूल की वही कक्षा. वे ही अध्यापक हैं, केवल लड़के बदल गये हैं. बड़े जोर-शोर से अंत्याक्षरी चल रही है. प्रेम नगर, बॉबी, संगम, सीता और गीता आदि फ़िल्मों के गाने मानो बच्चों को कंठस्थ थे.

अचानक एक दल 'ब' अक्षर पर अटक गया. शिक्षक ने १५ साल पुरानी घंटी बजायी. एक लड़का सकपकाते हुए बोला—

'बरसा रहा है रवि अनल भूतल -तवा-सा जल रहा है चल रहा सन् सन पवन तन से पसीना ढल रहा.'

सारी कक्षा ठहाका मार कर हंस पड़ी. शिक्षक बड़े नाराज हुए. बोले—अंत्याक्षरी में कविता नहीं चलती. कोई फिल्मी गीत सुनाओ.

□

नया रिकार्ड ● प्रमोद कुमार

एक बच्चा पैदा हुआ. उसने चारों तरफ ईमानदारी देखी. वह बूढ़ा हो कर मर गया.

दूसरा बच्चा पैदा हुआ. उसने लोगों को झूठ बोलते हुए देखा. वह भी बूढ़ा हुआ और मर गया.

तीसरा बच्चा पैदा हुआ. उसने दुनिया में रिश्वतखोरी देखी. बूढ़ा हुआ और इस दुनिया से चल बसा.

यह सिलसिला चलता रहा. . .

अंत के बच्चे ने तो कमाल ही कर दिया. उसने पहले पैदा हुए बच्चों का रिकार्ड तोड़ कर एक साथ, इकट्ठे ही, गरीबी, आवश्यक वस्तुओं का अभाव, भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, भाई-भतीजावाद, हड़तालें, पुलिस ज्यादती, भ्रष्ट राजनीति आदि को देखा . इस समय वह अपनी संघर्षरत जिंदगी जी रहा है.

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ लक्ष्मी-नारायण संवादम्

● जयचंद्र झा 'प्रमोद'

थके-मांदे बूढ़े विष्णु ने लक्ष्मी से पूछा—हे लक्ष्मी, आर्यावर्त [redacted] कैसा चल रहा है?

लक्ष्मी ने छूटते ही उतर दिया—बिलकुल ठीक.

—कैसे ? विष्णु की जिज्ञासा थी,

लक्ष्मी ने बतलाया—गांव-गांव में [redacted] शाखाएं खुल गयी हैं.लोग नोटों के बिछावन पर सोते हैं. नोटों के वस्त्र पहनते हैं, नोटों से उनके शरीर ढंके रहते हैं. और चाहिए क्या यह तो कैवल्य की स्थिति है, मोक्ष की .

—और अनाज ?

—वह तो [redacted] स्टोर किया हुआ है. लोगों को अन्न से वितृष्णा हो गयी है—वैराग्य हो गया है. क्योंकि जब वे अन्न को प्राप्त करना भी चाहते हैं तो अपनी लघिमा. सिद्धि के कारण नोट अन्न के ऊपर चले जाते हैं. अब आप ही बताइए लोग उच्चतर दशा को प्राप्त कर निम्न अवस्था में उतरना क्यों कबूलें ?

—तुम्हारे समाजवाद [redacted] का क्या हुआ ? विष्णु का अगला सवाल था.

लक्ष्मी ने फौरन जवाब दिया—समाजवाद पूंजीवाद की सहज निष्पत्ति है. पूंजीवाद 'पूंजी' और समाजवाद 'वितरण' की थ्योरी है, टेकनीक है. अभी [redacted] पूंजी बढ़ती जा रही है. [redacted]

विष्णु गदगद हो उठे. उन्होंने लक्ष्मी को गले से लगा लिया. □

इलाज

● जीवन सिंह ठाकुर

चेहरा कितना स्याह. आंखें किसी सूखा पीड़ित क्षेत्र के कुएं में भरे पानी की तरह, दांतों में सरसों फूल रही थी. लहराते बांस-सी टांगें उठीं और दवाखाने के तेज घूमते पंखे के नीचे वह आ गया. डाक्टर ने उसे देखा. जैसा सभी को देखा जाता है. डा. ने चिट्ठी लिखी. उसे समझाने लगा—देख, खाना खाने के बाद यह टानिक लेना (वह अचकचाया). इससे ताकत आयेगी—और विटामिन की गोलियां हैं. इससे तू ठीक हो जायेगा. इन गोलियों से खाने जैसी चीज मिल जाती है. वह उठा. डा. ने एक बार फिर ताकीद की कि खाना खाने के बाद दो चम्मच लेना. फिर मुझे बताना. वह लहराता हुआ सामने कंपाउंडर की टेबल तक गया. चिट्ठी दी, उसने हरी-पीली गोलियां दीं. वह बाहर आ गया. बड़े गेट पर एक औरत एक बच्चे के साथ खड़ी थी. उसने गोलियां बच्चे के हाथ पर रख दीं. झट से बच्चे ने मुंह में डाल लीं. बच्चे के हाथ पकड़े तीनों बहर निकल गये. □

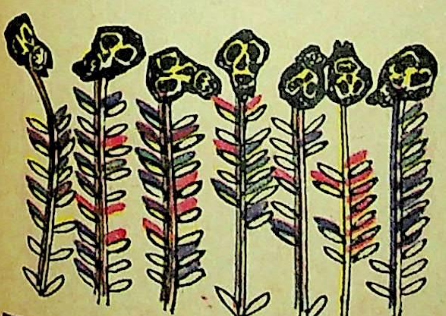

फर्क, कार्यपद्धति का

● मनोहर वर्मा

एक [redacted] को रात्रि में नगर भ्रमण का शौक था. प्रजा की सुरक्षा के लिए वह इसे एक कर्त्तव्य और आवश्यकता मानते थे. उनके इस कर्त्तव्यपालन का [redacted] बड़ा सटीक असर पड़ रहा था.

एक रात [redacted] चंद डाकुओं ने घेर लिया . एक डाकू ने [redacted] गरदन पर चाकू की नोक चुभाते हुए कहा—हाथ घड़ी, गले की चैन और जेब में जो कुछ है, सब निकाल कर दे दो.

[redacted] बोले—मेरा क्या है ? कुछ भी नहीं. यह सब आपका ही है. साथियो, आप की अपनी चीज है, कहिए तो दे दूं. . . ?

[redacted] धैर्य और वाणी की मधुरता ने डाकू सरदार को मुग्ध कर दिया.

—तुम अपनी बात ठीक से समझाओ. सरदार ने पूछा—तुम्हारे पास जो कुछ है वो हमारा कैसे है ?

—बड़े भाई, सीधी-सी बात है, आप सबने [redacted] दिया और आज मेरे पास जो कुछ भी है वह सब आपसे [redacted] ही तो पाया है. . .तब, मेरा अपना क्या है ? कुछ भी नहीं. . .

—इन्हें छोड़ दो. यह तो अपने ही बड़े भाई हैं. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजादी की दुम

● घनश्याम अग्रवाल

रावण का वध करके राम अयोध्या लौट आये. युद्ध में हनुमान को जौहर दिखाने के उपलक्ष में मंत्री-पद सौंपने का राम ने निश्चय किया. किंतु हनुमान ने मंत्रीपद लेने से इंकार कर दिया और कहा कि 'वे शेष समय जंगलों में बितायेंगे'. यह कह कर हनुमान चले गये.

देखते-देखते पच्चीस वर्ष बीत गये. हनुमान अब बूढ़े हो चुके थे. वृक्षों पर जा कर फल तोड़ने में उन्हें अब काफी कष्ट होता था. अचानक हनुमान को खबर मिली कि अयोध्या में आजादी की रजतजयंती मनायी जा रही है. इसमें राम-रावण युद्ध में भाग लेने वालों को ताम्रपट एवं २०० रु. मासिक पेंशन दी जायेगी. हनुमान की तकलीफ दूर हो गयी, सोचा, चलो बुढ़ापे का इंतजाम हो गया. उन्होंने भी पेंशन के लिए आवेदन कर दिया. काफी दिनों तक जब पेंशन की स्वीकृति न मिली तो हनुमान ने स्वयं अयोध्या जाने का निश्चय किया.

पच्चीस वर्षों में अयोध्या काफी बदल गयी थी. कुछ परिचित बंदर मिनिस्टर बने घूम रहे थे. उन्होंने हनुमान को पहचानने से इन्कार कर दिया. इतनी-सी बात के लिए राम के पास जाना उचित नहीं, यह सोच कर वह 'स्वतंत्रता सैनिक पेंशन विभाग' के दफ्तर पहुंचे. और अपनी पेंशन के बारे में पूछताछ की. लेकिन बाबू ने कहा कि 'उनका आवेदन नहीं है.'

—मगर मैंने तो रजिस्ट्री से भेजा था, एकनालेजमेंट दिखाते हुए हनुमान ने कहा.

चपरासी ने हनुमान को एक तरफ ले जा कर समझाया कि 'जब तक अर्जी पर वजन नहीं रखोगे वह आगे नहीं सरकेगी.'

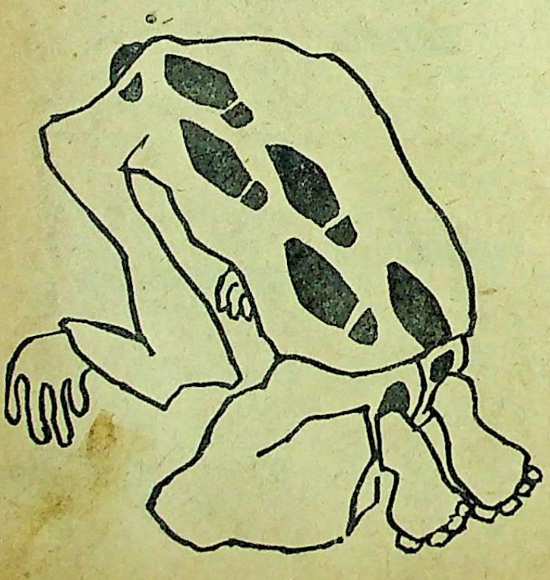

—मगर ये वजन क्या होता है?

—चपरासी ने हंसते हुए कहा—बंदर हो न, तुम्हारे पास पैसे तो नहीं होंगे, तुम कुछ फल तोड़ कर बाबू को दे दो, इसे ही सरकारी जुबान में वजन कहते हैं.

—मैं अब बूढ़ा हो गया हूं. राम-रावण युद्ध में तो पहाड़ उठाया था. पर अब तो झाड़ पर भी नहीं चढ़ सकता. इसीलिए तो पेंशन के लिए अर्जी की है. हनुमान ने विवशता प्रगट की.

चपरासी कुछ देर सोचता रहा. अचानक उसकी आंखों में चमक आ गयी और वह बोला —एक उपाय है, आजकल फारेन में बंदरों की दुम की बहुत मांग है, तुम दुम का कुछ हिस्सा काट कर बाबू को दे दो. अर्जी आगे बढ़ जायेगी, और हां मैंने उपाय बताया, मुझे भी चाय पीने को चार इंच का टुकड़ा जरूर देना.

हनुमान के तन-बदन में आग लग गयी. बंदर को अपनी पूंछ उतनी ही प्यारी होती है, जितनी आदमी को अपनी मूंछ. हनुमान सोचने लगे कि इसी दुम के अपमान के कारण मैंने लंका में आग लगा दी थी, पर यह तो अपने राम की अयोध्या है, फिर मैं कोई विद्यार्थी तो नहीं हूं जो अपनी ही संपत्ति में आग लगा दूं. जी में आता है कि इस बाबू को उठा कर फेंक दूं मगर विवश हूं आजकल कानून हाथ में लेना भी तो जुर्म है.

मजबूरी का नाम विभीषण यह प्रचलित कहावत याद आते ही चुपचाप सर झुकाये बाबू के पास पहुंच गये. उनकी दुम कुछ छोटी हो गयी और अर्जी आगे सरकी. वहां का बाबू पहले से ही कैंची लिये बैठा था. अर्जी आते ही उसने भी दुम का कुछ हिस्सा काट लिया.

इस तरह जैसे-जैसे दुम कटती गयी वैसे-वैसे हनुमान वल्द पवन कुमार की अर्जी आगे बढ़ती गयी और जब अर्जी पर पेंशन की मंजूरी की मोहर लगी हनुमान बिना दुम के हो गये.

हनुमान जाते-जाते क्रोधवश धमकी दे गये कि 'मैं इस ऑफीसर के भ्रष्टाचार की राम कहानी अवश्य राम तक पहुंचाऊंगा. सारे ऑफिस में खलबली मच गयी. किंतु सेक्शन ऑफीसर ने क्लर्क को समझाया—तुम डरो नहीं, तुमने जो कुछ किया वह परंपरागत किया. मैं इस बंदर को देख लूंगा.

अगले दिन हनुमान जालसाजी के आरोप में गिरफ्तार हो गये. उन पर आरोप लगाया गया कि इस बंदर ने हनुमान के नाम पर पेंशन लेने का प्रयत्न किया है, जब कि ये हनुमान नहीं है. सबूत में बताया गया कि हनुमान के एक लंबी दुम थी और इस बंदर के दुम नहीं है. अतएव यह हनुमान नहीं है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

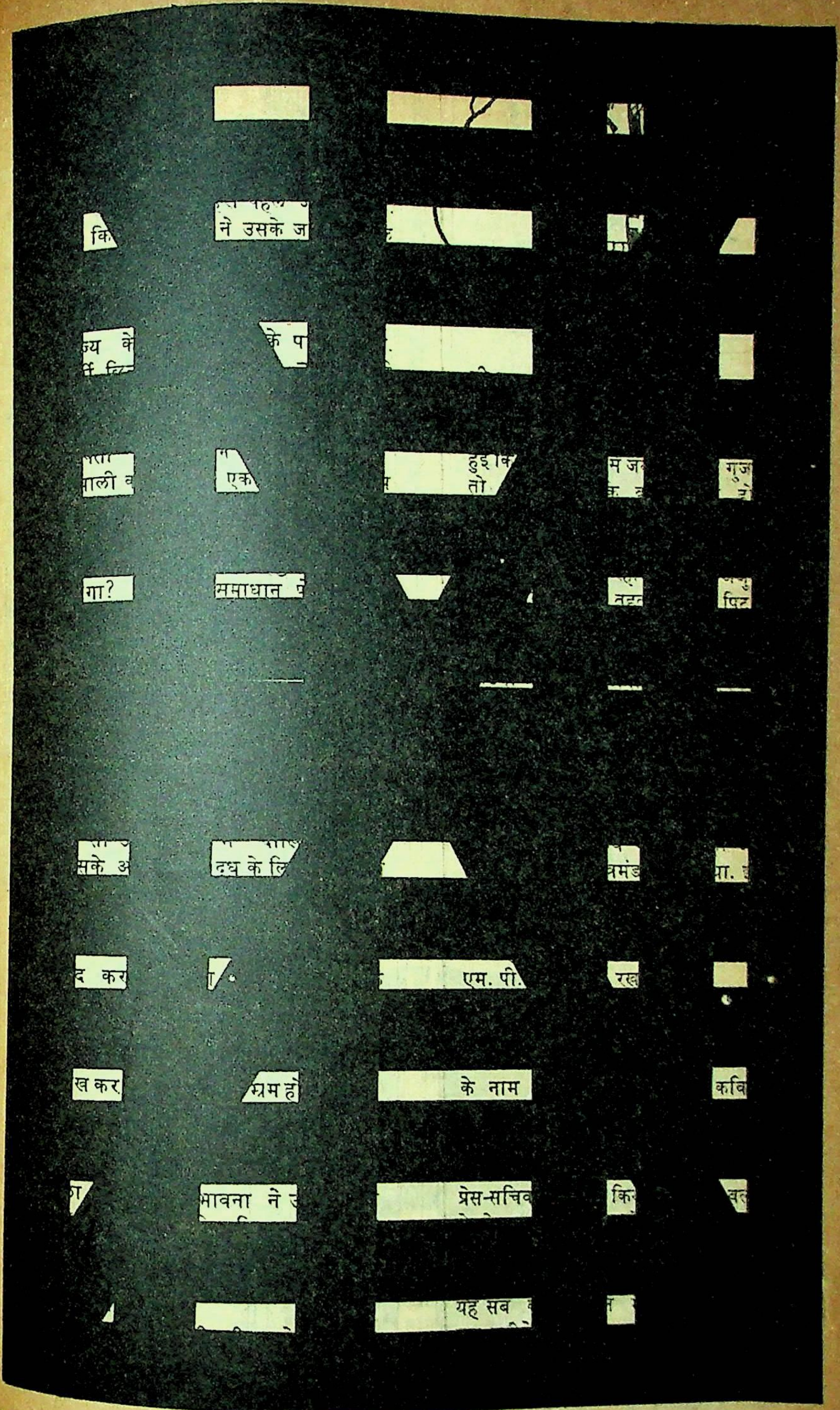

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

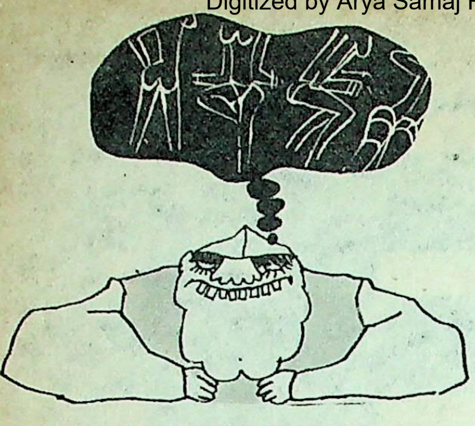

अंततोगत्वा

इन दिनों रामदीन के पास सभी विरोधी दलों के लोग आ कर कहते थे—शासक दल को हटाओ, यह भ्रष्ट है. कोई कहता था—प्रधान मंत्री को हटाओ. बीमारी की जड़ यही है. उसने शासक दल और प्रधान मंत्री को हटाने का निश्चय कर लिया. चुनाव के दिन जब वह बूथ पर पहुंचा तो पोलिंग आफिसर ने मतपत्र दे कर उससे कहा कि आप जिसे गद्दी पर लाना चाहते हों, उसके निशान पर मोहर लगा दें. रामदीन चक्कर में पड़ गया. प्रधान मंत्री तथा शासक दल को हटाने का तो उसने निश्चय कर लिया था, लेकिन किसको लाना है, यह तो उसने सोचा ही न था.

रामदीन कुछ सोच नहीं पाया अतः बिना किसी झंझट में पड़े उसने शासक दल के अपने सुपरिचित चिह्न पर ही एक बार फिर मोहर लगा दी. □

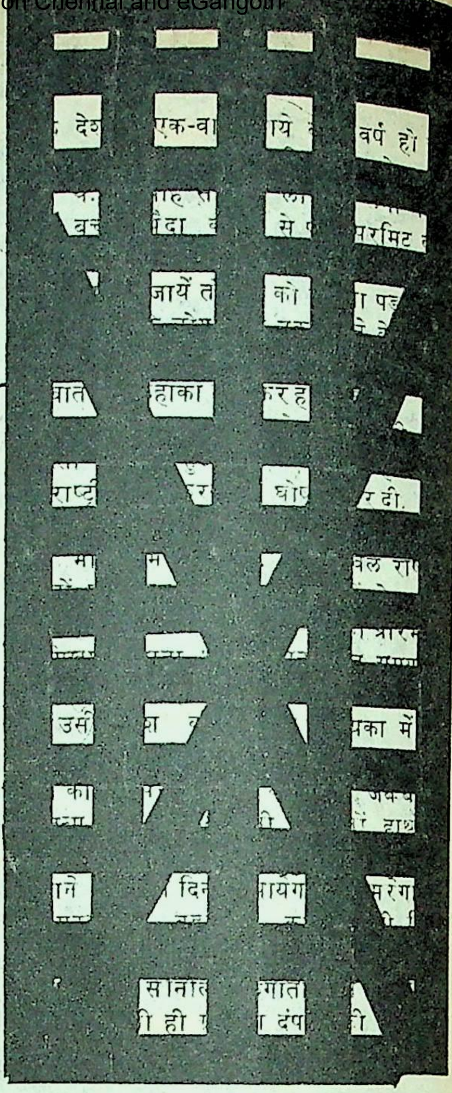

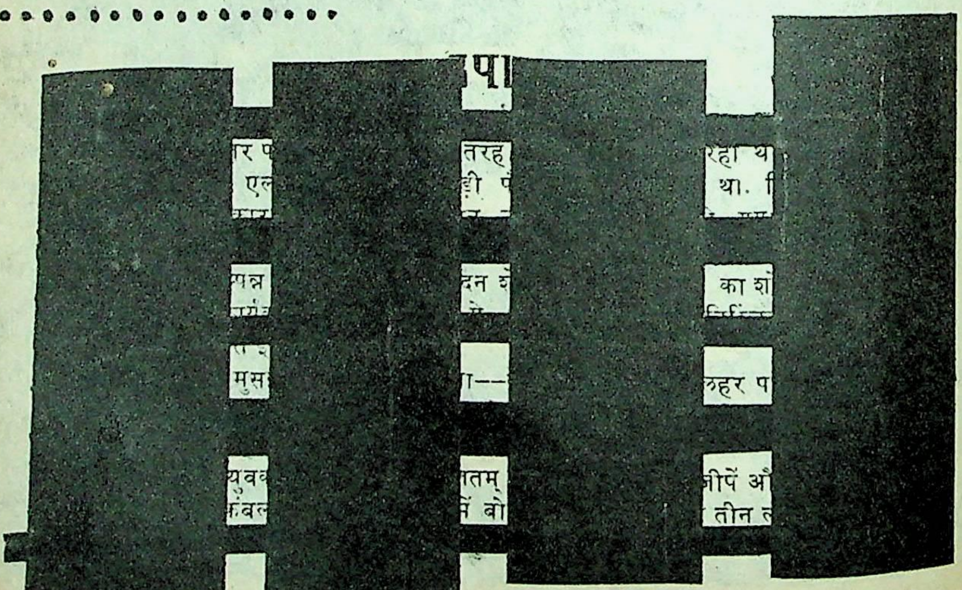

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्दों के आंसू • कनडीवाला

मंत्रीजी के पी. ए. ने इत्तला दी कि बाहर अतिथि कक्ष में कुछ विचित्र लोग विचित्र प्रकार की पोशाकें पहने हुए बैठे हैं और आपसे मिलना चाहते हैं. उन लोगों से अतिथि कक्ष में जा कर ही मिलना बेहतर रहेगा

मंत्रीजी अतिथि कक्ष में आये. अजीब प्रकार के व्यक्ति मंत्रीजी को देख, हाथ जोड़ खड़े हो गये. उनमें से एक, सबसे बुज़ुर्ग व्यक्ति ने नमस्कार किया और आगे बढ़ कर मंत्रीजी से बोला— —हिंदुस्तान की राष्ट्रभाषा हिंदी के हम कुछ 'नाचीज शब्द' हैं. मैं 'आश्वासन' हूं. वह अपने साथियों का परिचय कराने लगा, ये 'कड़ी-कार्यवाही' हैं, ये 'कड़ी चेतावनी' हैं, ये 'न्यायिक जांच' हैं, ये 'आह्वान' हैं, ये 'अतिरिक्त आय' हैं, ये 'अतिरिक्त खर्च' हैं, ये 'खर्च में कटौती' हैं, ये 'हालात सुधार पर' हैं.'

—आप लोगों का यहां पर आने का मकसद क्या है ? मंत्रीजी ने हैरानी से पूछा.

वह सब एक जुबान हो कर बोले—आप आइंदा अपने भाषणों में और वक्तव्यों में हम नाचीज शब्दों को प्रयोग में न लायें तो बड़ी महरबानी होगी.

—आखिर क्यों? मंत्रीजी ने पहले से अधिक हैरानी से पूछा.

—इसलिए कि आपने हमें इतनी अधिक बार प्रयोग किया है और करते हैं कि अब लोग हमसे बेहद चिढ़ने लगे हैं. हम तमाम शब्दों ने अपना वह असर और पावर खो दिया है, जो हमारे उपयोग करने पर सामने वाले व्यक्ति पर पड़ता था. अलग से हमारा अस्तित्व ही खत्म हो गया है.

तमाम शब्द रोते हुए नेताजी के चरणों में गिर पड़े. □

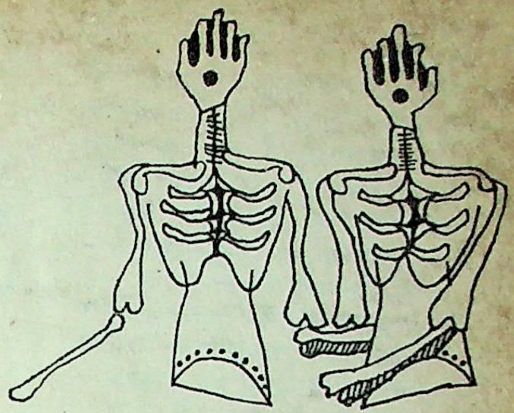

जोड़े • कुणाल

वे कोई भी हो सकते हैं. क्या फर्क पड़ता है?

वे कुछ भी हो सकते हैं, पति-पत्नी, भाई-बहन, प्रेमी-प्रेमिका, वेश्या-ग्राहक, दो दोस्त-दो पड़ोसी . . . या और कुछ . . .

वे स्त्री-पुरुष हैं और लेक के किनारों की बेंचों पर बैठे हैं या सड़कों, होटलों, पार्कों में चहलकदमी कर रहे हैं.

वे एक-दूसरे से सट के बैठे हैं या अलग-अलग. लड़की सीधी बैठी है और लड़का उसकी तरफ हो कर बैठा है या लड़का ही सीधा है, लड़की लड़के की ओर रुख किये हुए, है, क्या फर्क पड़ता है ?

वे हंस रहे हैं, बातें कर रहे हैं, जोर से या, खुश-फुस करके. या एकदम गुमसुम हैं.

एक-दूसरे को चूम रहे हैं, एक दूसरे के पूरक हैं.

या रेल के मुसाफिर की तरह पास रह कर भी दूर-दूर हैं. क्या फर्क पड़ता है? □

अभिजात्य • कुणाल

मैं आज ट्यूशन पढ़ाने नहीं गया.

जाऊं. . न जाऊं. . . जाऊं . . . न जाऊं. . . और नहीं गया.

मुझे भूख लगी.

मैंने कमरे के कोने में पड़े चावल की खीर बनानी चाही.

परंतु. . .

वह चावल मेरे सहवासी के हैं. वह, जो मुझे एक मजाक की ही हस्ती समझता है, जब जानेगा कि मैंने उसका चावल खरचा है, बहुत बिगड़ेगा.

और . . .

मैंने खीर बनाने का इरादा छोड़ दिया.

उगी तरह उठंगा हुआ पढ़ता रहा.

मन ने कहा—कुछ देर के लिए बाहर हो आओ. तबियत बहल जायेगी.

मैंने बाहर पहनने के कपड़ों की ओर देखा, बेहद मैले थे.

मैंने आगे के सफे पलट दिये. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकास • मधुप मगधशाही

मुखियाजी रोजनामचे के मुताबिक दफ्तर पहुंचे. भीतर साहब ललाट पर अंगुलियां ठोंकते उदास मुद्रा में बैठे थे. साहब की उदासी मुखियाजी के कलेजे में 'हाय!' से धंस गयी.

परदा हटा कर वह अंदर पहुंचे. साहब ने देखा तो ललाट का हाथ मेज पर आ गया. बोले—आइए, आइए मुखियाजी, कैसे भूल पड़े?

—हुजूर ही की सेवा में तो हूं, सरकार. और उसके बाद अगल-बगल ताक-झांक कर गोपनीय भाव से मुखियाजी ने अपनी बात चलायी—आज सरकार उदास दिखलाई पड़ते हैं.

—हां, मुखियाजी, साहब ने फिर अपना हाथ माथे पर रख लिया—तकलीफ तो कोई खास नहीं, वैसे है भी!

—कहिए क्या बात है हुजूर? आखिर यह सेवक किस दिन के लिए है?

—बात यह है मुखियाजी, साहब ने बोलना शुरू किया—साल खत्म होने को आया, सरकार वाले पूछेंगे, आपने विकास का रुपया विकास में लगाया क्यों नहीं, तो क्या जवाब दूंगा?

—बस इत्ती-सी बात सरकार? मुखियाजी चहके. उन्हें आश्चर्य हुआ कि यह नया आया हुआ विकास साहब निरा बुद्धू है, कहने लगे—विकास तो चुटकी बजाने में हो जाता है. कितना विकास करना है आपको?

—यही सत्तर-अस्सी हजार हैं.

—मैं अभी आया. आधे घंटे बाद ही उनकी कृपा से विकास कार्यालय के सामने सैकड़ों व्यक्तियों की भीड़ थी. किसीके हाथ में नलकूप की अर्जी थी, किसीके हाथ में कुएं की बोरिंग खुदने, सड़कें बनने और बिजली के खंभे गाड़ने के बिल भी थे. खजांची एक दृष्टि से रुपये गिन और बढ़ा रहे थे.

—मुखियाजी दौड़-धूप में व्यस्त थे. तभी एक व्यक्ति नोटों को गिनता हुआ उनके पास पहुंचा. हकलाता हुआ बोला—साहब ने सही कराया आठ सौ पर, दिया सिर्फ दो सौ.

—ऐसा! मुखियाजी चौंके—अभी साहब से मिलता हूं. वह साहब के कमरे में पहुंचे—सरकार, रसीद के मुताबिक. . .

लेकिन साहब ने बीच ही में बोलना शुरू कर उन्हें वाक्य पूरा करने से रोक दिया—मुखियाजी! साहब मुसकराये—यह तो विकास है. विकास आप केवल अकेले ही कैसे देखेंगे? मुझे भी तो दिखना चाहिए. मेरे दफ्तर के लोग भी देखेंगे. फिर मेरे ऊपर वाले भी देखना चाहेंगे. विकास का लाभ सिर्फ एक को मिले तो वह विकास कैसे कहला सकता है? मुखियाजी को साहबकी बात गुरुमंत्र लगी. □

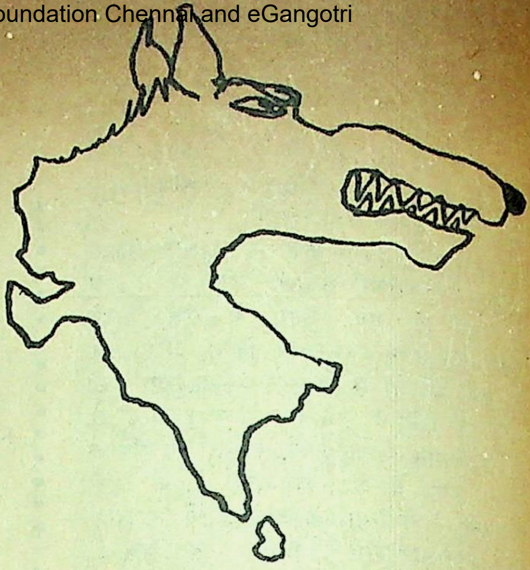

मृत्यु-दर्शन • दिनेश बरनवाल

महारानी महल के सर्वोच्च प्रकोष्ठ पर थीं. समीप ही उनकी मानिता भृत्या वौसरि खड़ी थी. वह अपनी सुंदरता और बुद्धि चातुर्य के लिए विख्यात थीं. महारानी में ज्ञान की लिप्सा थी.

उस समय प्रकोष्ठ के ठीक सामने एक बुर्ज बनाया जा रहा था. हजारों स्त्री-पुरुष कार्यरत थे. महारानी की एकाग्रता टूट गयी, जब उन्होंने देखा कि एक मजदूर वहां से गिर पड़ा.

—तुमने देखा वौसरि, कैसा अद्भुत था!

—हां महारानी, मृत्यु का दर्शन ऐसा ही है.

—मुझे भी ऐसा लगता है. मैं इस पर विचार करना चाहती हूं वौसरि.

—जरूर करें महारानी.

—दुर्गपाल से कहो कि एक मजदूर को उसी बुर्ज पर से नीचे गिरायें. मैं फिर देखना चाहती हूं.

वौसरि चली गयी. उसने दुर्गपाल को महारानी की आज्ञा सुनायी. सबके चेहरे फक्क!

तभी भीड़ में से एक वृद्ध बाहर आया. बोला—महारानी की आज्ञा का पालन करें!

सिर झुका कर प्रधान उसे बुर्ज पर ले चला. महारानी उसी प्रकोष्ट से देख रही थीं. वृद्ध शांत था. उसे बुर्ज पर से धक्का दे दिया गया. वह गिरा. उसके मुंह से एक आवाज तक न निकली. उसका शरीर नीचे गिर कर बिखर गया.

महारानी ने स्तब्ध हो कर देखा. आश्चर्य से बोलीं—वौसरि, यह क्या हुआ?

—मृत्यु का दर्शन गूढ़ है महारानी.

महारानी पराजय स्वीकार करने को प्रस्तुत न थीं. वह क्षोभ से इधर-उधर घूमने लगीं.

वौसरि के कान महारानी की आज्ञा की प्रतीक्षा में सतर्क थे. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

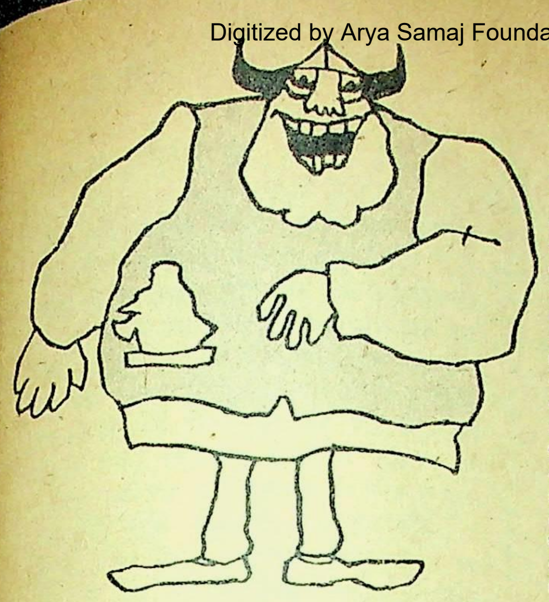

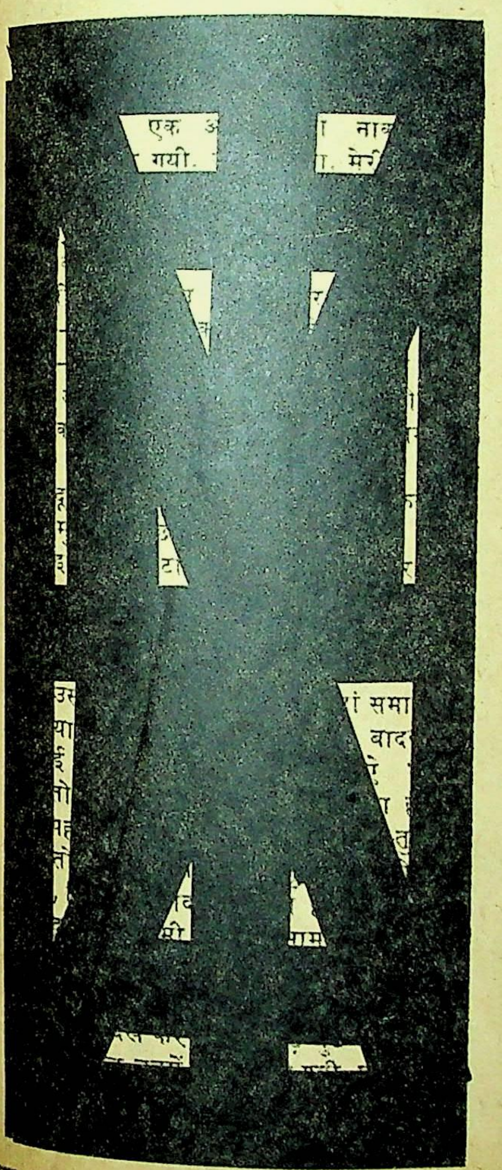

प्रजातंत्र

● अनिल मधुर

गांव के बाहर एक छोटी-सी पहाड़ी पर खड़े दो व्यक्ति सूर्य का उदय होना देख रहे थे.

--देखो बंधु, पूरब दिशा में कैसी लाली छा रही है. एक ने कहा.

—हां, मुझे तो यह किसी लाल-सुनहरे गोले से फूटती प्रतीत होती है. दूसरे ने कहा.

—तुम्हारा क्या विचार है, बंधु, यह क्या हो सकता है?

--मेरे विचार से यह सूरज है.

--सूरज, तुमने कैसे जाना कि यह सूरज है?

—निश्चित रूप से नहीं कह सकता भैया, लेकिन कल रात पुस्तक में पढ़ा था कि सूरज एक सुनहरे रंग का गोला होता है. वह पूरब दिशा...

—लेकिन तुम इन तर्कों के आधार पर यह सिद्ध नहीं कर सकते कि यह गोला सूरज ही है; परंतु मैं सिद्ध कर सकता हूं कि यह सूरज नहीं है.

--कैसे? दूसरा चकित हो कर बोला.

--आओ मेरे साथ. वे दोनों पहाड़ी से उतर कर गांव के मुखिया के पास गये.

—दादा, पूरब दिशा में देखो, भला बताओ तो यह क्या है?

—क्या है? मुझे तो कुछ भी दिखाई नही देता.

—देखो न दादा,... वो लाल-लाल गोल-सा पहले ने कुछ 'हिंट' देने के अंदाज में कहा.

—अरे, यह सूरज है. इतना भी नहीं जानते.

—लेकिन दादा, तुम कैसे कह सकते हो कि यही सूरज है.

—भई, दुनिया कहती है कि सूरज है.

इतने में चंद लोग और जुट गये. बहस जारी रही. देखते-ही-देखते भारी जमघट लग गया.

पहले व्यक्ति ने जन-समूह को संबोधित करते हुए कहा--भाइयो, क्या आप प्रमाण दे कर इस बात को सिद्ध कर सकते हैं कि यह सूरज ही है. अन्य कोई ग्रह नहीं है? मैं कहता हूं कि यह सूरज नहीं कोई अन्य ग्रह है.

एक वृद्ध सज्जन ने सहमति जतायी--हां, भाई, कोई दूसरा ग्रह भी तो हो सकता है.

जब चंद और लोगों ने भी पहले व्यक्ति के समर्थन में अपनी-अपनी खोपड़ियां हिलायीं तो दूसरा व्यक्ति बेतहाशा पूर्व दिशा की ओर भागने लगा. शायद वह सूरज को यह समाचार पहुंचाने जा रहा था कि प्रजातंत्र आ गया है. □

लघुकथाओं के इस विशिष्ट खंड का संचयन और संयोजन श्री नरेंद्र मालवीय ने किया है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

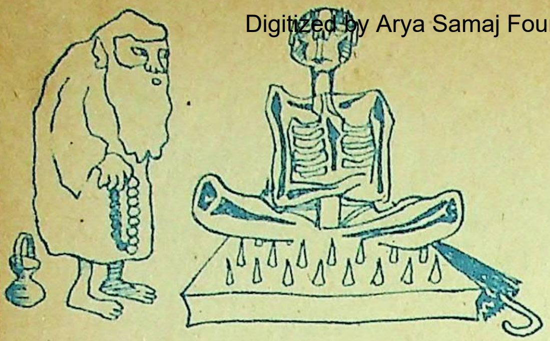

सबूत

● हसन जमाल छीपा

खिलाफत अब्बासिया के जमाने में बरसाती मेंढकों की तरह पैगंबरी के कई दावेदार पैदा हो गये थे. जिसे देखो, वही पैगंबर बना चला आ रहा है. खलीफा हारून रशीद की नाक में दम आ गया. उसने अपने वजीरे-खास को हिदायत कर रखी थी कि वह पैगंबरी के दावेदारों से दलीलें मांगे और जो दलीलें पेश करने में असमर्थ रहे, या जो झूठा साबित हो, उसे फांसी की सजा दे दी जाये.

बहुत से नामनिहाद पैगंबर 'सूली' पर चढ़ा दिये गये.

अंत में एक और दावेदार आया. वजीरे-खास ने उकताये हुए लहजे में उससे भी पैगंबरी की दलीलें मांगी.

दावेदार ने मुसकराकर वजीरे-खास को देखा व बोला-मेरी कोई नहीं मानेगा. . .आप अगर बीवी को मेरे पास भेज दें. उससे एक लड़का होगा, वही मेरी पैगंबरी का एलान कर देगा. अगर यह बात झूठी साबित हो जाये तो खलीफ़-ए-वक्त जो चाहें, मुझे सजा दे सकते हैं.

वजीरे-खास ने तुरंत उसे नबी (पैगंबर) मान लिया. □

विवशता

● नाशेर जमाल

स्वर्ग, ८ दिसंबर १९७४ (विशेष डाक से). पिछले एक साल से देवलोक में चल रहा संकटकालीन सत्र कल यहां समाप्त हो गया. 'नर्क अंत' अध्यादेश को अधिनियम का रूप देने के विधेयक पर हुई बहस में वक्ताओं ने अपने तर्क जोरदार ढंग से प्रस्तुत किये. गहन विचार-विमर्श के बाद यह बात मान ली गयी कि नर्क का अब अंत कर दिया जाये तथा उसमें अनादि काल से धधकती आग को ठंडा कर दिया जाये.

याद रहे यह अधिवेशन ब्रह्मा के विशेष आग्रह पर बुलाया गया था जिसमें ब्रह्मा, विष्णु, महेश के अलावा देवलोक के सभी छोटे-बड़े भगवानों को तर्क-वितर्क के लिए सादर आमंत्रित किया गया था.

समापन समारोह के पश्चात जब यमराज ने नर्क की आग को आफ करने का बटन दबाया तो सभी देवताओं की आंसू भरी आंखें नीचे संसार की ओर लगी थीं, जहां आणविक धमाकों से सैकड़ों फिट ऊंचे शोले उठ रहे थे. तृतीय विश्वयुद्ध का विषैला नाग शनैः शनैः समस्त मानवता को निगलने की ओर रेंग रहा था. समुद्र, तथा वायुमंडल में दूषण फैल रहा था. इनसानी बस्तियों पर बंबारी हो रही थी. फसलों पर जहरीली गैस छिड़की जा रही थी. लूली-लंगड़ी संतानें पैदा हो रही थीं. लाखों लोग सूखा, बाढ़ और भुखमरी से त्रस्त दम तोड़ रहे थे.

जब संसार ही नर्क हो गया हो तो नर्क की आवश्यकता कैसी. . . □

भूख

● अनूपकुमार

कड़ाके की ठंड में एक औरत अपने बच्चे को चिपकाये फुटपाथ पर पड़ी थी. बच्चे से ठंड सहन न हो सकी.

—मां! मुझे ठंड लग रही है.

—अच्छा बेटा, चल आग के पास चलते हैं.

अब ठंड नहीं लग रही थी.

—मां, मुझे भूख लग रही है.

—चल बेटा, वापस वहीं चलते हैं.

बेटा मां से चिपक गया. शायद अब ठंड भूख से प्रबल थी. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्रकारिता

● प्रभु जोशी

एक नवोदित छायाकार ने, फुटपाथ पर भूख से बिलखते एक नवयुवक को देखा तो वह करुणा से भर गया. उसने उसे एक वक्त के खाने का पैसा दिया और उसके कृश शरीर का चित्र उतार लिया.

चित्र एक बहुचर्चित पत्रिका को प्रकाशनार्थ भेजा. यह सोच कर कि इसके छपने से लोगों को मालूम होगा कि 'कृषि प्रधान' कहलाने वाले इस देश में लोग भूख से सूख कर कांटा हो रहे हैं.

कुछ दिनों बाद चित्र छप गया. संपादक ने उसे अपने पत्र के लोकप्रिय स्तंभ में छापा था–जिसका नाम था—'डाक्टरों की सलाह'

नीचे शीर्षक था—'गंदी आदतों का फल भोगता एक नवयुवक' □

भविष्य में

● नीरज बख्शी

सन २०५० ई. का एक दृश्य.

स्थान - एक अजायबघर, एक गाइड स्कूल के बच्चों को परिचय दे रहा था.

गाइड— और यह जो आप उस डिब्बे को देख रहे हैं यह डिब्बा है डालडा नामक पौष्टिक पदार्थ का, इसे हिंदुस्तान लीवर. . .कं. बनाया करती थी, इसमें . . .और यह डिब्बा मिट्टी के तेल का है. . .आपको यह आश्चर्य होगा-मिट्टी का तेल, जी हां उस युग में यह तरल पदार्थ भारत में पाया जाता था. अब यह केवल इस अजायबघर की शोभा बढ़ाने के लिए रखा गया है. . . .और वह देखिए, उस हरी मखमली डिब्बी में जो चमकदार दाने दिखाई दे रहे हैं वह चीनी नामक पदार्थ है. . .जी हां, मीठी, स्वादिष्ट चीनी के बारे में आपने इतिहास में कहीं अवश्य पढ़ा होगा.. और. . .दूध है. . .यह घी है. . . और अब एक अंतिम वस्तु वह जो आप देख रहे हैं. . .हां, हां, वह बड़ी-सी पीतल की मूर्ति वह थे हमारे देश के महान खाद्यमंत्री, जिनके युग में इन वस्तुओं का खूब व्यापार होता था. . .

बच्चे आश्चर्य-प्रसन्नता और गर्वित भाव से मूर्ति निहारते हैं और एक नारा लगाते हैं—हमारे पूर्वज महान थे जिन्होंने इन वस्तुओं को हमारे लिए रख छोड़ा—हमारे पूर्वज–जिंदाबाद. (पर्दा गिरता है) □

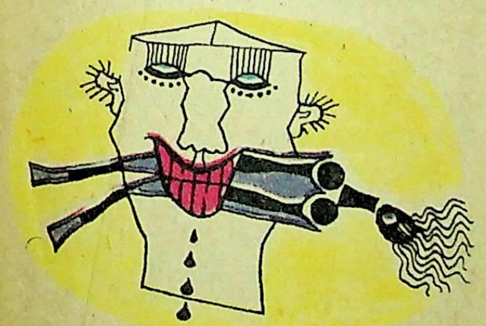

मानसरोवर

● पन्नालाल

([redacted] कहानी मानसरोवर से संबद्ध—क्षमायाचना सहित)

एक बार मानसरोवर में हंसों को धोखा हुआ था- विश्वासघाती सैनिकों ने जब संन्यासियों का वेश धारण किया तो हंसों के लिए अविश्वास का कोई कारण शेष न बचा. वे विश्वास की ओट में छले गये. फिर वे कभी मनुष्य जाति पर विश्वास न कर सके.

उसी समय एक हंस-शिशु बच गया था. अपने कुटुंब वालों के प्रति अथाह दुख में डूबा मध्य रात्रि में रुदन करने लगा. उसकी करुण अवाज से हिमालय कांप उठा. शंकर की तपस्या भंग हो गयी. उस करुण शिशु आवाज को वे सह न सके. अपने अनुचरों के साथ भागे-भागे आ गये. हंस-शिशु को बहलाया, फुसलाया और उसकी दारुण कथा सुनी.

इतना ही कहा—यह राजनीति है शिशु, राजनीति.

हंस शिशु ने इस विषय पर अपना आश्चर्य प्रकट किया.

शिव ने वर दिया.—तुम अगली बार मृत्यु लोक में मनुष्य योनि में जावोगे तब इसका अर्थ समझ आयेगा. और वे अंतर्धान हो गये.

बरसों बाद वह हंस-शिशु मृत्यु-लोक में मनुष्य के घर पैदा हुआ. [redacted] नेता बना. सुख समृद्धियों में लीन उसे अब बीती बातें याद न थीं. पर समय के साथ उस पर लोगों का विश्वास न रहा. उसकी पार्टी बहुमत खो बैठी. वह चिंतित रहने लगा. इलेक्शन नजदीक था और हार अवश्यंभावी थी. उस रात उसे सपने में शिव के दर्शन हुए. उन्होंने कहा. . .यह राजनीति है शिशु. राजनीति. दूसरे ही दिन उसने अपना वस्त्र बदल लिया. सिपाहियों के बदले वह सन्यासी बन चुका था. [redacted] □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

अल फ़ातेहा

आनंद कुरैशी

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

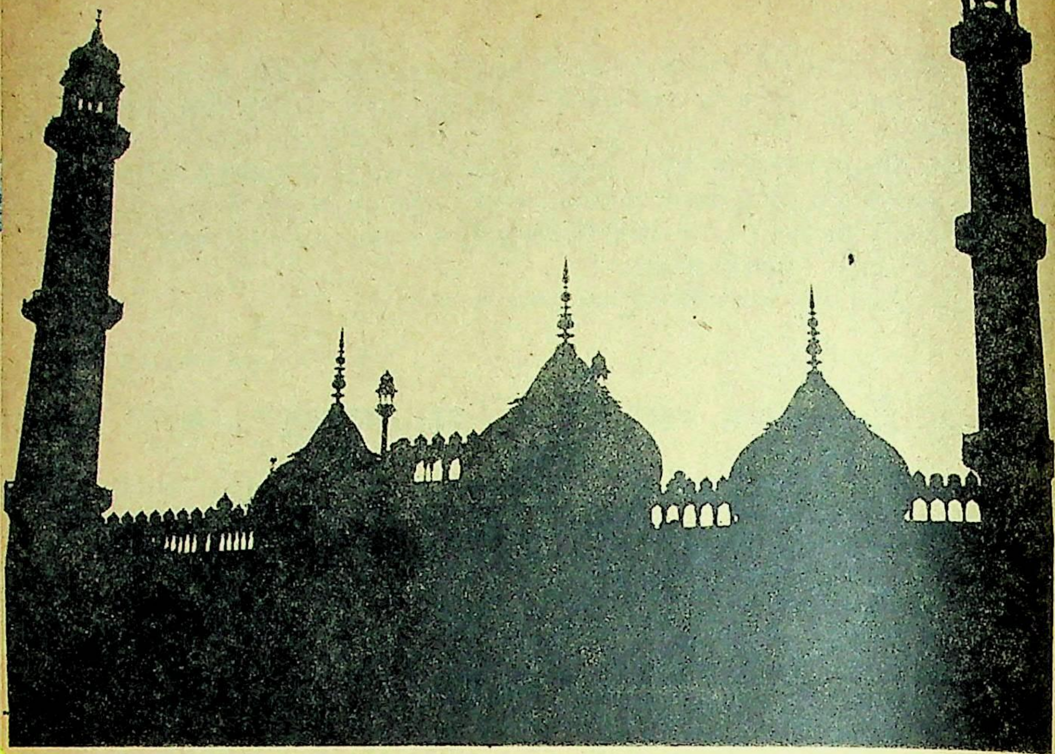

● देवदत्त

—कंधा बदलो.

—हटो, मुझे आने दो.

—लिल्लाह!

(जनाजा मचक-मचक हो रहा था. मौत के बाद लाश भारी हो जाती है. शीघ्रता से लोग एक के बाद एक कांधे बदल रहे थे).

—बरसात होगी.

—छाता भी नहीं लाया.

(जनाजा बाज़ार को पार कर रहा था).

—ऐ!

—क्या है?

—मेरा पान भी बंधवा लेना.

(रास्ते के बीच में गड्ढा था. जनाजे वाले संभल-संभल कर निकले).

—स्साले, हराम का खाते हैं!

—कौन?

—कमेटी वाले.

—टैक्स वसूल करते हैं, मगर सड़कें दुरस्त करने की फुरसत किसको है!

(पच्-पच्! कीचड़ में पांव पड़े सबके. चारों तरफ कीचड़ ही कीचड़ था)

—धीरे चल यार.छींटे उड़ा रिया है पट्ठा.मस्ती में.

—अब्दुल भाई!

—हां.

—कबर खोदने कौन गया है?

—वजीर.

—दूसरा और कोई नहीं मिला?

—दूसरे पैसे ज्यादा लेते हैं.

—हूं! कमबख्त नेकी के काम में भी हरामखोरी करते हैं. खुद टांगें फाड़ कर सोयेंगे, तब देखूंगा कौन खोदेगा कबर?

(कब्रिस्तान आ गया. चारों तरफ कब्रें ही कब्रें. लंबे-चौड़े मिट्टी के ढलाऊ पाट, कोई छोटे, कोई बड़े, दूर दूर तक फैले पड़े थे. जनाजा टीन की छत के नीचे फर्श पर रख दिया गया. कुछ दाढ़ी वाले बुढ़ऊ और पक्के नमाजी टाइप लोग वहीं खड़े रहे, बाकी आस-पास तितर-बितर हो गये).

—अभी तक इतनी ही कबर खोदी है?

—जमीन भी तो भाटे वाली है.

—मगर तीन घंटे हो गये तेरे को आये. अभी आधे घंटे का काम यूं का यूं पड़ा है.

—अगर ऐसी बात थी तो आप खोद लेते.

—चोप्प! मरावणी का! लौंडो! देखते क्या हो, मिट्टी हाथों-हाथ निकाल डालो.

('लौंडे'-शब्द को सार्थक करने वाले बांहें चढ़ाकर टूट पड़े. खुदी हुई मिट्टी बाहर निकाली जाने लगी.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—नहीं न तुम!
—पिकनिक पर.
—लड़कियां भी थीं क्या?
—सब थीं.
—वो यार, मोटी वाली क्या नाम है?
—कुसुम.
—एक बात पूछूं?
—क्या?
—मैंने सुना है, जान साहब फिदा हैं उस पर.
—तभी, मैं कहूं वह मोटी क्यों होती जा रही है!
(लौंडे बीच कब्र में ही ठहाका मार कर हंस पड़ते हैं. सतर्क बूढ़ी नजरें उधर घूमती हैं. सब चुप हो जाते हैं).
—कबर कितनी लंबी है सलीम?
—छह फीट.
—ठीक है. गैराई में एक फुट ओर ले लो.
(वजीर फुर्ती से कुदाली चलाने लगा.)
—क्या आदमी थे, मेहमूद भाई!
—पूछो मत. हीरा थे, हीरा.
—अल्लाहो अकबर!
(एलान हुआ. नमाजी लोग जनाजे की नमाज के लिए खड़े हो गये. दूसरे कब्र को घेर कर बतियाने लगे).
—वजीर, अब और कितनी है?
—बस खतम है, साब.
—जनाजा ले आये क्या?
—हां.
—चलो साहब.
—अलहम्दो लिल्लाह!
—या पाक परवरदिगार, तू ही रखवाला है.
(चार आदमियों ने कांधे दिये).
—पत्थर आ गये क्या?
—हां, चार हैं, बड़े-बड़े.
—माप कर देख लो.
—क्या करता है, ऊपर से पकड़!
—ऊंट का ऊंट हो गया, मगर अकल नहीं आयी.
—डोरी पकड़ना, सलीम भाई!
—गुलाब जल छिड़क दो.
(अब सब लोग मुंहदिखाई की रस्म अदा करते हैं).
—देख लिया सबने?
—मुंह ढंक दो.
—अलहम्दो लिल्लाह!
—अरे बच्चू! ऐसे भी कोई रोता है.
—जरा धीरज रखो बेटा, अभी तो हम जिंदा हैं.
—पत्थर जमाओ.
—वजीर!
—हां साब.
—मिट्टी बराबर करो.
(ढंके पत्थरों पर मिट्टी डाली जाने लगी).
—अब्दुल भाई, सिरहाने फूल रख दो.
—गफूर भाई, फावड़े एक तरफ हटा लो.
—अल फातेहा!
—अल्लाहुम्मा स्वल्ले अला. . . (सबके हाथ उठ गये. फातेहा खतम होते ही सब चल पड़े).

आनंद कुरेशी : पेशे से अध्यापक. इनकी कहानियों में समाज की रूढ़ियों पर प्रखर व्यंग्य के साथ-साथ रुढ़िवादियों के ढकोसलों पर भी पैनी चोट का बखूबी चित्रण होता है.

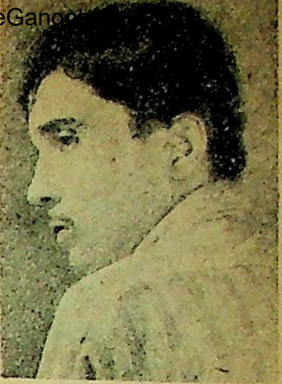

—वजीर, फावड़ा ओर गेंती संभाल देना.
—देख, देख गिरेगा! लौंडे मय्यत में भी बन-ठन कर आते हैं!
—लानत है ऐसी तालीम पर, थू!
—यार वो मुंशीजी की बेटी मिली क्या?
—नहीं, मिलने के लिए थोड़ी भागी थी.
—खानदान की नाक छिदवा ली लौंडिया ने.
—मियां खानदान तो पूरा का पूरा छिदा हुआ है.
(सुनने वाले दबी हंसी हंसते हैं.)
—मेहमूद भाई के घर आखिरी फातेहा पढ़ने नहीं चलोगे क्या?
—नहीं! पिक्चर का टाइम हो गया है, मैं चलता हूं.
(आधे लोग रास्ते में बिखर गये. आधे मरहूम मेहमूद भाई के घर मातमी सूरत बनाये आये).
—अल फातेहा!
(मौलाना की आवाज पर सबके हाथ उठ गये. भीतर औरतों में अब भी चीख-पुकार मची थी. मौलाना की आवाज पर सब चुप हो गये. केवल एक घुटी-घुटी आवाज रोने की सुनाई दे रही थी, शायद मेहमूद भाई की विधवा बीवी की. सामने देहरी पर उनका तीन साल का नन्हा मुन्ना कुर्त्ता मुंह में दाबे मौलाना की ऊपर-नीचे होती दाढ़ी को एक टक निहार रहा था.

फातेहा खतम हुआ. ज्यादातर लोग पास की गलियों में तेजी से विलीन हो गये. रिश्तेदार लोग जाजिम पर बैठ गये. एक ने चेवला बीड़ी का बंडल उठाया और माचिस की डिबिया से तीली निकाल कर सुलगा ली.)

—अस्सलाम अलैकुम!

(मौलाना उठे. रिश्तेदार भी उठने लगे. मुन्नू मौलाना को देख रहा था—चाचाजी, उन्हें एक-एक के पांच नोट दे रहे थे.) □□□

**राजकीय माध्यमिक विद्यालय ओबरी,
ओबरी, जि. डूंगरपुर, राज.**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरे कमरे पर अजीब-सी खामोशी तारी थी. सिर्फ अब्बाजान के कदमों की धीमी-धीमी आवाज उमर रही थी, जो अपनी झुकी हुई कमर और दमे की भारी फूलती हुई सांसों को दबाने की नाकाम कोशिश करते हुए कमरे के इस कोने से उस कोने तक, न जाने किस सोच में गर्क, आ-जा रहे थे. भाई कोने में पड़ी टूटी कुर्सी पर अधलेटे-से खला में न जाने क्या घूर रहे थे. उनकी ऐनक के पीछे छुपी हुई बड़ी-बड़ी आंखों में आंसू थे और शायद उन आंसुओं के परदे के पीछे से उन्हें कुछ नजर नहीं आ रहा था. उसी वक्त अब्बाजान अचानक टहलते-टहलते रुक कर, अपनी झुकी हुई कमर पर एक हाथ रख कर, उनके पास खड़े हो गये.

—तुम्हें सारे हालात मालूम हैं, अहसन! मगर तुम फिर भी चाहते हो कि मैं तुम्हें अलीगढ़ पढ़ने के के लिए भेज दूं. तुम जरा सोचो, अभी हमारी दुकान में चोरी हुए दो महीने भी नहीं हुए हैं. तुम्हारी मां को मरे एक महीना भी नहीं हुआ है. वह एक लमहे को रुके, फिर बोले, खैर दुकान की चोरी का तो पता भी चल सकता था, और रुपया लगाकर दूकान भी खोली जा सकती थी, मगर तुम्हारी मां के इलाज ने मुझे कौड़ी-कौड़ी का मुंहताज कर दिया. तुम तो जानते हो, रुपया किस तरह पानी-सा बहा है. मगर आह, वह भी बेकार चला गया, तुम्हारी मां ने भी साथ छोड़ दिया.

—मगर अब्बाजान?

—नहीं मेरे बेटे, मैं बिलकुल मजबूर हूं. तुम्हें अहसास नहीं कि मेरी क्या हालत हो रही है. उन्होंने भाई की बात काट दी और अपने फूलते हुए सांस पर बमुश्किल काबू पाते हुए बोले, मेरे लिए तुम्हारी इन तीन बहनों की पढ़ाई का बोझ ही कुछ कम नहीं है. इस पर यह दमे का मरज़ तो जैसे मुझे खा ही जायेगा. तुम समझते क्यों नहीं?

—तो अब्बाजान?

—नहीं बेटे!. नहीं, हम हालात के ऐसे मोड़ पर आ खड़े हुए हैं कि सिवाय परवरदिगार के हमारा कोई सहारा नहीं. मैं किस बिरते पर तुम्हे पढ़ने के लिए अलीगढ़ भेज दूं, मुझे मालूम है वहां जाने से तुम्हारी जिंदगी रौशन हो जायेगी मगर बेटे...

यकायक अब्बाजान को बड़ी जोर का फंदा लगा और वह खांसते-खांसते दोहरे हो गये. भाई दौड़ कर दालान में से थूकदान उठा लाये और उन्हें आहिस्ता से उसी टूटी कुर्सी पर बैठा दिया. थोड़ा-सा बलगम थूक कर वह अपनी खांसी को बराबर करने लगे. भाई ने उनकी तरफ देखा.

—मेरा मतलब है चचाजान, वह जरूर मदद करेंगे.

अब्बाजान ने गहरी नजरों से भाई की तरफ देखा जैसे कह रहे हों — मुझको जो कुछ कहना था, कह चुका, अब जो तुम्हारे दिल में आये करो.

भाई आहिस्ता-आहिस्ता कदम उठाते हुए बाहर आ गये. मैंने देखा, वह ऐनक हटा कर अपने आंसू खुश्क कर रहे थे. फिर एक लम्हे रुक कर, ऊपरी जीने की तरफ जहां अम्मा और अब्बू थे, बढ़े. ऊपर अम्मा सब से छोटे भाई शौकत को दूध पिला रही थीं और अब्बू अधलेटे-से आरामकुर्सी पर अखबार पढ़ रहे थे. भाई को देखते ही उन्होंने अखबार मेज पर डाल दिया.

—आओ बेटे!

—जी हां!! भाई आगे बढ़कर बैठ गये, चचाजान, मैं दरअसल आप से मश्वरा लेने आया था. आप जानते हैं, मुझे पढ़ने का कितना शौक है. मगर मेरा मुस्तकबिल बरबाद हुआ जा रहा है. अब्बाजान के पास इतना पैसा नहीं है कि वह मुझे कोई आला तालीम दिला सकें, मैं चाहता हूं, कुछ न कर सकूं तो कमसेकम इंजीनीयरिंग में डिप्लोमा ही कर लूं. आखिर मेरे सर पर तीन बहनों का बोझ भी तो है. आप मुझे मश्वरा दीजिए चचाजान! मैं क्या करूं? भाई की आंखों में आंसू भर आये मगर अब की बार वह उन्हें जल्दी ही पी गये. मैंने देखा सामने अम्मा ने शौकत को दूध पिलाना बंद कर दिया था और अब वह बहुत गौर से अब्बू और भाई की बातों को सुन रही थीं. अब्बू चंद लम्हों को बिलकुल खामोश रहे बल्कि इन चंद लम्हों में सब ही खामोश रहे. फिर अब्बू धीरे-धीरे बोले—मुझे इस बात का पहले से अहसास है कि भाई साहब तुम्हें आगे नहीं पढ़ा सकते, दूकान की चोरी और भाभी की मौत ने उन्हें शिकस्ता कर दिया है. फिर तीन-तीन लड़कियों का बोझ. . . .वह एक लम्हे को फिर खामोश हो गये जैसे कुछ सोच रहे हों, फिर बोले, मगर तुम्हें हिम्मत नहीं हारनी चाहिए, मेरे बच्चे अभी छोटे हैं, तुम अलीगढ़ जाने की तैयारियां करो. मैं तुम्हें पढ़ाऊंगा.

—चचाजान! मारे खुशी के भाई की जैसे बाछें खिल गयीं. उन्होंने मारे जोश के अब्बू का हाथ पकड़ लिया और उनकी आंखों में फिर वही मोतियों की झालर-सी लटक गयी. मैंने अम्मा की तरफ देखा. उनकी त्यौरियों पर मुझे बल नजर आये. उन्होंने चुपचाप दूध पीते हुए शौकत के मुंह से बोतल खींच ली— बस पी चुके दूध? आज से तुम्हें इतना ही दूध मिला करेगा वरना बाबा के रिश्तेदार क्या करेंगे... वह बोतल लेकर बड़बड़ाती हुई बावर्चीखाने की तरफ चली गयीं. दूध की बोतल मुंह से निकल जाने से शौकत रोने लगा.

अब्बू ने धीरे से भाई से कहा—तुम कुछ फिकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न करना, रुपया मैं दूंगा, जाओ अब तय्यारियां करो.

मैं पहले ही बाहर निकल आया था. अब शाम धीरे-धीरे ढल रही थी. दूर गर्ल्स स्कूल के ऊंचे-ऊंचे यूकलप्टस के पेड़ों पर धूप अटकी हुई थी. भाई धीरे से कमरे से बाहर निकले और आहिस्ता-आहिस्ता जीने उतरते हुए नीचे आंगन में आये. उसी वक्त बाहर स्कूल की गाड़ी आकर रुकी और नसीम बाजी, रुखसाना बाजी अंदर दाखिल हुईं. उनके पीछे सब के बुर्के और बस्ते थामे गुड़िया बाजी. भाई कमरे में जा चुके थे. मैं दौड़ कर गुड़िया बाजी के पास जा खड़ा हुआ.

—आपको मालूम भी है, भाई अलीगढ़ जा रहे हैं.

—ऊंह, झूठ, अब्बाजान कल ही से मना कर रहे हैं.

—सच! आज हमारे अब्बू ने कह दिया, तुम फिकर मत करो. रुपया मैं दूंगा. नसीम बाजी ने गुड़िया बाजी से अपना बुर्का ले कर तह करते हुए मेरी तरफ देखा. फिर हंस कर दाहिने हाथ से अपनी ऐनक जमाते हुए बोलीं— हट, झूठे!

—अच्छा तो आप चल कर भाई से पूछ लीजिए.

मैं जल गया और रुख्साना बाजी मेरे इस जवाब पर जोर से हंस पड़ीं.

—बेचारा, एक तो तुम्हें बता रहा है, ऊपर से तुम उसे झूठा बना रही हो. और मैं धीरे-धीरे खिसक कर रुख्साना बाजी के पास खड़ा हो गया.

★ ★

वह शाम बड़ी मनहूस थी जब भाई और अब्बू दोनों अलीगढ़ चले गये थे. अब्बू भाई का दाखला कराने गये थे. उनकी छुट्टियां भी खत्म हो गयी थीं, लिहाजा उनका उधर ही से अपनी नौकरी पर चले जाने का इरादा था. उस शाम बेहद सख्त गर्मी पड़ रही थी. आंगन में शाम ढलते ही पलंग निकल आये थे. एक पलंग पर अम्मां बैठी छालियां काटती हुई बराबर बड़बड़ाये जा रही थीं— चौबीस साल हुए मुझे इस घर में हड्डियां रिगड़ते हुए. तुम्हारे दधयाल वालों ने मेरा सब कुछ मुझसे छीन लिया. अब जो कुछ बाकी बचा है, उसको तुम्हारे अब्बू अपने भतीजे की पढ़ाई में लुटाने पर तैयार बैठे हैं. जब मैं इस घर में आई थी तो मेरी उमर चौदह साल थी. मगर मेरा ही दम था जो मैंने दिन को न दिन समझा और न रात को रात. तुम्हें क्या मालूम तुम तो शादी के आठ साल बाद पैदा हुए.

अम्मा न जाने कितनी देर तक उस दास्तान को दुहराती रहीं. मैं वहां से उठकर जीने में आकर खड़ा हो गया. फिर मैं भारी-भारी कदम उठाता

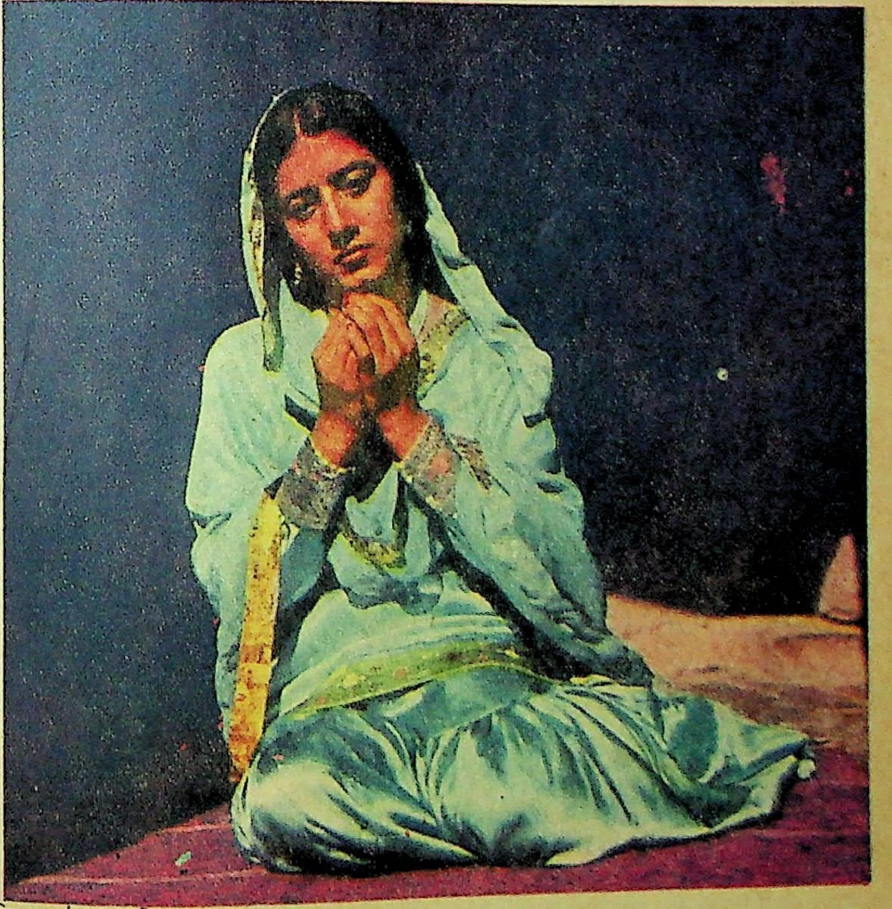

● सतीश मल्होत्रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजा जाफरी: पूरा नाम रजा अब्बास जाफरी है. इनकी कहानियों में आज के मध्यम वर्ग के शिक्षित मुस्लिम परिवारों के समक्ष उत्पन्न आर्थिक संकट का अच्छा-खासा चित्रण देखने को मिलता है.

एक-एक सीढ़ी उतरता हुआ नीचे जा पहुंचा.

मैंने देखा, अब्बाजान बावर्चीखाने में बैठे तीनों बहनों के साथ खाना खा रहे थे. जब मैं ऊपर जाने लगा तो मैंने देखा रुख्साना बाजी अपने हाथों से नल पर एक अकेली रकाबी को धो रही थीं.

गुड़िया बाजी हाथ धो कर मेरे पास आयीं——तुमने खाना खा लिया?

——अभी नहीं.

——आइये, ऊपर चलें.

और मैं गुड़िया बाजी का हाथ पकड़ कर ऊपर ले आया. अम्मा ने एक बार तिरछी नजरों से उनकी तरफ देखा मगर मुंह से कुछ नहीं बोलीं. गुड़िया बाजी बड़ी देर तक शौकत को खिलाती रहीं. थोड़ी देर बाद रुख्साना बाजी भी ऊपर आ गयीं. अम्मा थोड़ी देर तक तो ऐंठी ऐंठी-सी रहीं, फिर जब रुख्साना बाजी ने अपने स्कूल की उस्तादनियों के कहानिया किस्से सुनाना शुरू किये तो अम्मा अपने गुस्से को भूल कर हंस पड़ीं.

रात को जब चारों तरफ सन्नाटा छा जाता, जब अम्मा अपनी ससुराल वालों को जली-कटी सुनाकर और अपनी सारी जिंदगी के बर्बाद होने का मातम करके, मुंह में पान दबाकर अपने पलंग पर लेट जातीं तो मैं चुपके से उठकर धीरे-धीरे पांव धरता हुआ, जीने उतर कर नीचे आंगन में आ जाता. रुख्साना बाजी के बिस्तर पर, अपना बिस्तर छोड़ कर, गुड़िया बाजी लेटी होतीं. मैं चुपके से जाकर रुख्साना बाजी के दूसरी तरफ लेट जाता और वह मारे लाड़ के हम दोनों को अपने लंबे-लंबे बाजुओं में छुपा लेतीं और फिर गई रात तक हम दोनों को अपनी अंग्रेजी किताबों की कहानियां 'पुडिंग' और 'बडिंग लायर' सुनाया करतीं. 'पुडिंग' के हीरो लड़के की मजाकिया हरकतें वह इस तरह मजे लेकर बयान करतीं कि अंधेरी या चांदनी रात के उस सन्नाटे में हमारे कहकहे जोर जोर से गूंज जाते.

दीवाली और दशहरे की छुट्टियों में भाई आते और चले जाते. नीचे घर की हालत दिन-ब-दिन खराब होती जा रही थी. रुख्साना बाजी की फीस तो स्कूल में पूरी माफ थी मगर नसीम बाजी और गुड़िया बाजी जब अब्बाजान के आगे पंद्रह तारीख को हाथ फैलातीं तो वह मारे गुस्से के जलभुन जाते—— सारा तो खा-लिया तुम लोगों ने! अब पैसा कहां से लाऊं?

वह उस दिन घंटों चिल्लाते—— घर में खाने के लाले पड़े हैं और तुम लोगों को तालीम की पड़ी है. जिसको देखो, बड़े-बड़े ख्वाब देख रहा है. कोई जरूरत नहीं है स्कूल जाने की, जितना पढ़ना था, पढ़ चुकीं.

रुख्साना बाजी को बेतहाशा गुस्सा आ जाता— अब्बाजान! आखिर आपकी यह क्या बात है, जब हम फीस का नाम लेते हैं, आप यही कहते हैं.

——हां, मैं ठीक खफा होता हूं. पढ़ने की कतई जरूरत नहीं है. बंद करो थिरकघर जाना. वह जब इंतहाई गुस्से में होते तो स्कूल को थिरकघर कहते.

——हम वहां नाचने, रंगरेलियां मनाने जाते हैं जो आप रोकते हैं?

——बस, मैंने कह दिया, हरगिज-हरगिज जाने की जरूरत नहीं है. वह दमे के मारे उखड़ती हुई सांसों को काबू में करते हुए और खांसते हुए जवाब देते, और उसके जवाब में रुख्साना बाजी मजे से बुर्का उठा कर स्कूल चली जातीं और नसीम बाजी की आंखों में चमकते हुए मोतियों की झालर-सी तन जाती और वह नाक पोंछती हुई सबसे अंदर की कोठरी में जा पड़तीं.

मैं और गुड़िया बाजी चुपके से घर के पिछले हिस्से में चले जाते. अब्बाजान के चिल्लाने की आवाज सारे दिन गूंजती रहती. मगर दूसरे दिन उनके पास न जाने कहां से पैसे आ जाते और वह तीनों की फीस रुख्साना बाजी के हाथों में थमा देते. और इस तरह महीने भर तक तालीम फिर जारी रहती.

अम्मा ऊपर जीने में खड़ी यह सब सुना करतीं और जब मैं ऊपर जाता तो कहतीं—— न जाने इस बुड्ढे ने कहां रुपया गाड़ रखा है! जाता है और निकाल लाता है. तुम जरा घर के पिछले हिस्से में देखना, कोई गड्ढा-वड्ढा तो नजर नहीं आता.

——अच्छा, जरूर देखूंगा.

अकसर छोटी-छोटी बातों पर अम्मा और अब्बाजान में भी लड़ाई ठन जाती. वह जीने में ऊपरी हिस्से में खड़ी हो जातीं और अब्बाजान नीचे. दोनों एक दूसरे की सात पुश्तों को उखाड़ कर फेंक देते. मैं ऐसे मौकों पर थर-थर कांपने लगता और अंदर कमरे में इन आवाजों से फरार हासिल करके रोनेवाली नसीम बाजी की पीठ पर अपना सर रख कर खुद भी रोने लगता. रुख्साना बाजी ऐसे में सारे घर में टहलतीं.

मगर वह दोनों लड़ते-लड़ते दीवाने हो जाते. कभी-कभी तो नौबत हाथापायी की आ जाती. अब्बाजान गुस्से में चढ़ते हुए ऊपर तक जाते. अम्मा जीने का दरवाजा बंद कर लेतीं और अब्बाजान चीख-पुकार कर वापस आ जाते तो अम्मा अपने हाथ में पकड़ा हुआ चिमटा दरवाजा खोल कर जीने की तरफ खींच मारतीं और फिर दोनों खामोश हो जाते.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वक्त धीरे-धीरे अपनी सदियों पुरानी चाल से घिसटता रहा. अम्मा और अब्बाजान में बराबर लड़ाइयां होती रहीं. अब्बू, भाई और अब्बाजान दोनों को बराबर रुपया देते रहे. नसीम बाजी और रुख्साना बाजी दोनों सेकेंड ईयर में पहुंच गयीं. गुड़िया बाजी को अब्बाजान ने इसलिए स्कूल से उठवा लिया कि एक दिन उन्होंने किसी तवाइफ की लड़की के साथ स्कूल से आते देख लिया था. भाई ने इंजीनियरिंग डिप्लोमा फर्स्ट डिवीजन में पास कर लिया और नतीजे के चार माह बाद ही उन्हें नौकरी मिल गयी. उन्होंने अब्बाजान और बहनों को अपने पास बुलाने के लिए खत भेज दिया. अब्बाजान खुशी से फूले नहीं समाये. नसीम बाजी की आंखों में अनजानी-सी एक चमक आ गयी. रुख्साना बाजी ने सामान बांधना शिरू कर दिया. मैं सब कुछ देखता रहा. उस दिन मुझे गुड़िया बाजी कहीं नजर नहीं आयीं. मैं धीमे-धीमे कदम उठाता घर के पिछले हिस्से में बने अपने कमरे में आ गया. मेज पर किताबें बिखरी थीं. कमरा अजीब वीरान-वीरान-सा था.

—हम जा रहे हैं. . .

मैं एक दम से घूम गया. कमरे के दरवाजे पर गुड़िया बाजी खड़ी थीं. अजीब सोगवार-सी.

—खुदा हाफिज!

—ऐं?

—हां और क्या? मैंने उनकी तरफ देखा. उनकी आंखें जैसे छलकी पड़ रही थीं.

—हम एक दूसरे से इसी दिन के लिए मिले थे ना—कि आप आ कर कहें हम जा रहे हैं और मैं जवाब दूं खुदा हाफिज—है ना?

मैंने आज जिंदगी में शायद पहली बार उनकी तरफ देखा. आसमान की लामुतनाही वुस्सतों से भी गहरी बड़ी-बड़ी काली आंखें, सुतवां नाक, लरजते हुए सुर्ख-सुर्ख होंठ और उन होंठो के नीचे नाजुक-सी ठोढ़ी. मैंने देखा उनका चंपई रंग जज्बात के तलातुम से गुलनार हो रहा था.

मैं अनजाने में थोड़ा-सा आगे बढ़ आया—बोलिये ना? हम इसीलिए एक साथ रहे थे? वह बिल्कुल खामोश रहीं. सिर्फ उनके होंठ धीरे-धीरे लरजते रहे.

—गुड़िया बाजी! मैंने सरमोशी की. उन्होंने एक नजर में जाने किस तरह देखा. मुझे ऐसा लगा जैसे मैं जमीन पर नहीं, आसमान पर नहीं, खला में परवाज कर रहा हूं. मुझे नहीं मालूम कब मेरे दोनों बाजू अलग हुए और कब गुड़िया बाजी मरे सीने से आ लगीं. कितनी देर हम लोग उसी आलम में रहे, मुझे नहीं मालम. थोड़ी देर बाद मैंने उनका चेहरा उठा कर अपनी दोनों हथेलियों पर रख लिया—गुड़िया बा. . .

—शिश. . .सिर्फ गुड़िया तुम्हारी. . .

और मेरे उजाड़ और वीरान कमरे में शहद के से शीरीं वह लम्हे गुजर गये. गुड़िया ने जाते-जाते मुझसे कहा—अब तो हम जा रहे हैं मगर थोड़े दिनों बाद जब नसीम बाजी, रुख्साना बाजी का दाखला भाई के पास हो जायेगा तो मैं अब्बाजान को ले कर आ जाऊंगी.

और गुड़िया मेरे दिल में अपना घरौंदा बना कर चली गयीं. मैं दरवाजे में खड़ा सामने इमली के घने दरख्त की फुनगियों पर अटकी सूरज की टेढ़ी-मेढ़ी किरणें देखता रहा और सोचता रहा जब यह घरौंदा छोटे-से घर में तबदील होगा, जब मैं दफ्तर से लौट कर आऊंगा तो उस वक्त गुड़िया मुझे कहां मिलेंगी, मैं किस तरह अंदर जाऊंगा, उसे डरा दूंगा. नही-नहीं उसे चौंका दूंगा. . . .और. . . .

* *

मेरे ख्वाब बढ़ते गये. ख्वाबों में दिन ढलते गये, रातें गुजरती गयीं. अब्बू जब नौकरी से पेंशन ले कर आये तो मुझे ऐसा लगा जैसे मैं एक दम से बहुत बड़ा हो गया हूं. अम्मा का दिन-रात सवाल था कि अब तुम नौकरी करो. अब्बू ने साफ कह दिया कि अब मेरे पास पैसा नहीं है. मैं मजबूर हूं, हालांकि मुझे मालूम था कि अब्बू फंड का रुपया ले कर आये हैं. अब्बू ने रुपया अम्मा के हाथों में दे दिया और अम्मा उसी दिन मेरे कमरे में आयीं—मैं जानती हूं तुम्हारे दिल में जो ख्यालात पल रहे हैं. गुड़िया का एक खत गलती से मेरे पास आ गया है मगर मैं यह रिश्ता कतई नहीं होने दूंगी.

मैंने जैसे गहरे कुएं में झांक कर कहा—तो मेरी जिंदगी को क्यों अपने जज्बात पर कुरबान कर रही हैं! मेरी तालीम अधूरी है.

मगर अम्मा उठ खड़ी हुईं—मेरे पास इतना पैसा नही है. जो पैसा था, वह अहसन की पढ़ाई में खर्च हो गया. मैं तो जब जानूं वह आदमी पढ़ाई के बदले में तुमको पढ़ा दे. चिराग से चिराग जलता है.

—मगर वह अभी इस हालत में कहां है?

—ऊंह, उसको अपना फर्ज पूरा करना ही चाहिए.

और उस दिन अम्मा से पहले ही मैं अपने कमरे से बाहर निकल आया. मेरे दिल में जैसे तूफान उठ रहा था. और अब्बू सामने ही बैठे थे—क्यों अब्बू! क्या आपने भाई को इसीलिए पढ़ाया था कि उसका बदला मांगें?

अब्बू ने एक नजर मेरी तरफ देखा. फिर जाने किन ख्यालों में खो गये. मैंने देखा, अम्मा धीरे-धीरे चलती हुई आ कर उनके पीछे बैठ गयीं.

—भई देखो, ऐसा है, तुम जानते हो मेरी पेंशन हो चुकी है. अहसन का फर्ज है कि वह अपने भाइयों को आगे पढ़ायें. उन्होंने ठहरे हुए लहजे में कहा. मगर मैं समझ गया कि यह आवाज उनकी अपनी नही है. मैं वापस अपने कमरे में आ गया और टूटी हुई कुरसी में धंस गया. कमरे में, और बाहर चारों तरफ अंधेरा ही अंधेरा था. मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे यह अंधेरा मुझे निगल लेगा. अंधेरा धीरे-धीरे और बढ़ता गया मगर मैं अपनी ही जगह बैठा रहा. रात तवील होती गयी. न जाने, क्या बज गया. मेरे कमरे के सामने धीरे से एक साया लहराया—चलो ऊपर, बहुत रात हो गयी, तुमने अभी तक खाना भी नहीं खाया.

अब्बू की आवाज है. मैं गैर-इरादी तौर पर उठ कर उनके साथ हो लेता हूं.

५०, मकबरा गोलागंज, लखनऊ.

□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुस्ताख़ियां

• प्रकाश पंडित

हाड़-मांस का बना ऐसा कौन भला मानस है जो अपनी छाती पर हाथ रख कर कह सकता है कि उसने अपने बचपन, जवानी या बुढ़ापे में कभी किसी से इश्क नहीं किया? फिर भला उर्दू के अदीब और शायर इस भावना से किस प्रकार अपवादित रह सकते हैं!

● 'गालिब' एक सितमपेशा डोमनी पर आशिक हो गये थे और उन्होंने कहा था—

इश्क पर जोर नहीं है ये वो आतिश 'गालिब'
कि लगाये न लगे और बुझाये न बने

● 'दाग' कलकत्ता की एक वेश्या मुन्नीबाई 'हिजाब' पर आशिक हुए तो ७४ वर्ष की आयु तक यानी जब तक उन्होंने शरीर नहीं छोड़ा, इश्क भी नहीं छोड़ा और आज भी वेश्याएं अपने कोठों पर सबसे अधिक 'दाग' ही की गजलें गाती हैं.

● मीर तकी 'मीर' अत्तार के एक लौंडे के अलावा खां 'आरजू' की बेटी पर ऐसे आशिक हुए कि एकांतवासी हो गये. हर समय एक कोठरी में पड़े रोते रहते और उन्माद रोग में ग्रस्त हो कर उन्होंने—

दिल गया, रुसवा हुए, आखिर को सौदा हो गया
इस दो रोजा जीस्त में हम पर भी क्या-क्या हो गया.

और

सरहाने मीर के आहिस्ता बोलो
अभी टुक रोते-रोते सो गया है

ऐसे बेजोड़ शेर कहे कि 'गालिब' ऐसे स्वाभिमानी और स्वेच्छाचारी शायर को भी उनकी शेरगोयी का लोहा मानना पड़ा.

● यहां तक कि इसलामी रियासत और मर्दे-मोमिन का तसव्वुर देने वाले अलामा 'इकबाल' भी स्वयं को आशिक होने से न बचा सके; यद्यपि उन्होंने अतिया बेगम से बड़ा वेजिटेरियन किस्म का इश्क किया था और अपनी लिखी हुई कविताएं उन्हें भेंट किया करते थे.

इन आशिक हजरात की बाद की पीढ़ी के शायर और अदीब भी अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार आशिक होते रहे. 'जिगर' मुरादाबादी आशिक हुए तो शराबनोशी छोड़ दी. 'फिराक' आशिक हुए तो बड़ी संगीतधर्मी रुबाइयां कहने लगे. 'मजाज' आशिक हुए तो उनकी कलम से **'आवारा'** नामक बेपनाह नज्म का सृजन हुआ. 'साहिर' आशिक हुए तो **'ताजमहल'** के रचयिता बने और अख्तर शीरानी 'सलमा' नाम की पर्दानशीं महिला पर आशिक हुए तो **'नन्हा कासिद'**, **'ऐ इश्क कहीं ले चल'** आदि रचनाओं द्वारा उन्होंने उर्दू के सबसे पहले और बड़े रूमानी शायर की पदवी प्राप्त कर ली. और जब कृष्णचंदर सलमा सिद्दीकी पर आशिक हुए और इन पंक्तियों का लेखक दिल्ली के तीसहजारी इलाके में स्थित उनके निवास स्थान पर उनसे मिलने गया तो उस समय वह बड़ी तन्मयता से **'एक गधे की आत्मकथा'** लिख रहे थे.

और ये इश्क

उक्त सभी इश्कों की भूमिका समझिए. क्योंकि वास्तव में यह कालम 'जोश' मलीहाबादी साहब के उन अठारह इश्कों के निमित्त किया गया था जिनका जिक्र उन्होंने अपनी जीवनी **'यादों की बरात'** में बड़े चटखारे ले-ले कर किया है और जिनसे पहली नजर में इश्क हो जाने की परंपरा सिद्ध होने के साथ-साथ थोक में इश्क करने की परंपरा भी स्थापित होती है.

मेरे विचार में 'जोश' साहब ने नियमानुसार काफी सोच-विचार बल्कि अनुसंधान के बाद अपने इश्कों का संपादन किया है और इस बात का विशेष ध्यान रखा है कि इश्क एक ही प्रकार के माशूकों या माशूकाओं से न होने पायें. अतएव उनकी इस स्वलिखित जीवनी में दो विपरीत प्रकृति के लौंडों के अतिरिक्त जिन नाना प्रकार की नवयौवनाओं का जिक्र मिलता है, उनमें से एक क्रिश्चियन थी तो एक विशुद्ध अंग्रेज. एक हिंदू विद्यार्थी थी तो एक मुसलमान नवाबजादी. एक निजी सेविका तो एक वेश्या. एक लौंडी तो एक नर्स. और यहां फिर दो विपरीत प्रकृति की श्रद्धालु युवतियां—शेष माशूकाओं के नाम तो 'जोश' साहब को याद हैं लेकिन बढ़ती उम्र और ठहरी स्मरणशक्ति के कारण उनके साथ हुई प्रेमलीलाओं का विवरण वह भूल चुके हैं.

लेकिन अपने उपर्युक्त इश्कों का जो विवरण उन्होंने बयान किया है, उसमें से एक-दो को छोड़ कर शेष पर आदरवश विश्वास तो किया जा सकता है, लेकिन यह विश्वास करने को जी नहीं चाहता कि वे इश्क थे. इश्क की बजाय वे हवस के कारनामे नजर आते हैं. जरा लौंडी जहूरन का किस्सा मुलाहजा हो—

एक दिन जब गुलाबी जाड़े की नवेली सुब्ह अपने

मीर

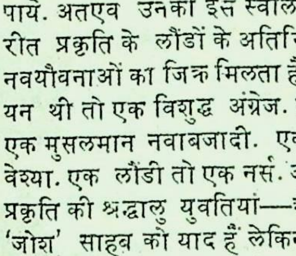

गालिब

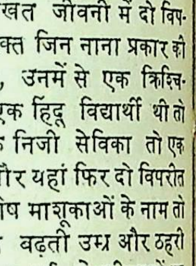

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने बिस्तर पर बैठी आंखें मल रही थी, मेरा तमाम घर हस्बे-दस्तूर महवे-ख्वाब (निद्रामग्न) था और मैं हस्बे-आदत बेदार हो कर अपनी अंगनाई की हरी-भरी नीम के नीचे खड़ा झूम रहा था कि नीम के करीब की कोठरी में रहने वाली नयी लौंडी जहूरन मेरे सामने आ कर खड़ी हो गयी और मुझे घूरने लगी. और जब मैंने देखा कि उसकी आंखों में एक नाकाबिले-फहम (अविज्ञेय) रंगीन-सी मिलगुजाहट है—उसके होंठों के उभार में एक नामालूम-सा तकाजा है और उसकी ठुड्डी तक उभरा सीना गहरी सांसों के गिरदाब (भंवर) में ऊपर-नीचे हो रहा है तो मैंने पूछा—जहूरन! क्या बात है?

उसने कहा—ऐ जरनैली टोपी के मंझले भय्या! मेरी कोठरी में जरी चले चलो तो बात बताऊं. मेरी कोठरी बड़ी गरम-गरम है.

मरव्वत के मारे इनकार न कर सका. वह आगे-आगे चली और मैं उसकी गरम-गरम सांसों में लिपटा हुआ कोठरी में दाखिल हो गया.

जहूरन ने बड़े चाव और भला के भाव के साथ कहा—मंझले भय्या! जरी लेट जाओ, मैं तुम्हारे पांव दाब दूं. मैं बड़ी मासूमियत के साथ लेट गया. उसने मुझपर रजाई डाल दी और रजाई के अंदर हाथ डाल कर बड़े जंचे-तुले अंदाज में मेरे पांव दाबने लगी. थोड़ी देर पांव दाबती रही और उसके बाद. . .मैंने तड़प कर कहा—अरे यह क्या, जहूरन? उसने अपने सीधे हाथ से मेरा मुंह बंद कर दिया और 'अरे अल्ला'-'अरे अल्ला' के नारे लगाने लगी.

'जोश' साहब ने इस घटना को इश्क के साथ-साथ ऑपरेशन कहा है—और इससे पहले भी वह एक वेश्या से इसी प्रकार का ऑपरेशन करवा चुके थे, लेकिन जिसे उन्होंने खालिस इश्क का नाम दिया है. जरा उसकी शुरुआत भी मुलाहजा हो :

मिस मेरी रोमाल्ड

एक दिन, सरेशाम हम दोनों जीना चढ़ रहे थे. वह आगे थी, मैं पीछे. उसके लवेंडर की खुश्बू मेरे वुजूद का अहाता किये हुए थी कि एकाएक उसने मुड़ कर मुझे देखा और 'ओ गॉड' कह कर जीने पर बैठ गयी और बड़े कर्ब (वेदना, व्याकुलता) के साथ अपना पेट पकड़ लिया. मैंने अंग्रेजी में पूछा—आपको क्या तकलीफ है? उसने कहा—मेरे पेट में सख्त दर्द होने लगा है. आप मुझको सहारा दे कर मेरे बेडरूम तक पहुंचा दें—ओ माई गॉड—ओ माई गॉड.

मैंने लपक कर उसकी छल्ला-सी कमर में हाथ डाल दिया और सहारा दे कर उसे उसके बेडरूम में पहुंचा दिया. वह बिस्तर पर लेट कर तड़पने लगी. मैंने कहा—मैं अभी डॉक्टर बुलाता हूं. उसने कहा—नहीं, पहले मेरा पेट सहला दें. अगर इससे अफाका न हुआ तो फिर डॉक्टर को बुला लायें.

मैं बड़े इन्हिमाक (तन्मयता) के साथ उसका पेट सहलाने लगा. उसने आंखें बंद कर लीं और ऐसा मालूम हुआ कि उसके दर्द में तखफीफ (कमी) हो रही है.

थोड़ी देर के बाद उसने आंखें खोल दीं. मुझे बड़े तशक्कुर से देखा और कहा—अगर तकलीफ न हो तो यह सामने रखी सोडे की बोतल खोल कर मुझे पिला दीजिए.

मैंने बोतल खोल कर गिलास में सोडा भरा और पेश कर दिया. वह उठ कर बैठ गयी और कहा—आप पहले इसे जरा-सा चख लें. मैंने एक घूंट पी कर गिलास उसको दे दिया. वह मेरी तरफ निगाहें उठा कर इस तरह पीने लगी, गोया सोडे के साथ-साथ मुझे भी पी रही हो.

मुझे और सोडे को पी कर उसने फिर मेरा शुक्रिया अदा किया और मुझसे कहा—मेरी मां बाहर गयी हुई है. अकेले जी घबरायेगा. थोड़ी देर और बैठ जाइए. मैं कुर्सी पर बैठ गया. उसने कहा—नहीं, मेरे बिस्तर पर बैठ जाइए. .

मैं उसके बिस्तर पर बैठ गया और उसने हजरत मसीह की बड़ी तसवीर पर, जो उसके सरहाने टंगी थी, चादर डाल दी. . .

र. कुमारी से एक और खालिस इश्क

जोश साहब कलकत्ता जा रहे थे और र. कुमारी बनारस. प्रथम श्रेणी के उस डब्बे में प्रत्यक्ष है, आम फिल्मी कहानियों की तरह उन दोनों के अतिरिक्त और कोई नहीं आ सकता था, इसलिए 'जोश' साहब बिला तकल्लुफ शराब पी रहे थे :

तीसरे जाम का एक घूंट पीने के बाद अपना बिस्तर दुरुस्त करने के बहाने से, जानबूझ कर लड़खड़ाता हुआ उठा और यह जाहिर किया कि मेरे जिस्म का तवाजुन

दाग

इकबाल

जोश

सलाम

आत्मकथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इंद्रजाल कॉमिक्स

१ अगस्त १९७५ अंक

मृत्यु के अनेक रूप

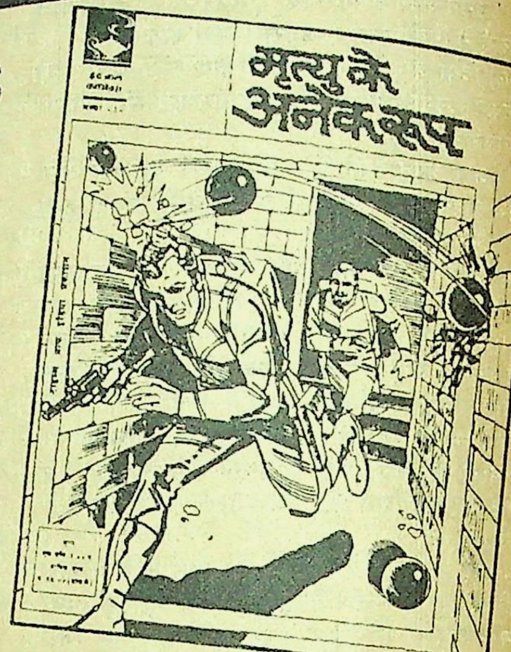

जासूसी आंखें रोबट पिछले अभियान के अवशेष खोजने में सफल हो गयीं और एर्ग ग्रह का चक्कर काटनेवाले फ़्लैश और ज़ारकोव को उनके विस्तृत चित्र भी प्राप्त हो गये. पर अभियान के चालक दल का तो उन चित्रों में नाम-निशान ही नहीं था. फ़्लैश और ज़ारकोव ने वहां के भूमिगत अड्डों का पता भी अपने उपकरण से लगा लिया, पर वे उनमें पहुंचे कैसे? चालकदल के ४१ सदस्यों के छुटकारे की यह लोमहर्षक गाथा १ अगस्त, १९७५ के इंद्रजाल कॉमिक्स में पढ़िए. इन्द्रजाल कॉमिक्स अंग्रेजी, हिंदी और बंगला में प्रकाशित होता है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(संतुलन) बिगड़ गया है. और जब तकिये सीधे करने को झुका तो एक झटके के साथ उसकी तरफ इस तरह झुक गया कि मेरे दोनों हाथ उसके सीने पर जा कर टिक गये. उसके मुंह से हलकी-सी चीख निकल गयी. मैं मुआफी तलब करता सीधा होने लगा तो उसने अपने मुलायम हाथों से मेरी दोनों कलाइयां पकड़ लीं और कहा, जल्दी से बैठ जाइए, नहीं तो गिर पड़िएगा. यह कहते ही उसने अपने पांव समेट लिये और मैं उसके बिस्तर पर बैठ गया. . .

उसने अपने बाल खोल दिये. सदरी उतार दी. घड़ी कलाई से निकाल कर सरहाने रख ली. मेरे पहलू से पहलू मिला दिया और मेरी आंखों में आंखें डाल कर कोर खटकने लगी और मैं उसके छलकते सागरे-जमाल (यौवन रूपी मदिरा पात्र) में डूब गया. . .

और अपने इसी श्रेणी के अठारह इश्कों के बारे में जोश साहब बड़े तमतराक फर्माते हैं.

'मैंने किसी आवारा या बाजारी औरत से कभी एक बार भी इश्क नहीं किया और जिंदगी में एक बार भी उनके इंतिजार में चश्मबराह और गोश बरआवाज (आंखें बिछाना तथा आवाज पर कान लगाना) बन कर नहीं बैठा. अलबत्ता इश्क को मैंने हमेशा कलेजे से लगाया, सर आंखों पर बिठाया. तड़पा, तिलमिलाया, तकिये भिगोये, पलकों में आंसू पिरोये, तारे गिने और तलवारों की धारों पर करवटें बदलीं. जानलेवा खतरों को ठोकर लगायी. मौत के सामने आंखें नहीं झपकायीं और एक दिन यहां तक हुआ कि ऐन मौनसून के हैजानी (प्रचंड) मौसम में इस बात के बावजूद कि मैं तैरना नहीं जानता, अल्लाह अकबर कह कर होकते समंदर में झम से कूद पड़ा.'

सुना है एक बार 'जोश' साहब सचमुच होकते समंदर में झम से कूद पड़े थे और लोगों ने बड़ी आसानी से उन्हें बाहर निकाल लिया था. लेकिन 'जोश' साहब गुस्ताखी मुआफ फर्माएं, सेवक को तो उनके ये इश्क बिल्कुल उसी किस्म के इश्क मालूम होते हैं जैसे किस्सा चार दरवेश के दरवेशों ने किये थे और इश्क में लुट-लुटाके और डाके की मार खाके जंगलों में जा छिपे थे. या फिर ऐसे इश्क जो स्वर्गीय सलाम मछलीशहरी साल के तीन सौ पैंस[ठ] दिनों में तीन सौ छियासठ बार किया करते थे. ज्यों [ही] दिन या रात के किसी समय किसी किस्मत की मारी लड़[की] या स्त्री से उनका सामना हुआ कि वह खटाक से उस प[र] आशिक हो गये. लखनऊ रेडियो में थे कि उनके इस आशि[क]ाना मिजाज से नावाकिफ एक लड़की ने उनकी कि[सी] कविता की प्रशंसा कर दी. प्रशंसा न भी करती तो [भी] सामने पड़ने पर सलाम साहब उस पर आशिक होने [से] बाज न आते, लेकिन उसने प्रशंसा कर ही दी तो सला[म] साहब के लिए उसी शाम अपनी उस प्रेयसी के घर जा[ना] अनिवार्य हो गया.

सलाम साहब के आदर-सत्कार के बाद इधर-उध[र] की बातों में कई घंटे निकल जाने के बावजूद जब सला[म] साहब ने वहां से सरकने का नाम न लिया, बल्कि रह-र[ह] कर दीदे मटकाने लगे, तो बेचारी प्रेयसी ने घबरा क[र] नौकर को आवाज देते हुए कहा—मेरे लिए पानी का ए[क] गिलास लाओ—जल्दी.

इससे पहले कि नौकर पानी का गिलास ला[ता] सलाम साहब लपक कर उनके बावर्चीखाने में ज[ा] पहुंचे और फ्रिज में से पानी की बोतल निकाल ला[ये] और फिर जिस अंदाज से उन्होंने गिलास में पान[ी] डाला और अपनी प्रेयसी को प्रस्तुत करते हुए उसक[ी] उंगलियों की पोरें पकड़ लीं, प्रेयसी एकदम बौखला उठ[ी] और बौखला कर उसने पुनः नौकर को आवाज द[ी] और कहा— पानी के साथ-साथ इस गिलास को भ[ी] बाहर सड़क पर फेंक दो.

कॉफी हाउस में सलाम साहब ने पूरी दास्ता[न] सुनाने के बाद आह भर कर अपने मित्र मजाज [से] कहा—न पीती, लेकिन उसे फिंकवाना नहीं चाहिए था.

जब सलाम साहब बार-बार यही वाक्य दोहरा[ते] चले गये कि भले ही वह पानी न पीती लेकिन उसे फिंक[]वाना नहीं चाहिए था, तो मजाज बोर हो कर बोले— भले मानस! न पीती, न फिंकवाती तो क्या उस[से] आबदस्त करती! □□□

एक श्रद्धांजलि

भारत भूषण अग्रवाल (जन्म : १९१९, मृत्यु : २३ जून १९७५) 'तार सप्तक' के यशस्वी कवि थे. 'छवि के बंधन', 'जागते रहो,' 'मुक्ति मार्ग,' 'सेतुबंध' आदि इनके प्रसिद्ध काव्य-संग्रह हैं. इनके अतिरिक्त 'पलायन' और 'खाई बढ़ती गयी' आदि नाटक भी लिखे हैं. आप साहित्य अकादमी के सदस्य थे. २३ जून को शिमला में आपका आकस्मिक देहावसान हो गया. हिंदी काव्य जगत आपको कभी नहीं भुला सकता. उनके असामयिक निधन पर 'सारिका' परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

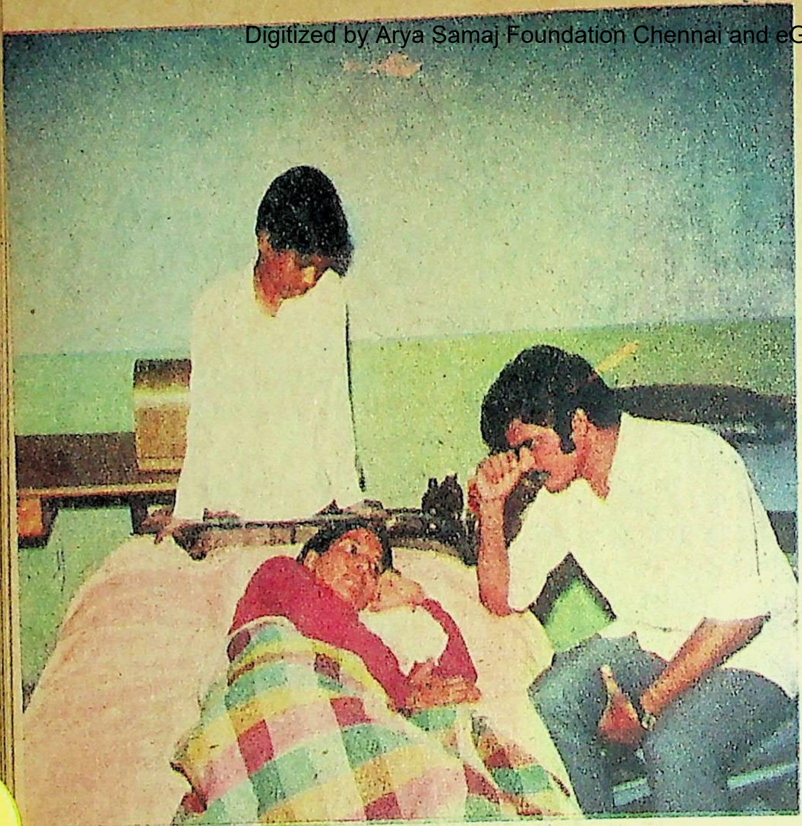

अवरोध

□ अभय

सुबह वह नुक्कड़ पर आ गया था. आज उसने काफी पहले बिस्तर छोड़ा था, हर रोज से पहले, सबसे पहले उसने बिस्तर लपेटा था. चौकी एक किनारे खड़ी कर दी थी. फिर बेड शीट को दरवाजे पर पर्दा जैसा टांग दिया था. एक घंटे के अंदर वह तैयार हो गया था. चूल्हे पर चाय चढ़ायी थी और फिर थोड़ी देर बाद चाय पी कर कमरे से बाहर निकल आया था.

वह खुश था कि डाक्टर ज्ञानेश्वर उसे समय से पहले देख कर प्रसन्न होंगे. सबसे पहले तो कल की घटना पर बातचीत होगी. फिर हर रोज की तरह देश और समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार पर बहस. सामाजिक व्यवस्था में बदलाव की आवश्यकता, इसके लिए गांवों और शहरों में राजनीतिक चेतना के प्रचार-प्रसार की बातें. फिर बात अंततः बेरोजगारी पर आ कर टिक जायेगी. और डाक्टर साहब कहेंगे 'अब आपको ही देखा जाये. आप तीन वर्षों से नौकरी की तलाश में लगे हैं. ट्यूशन कर रहे हैं. मैं पूछता हूं, सरकार को जब नौकरी नहीं देनी है तो क्यों डिग्रियां बांटती है?' अंत में वे आवाज मारी करते हुए कहेंगे, 'साहब, यह जमीन क्रांति चाहती है. खून! खून!! और उसके लिए आपके जैसे, मेरे जैसे लोगों की आवश्यकता है. लेकिन सभी ऐसा चाहें तब तो? निहित स्वार्थ वाले लोग बदलाव के मार्ग में रुकावट पैदा कर रहे हैं.' और ढेर सारी समस्याओं पर बातचीत.

उसने अपने को आश्वस्त अनुभव किया कि पूरी जानकारी के लिए डाक्टर साहब कल की घटना पर जरूर बात करेंगे. वह एक-एक बात डिटेल में बतायेगा. वह बतायेगा कि पन्नालाल की पत्नी की तबीयत कल काफी खराब थी. पन्नालाल की अनुपस्थिति में अपना दायित्व समझ कर वह डाक्टर जे. प्रसाद को ले कर आया था. डाक्टर प्रसाद ने पन्नालाल की पत्नी को देख कर कुछ दवाएं लिखी थीं और दवा का पुरजा उसके हाथ में थमा दिया था. दवा खिलाने का निर्देश पाने के बाद वह दवा की दूकान पर चला गया था. सभी दवाओं के साथ उसने रेस्टिकलीन के चार कैप्सूल मांगे थे. वह बारी-बारी से दवाओं को पुरजा से मिलाता गया था और अलग रखता गया था. अचानक उसकी नजर शीशी के भीतर चमकते कैप्सूलों पर टिक गयी थी. उसे आश्चर्य हुआ था कि चारों कैप्सूल दो-तीन रंगों के हैं, दो कैप्सूलों का रंग एक और एक का रंग अलग. उसने गौर से देखा था— कैप्सूलों का बैच नंबर एक ही था, मैन्युफैक्चरिंग डेट भी एक था, एक्सपायरी दिन भी एक ही था. तब उसके मन में यह वाजिब प्रश्न उठा था कि कैप्सूलों के रंग में अंतर क्यों है?

प्रश्न कर चुकने के बाद उसने महसूसा था कि दूकानदार के चेहरे पर थोड़ी शिकन आ गयी थी. लेकिन तुरंत अपने को संभालते हुए दूकानदार ने कहा था— आपको दवा लेनी है या नहीं? मुझे और ग्राहकों को भी तो देखना है. उसकी आवाज में थोड़ी कड़ुआहट थी और वह तेजी से पीछे स्टोर रूम में घुस गया था.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोड़ी देर बाद वह बाहर आ गया था. इस बार उसके चेहरे की घबराहट साफ नजर आयी थी. दूकान में बैठे एक मोटे आदमी के कान में उसने कुछ खुसुर-फुसुर बात की थी जिसे वह सुन नहीं सका था. मोटा आदमी पैसों का हिसाब-किताब कर रहा था. शायद वह दूकान का मालिक था. उसने हामी भरने के खयाल से दो-तीन बार अपने सर को ऊपर-नीचे किया था—लाइए मैं आपको दूसरा कैप्सूल दे रहा हूं.

उस वक्त तक वह सभी दवाओं के पैसे निकाल चुका था. उसने दूकानदार को पैसे दिये थे. रसीद ली थी और मुख्य सड़क पर आ गया था.

उस वक्त उसके मन में कई सवाल तेजी से उठे थे. ऐसा वह पिछले कई दिनों से अखबारों में पढ़ता आ रहा है—देश में जाली दवाओं की बिक्री. मिलावट की दवा खाने से चार व्यक्तियों की मृत्यु. जांच के लिए कमेटी का गठन. . .यह तो मात्र संयोग ही था कि उसकी नजर शीशी के भीतर कैप्सूलों पर चली गयी थी. वरना. . .वह तेज कदमों से मुख्य सड़क पर चल रहा था. उसने कलक्टर को इसकी सूचना दी थी और संभावना व्यक्त की थी कि दूकान के अंदर इस किस्म की कई अन्य दवाएं भी होंगी. कलक्टर ने सिविल सर्जन को बुलाकर दवा दिखवायी थी. सिविल सर्जन ने दवा को उलट-पलट कर काफी देर तक देखा था और फिर आश्वासन देते हुए कहा था कि दवा बिल्कुल ही नकली है.

फिर जांच दस्ते के द्वारा दूकान की तलाशी ली गयी थी. उस बीच वह दूकान के बाहर काउंटर पर ही खड़ा था. दूकान पर धीरे-धीरे एक मजमा लग गया था. उनके बीच से तरह-तरह की आवाजें आ रहीं थीं—जाली की जांच हो रही है?

—जी हां, नकली दवा पकड़ी गयी है.

—साब! इसका तो यह पुराना धंधा है. इसने तीन-तीन मकान खड़े कर लिये हैं.

—किसी ऐंटीकरप्शन के आदमी ने पकड़ा है.

—नहीं साहब! इसी शहर का आदमी है. चलो साले का धंधा तो बंद हुआ.

—कल ही वर्मा की पत्नी मर गयी. बेचारी ने दवा खाते ही कै शुरू कर दी थी. कै करते-करते मुंह से खून आने लगा था.

दूकान से जाली दवा की कई शीशियां जब्त कर ली गयी थीं. सब कुछ होते-होते उसका पूरा दिन गुजर गया था. उसके घर आते-आते ट्यूशन करने का भी समय निकल चुका था.

★ ★

वह जलवा की पानदूकान के पास आ गया. यहां उसने सड़क छोड़ दी. बायें हाथ थोड़ा नीचे उतर गया. सामने डाक्टर ज्ञानेश्वर का मकान था. डाक्टर उसकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे, ऐसा सोचते ही उसके कदम एक बारगी तेज हो गये. वह दरवाजे पर गया. हर रोज की तरह उसने काल बेल पर अंगुली रख दीं. अंदर घंटी की कर्र-कर्र उसे सुनायी पड़ी.

दरवाजा खुला. सामने डाक्टर साहब बैठे अपनी दाढ़ी बनाने में व्यस्त थे. उसने नमस्ते किया और प्रतीक्षा करने लगा कि डाक्टर साहब उसे बैठ जाने को कहेंगे. इस बात पर उसे कतई आश्चर्य नहीं हुआ कि डाक्टर साहब ने उसके नमस्ते का कोई जवाब नहीं दिया था. उसे आश्चर्य तब हुआ कि उसके बैठते ही झुन्नी उठ कर अंदर चली गयी.

डाक्टर साहब ने अपनी पूरी दाढ़ी में झाग फैला लिया फिर उससे पूछ बैठे—कल क्यों नहीं आये?

—दरअसल कल का पूरा दिन. . .

इसके पहले कि वह अपनी पूरी बात कह पाता, डाक्टर साहब ने अपनी आवाज कड़ी कर दी—आपको मालूम नहीं, झुन्नी की परीक्षा तीसरे ही माह में होने वाली है?

उन्होंने स्टूल पर रखी पत्रिका के एक पृष्ठ को तीन-चार टुकड़ों में फाड़ दिया. एक टुकड़ा से रेजर में लगे गंदे झाग को साफ कर उसे बाहर फेंक दिया.

इस वक्त उसने अपने को काफी कमजोर और बेवजन महसूस किया. लेकिन अपने को संभालते हुए वह तुरंत नार्मल हो गया—कल दावा वाली घटना को ले कर मैं काफी व्यस्त रहा.

—आपकी व्यस्तता से हमें क्या लेना-देना! दूसरे मास्टर रखे जा चुके हैं. मुझे आप जैसे समाज-सुधारक की आवश्यकता नहीं है. कहते हुए उन्होंने दूसरी दफा अपनी दाढ़ी में झाग फैलाया.

कुछ भी निर्णय लेने के पहले वह दरवाजे के बाहर आ गया उसने महसूस किया कि उसके निर्णय लेने और नहीं लेने में कोई सिलसिला नहीं रह गया है.

सिविल लाइन की चौड़ी सड़क पर वह भारी कदमों से चल रहा था. उसकी चाल धीमी पड़ गयी थी. वह काफी थकावट महसूस कर रहा था. लेकिन अभी उसे प्रजापति लाल के यहां जाना था. प्रजापति लाल ने बड़े-बड़े अफसरों से उसका संपर्क कराया था. अफसरों की विदाई या स्वागत-समारोह की पार्टियां प्रजापति लाल ने अपने घर पर दी थीं. बड़ी-बड़ी संस्थाओं में वह प्रजापति लाल के चलते ही जा सका था. 'प्रोग्रेसिव पीपुल्स एसोशियेशन' से ले कर 'तुलसी साहित्य परिषद' तक को प्रजापति लाल ने संरक्षण दिया था.

इस शहर में जब वह आया था, ट्यूशन का पहला मौका उसे प्रजापति लाल के यहां ही मिला था. अगर चाहते तो अपने ही कारखाने में उसे रख सकते थे, लेकिन फिलहाल कुछ दिनों के लिए उन्होंने अपनी बेटी सुषमा को पढ़ाने के लिए कहा था. तब से उसके एवज में उसे कुल पचास रुपये प्रतिमाह मिलते आ रहे हैं.

करमटोली की सड़क पर आ कर उसने एक बार समय का अंदाज लगाना चाहा. अभी आठ से अधिक नहीं बजा होगा. बहुत अधिक साढ़ेआठ. वह प्रजापति भवन के सामने आकर रुक गया. नौकर ने उसे सूचना दी—आपको साहब ने ऊपर बुलाया है. उसे लगा कि नौकर उसके लिए ही बिठाया गया हो.

प्रजापति लाल अपने कमरे में बैठे कॉफी की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संरक्षा !   संरक्षा !!   संरक्षा !!!

कृपया ध्यान दीजिए.......

रेल लाइनों को पार करने, सवारी डिब्बों के फुट-बोर्डों, छतों और बफरों पर यात्रा करने के फलस्वरूप प्रतिदिन औसतन एक व्यक्ति की मृत्यु होती है और एक व्यक्ति बुरी तरह घायल होता है।

आजकल गाड़ियाँ बहुत तेज़ रफ्तार से चलती हैं और उनकी बारंबारता भी काफ़ी अधिक रहती है। अतः असावधानी से यात्रा करना अधिक ख़तरनाक हो गया है।

आपका जीवन मूल्यवान है। इसलिए रेल लाइनों को पार करके या चलती गाड़ी में चढ़कर अथवा चलती गाड़ी से उतरकर या डिब्बों की छतों, फुट-बोर्डों आदि पर यात्रा करके अपनी जीवन-यात्रा कम मत कीजिए।

यात्रा को सुरक्षामय तथा आरामदेय बनाने में

रेलवे की सहायता कीजिए

पश्चिम रेलवे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभय (जन्म: [illegible] सितंबर, १९४८) पिछले ढाई वर्षों से अधिवक्ता हैं और एक अनियतकालिक पत्र का संपादन भी कर रहे हैं. इधर छोटी-बड़ी पत्रिकाओं में कुछ रचनाएं भी प्रकाशित हुई हैं.

चुस्कियां ले रहे थे. वह नमस्ते करने के बाद सामने की कुर्सी पर बैठ गया. वह समझ नहीं पा रहा था. कि आखिरकार बात क्या है. बात जानने के लहजे में उसने तुरंत प्रश्न किया—नहीं है क्या ?

प्रजापति लाल ने कप को टेबल पर रख दिया-- वह तो है, दरअसल मुझे ऐसे शिक्षक की आवश्यकता नहीं है जो रिक्शावालों से, दुकानदारों से लड़ता चले.

–जी, लड़ाई? मैंने. . .वह सकपका गया.

प्रजापतिलाल तमतमा गये–आपने कल दवा-दूकानदार से झगड़ा नहीं किया था? आपने उससे उधार दवा नहीं मांगी थी. उसने देने से इनकार किया तो आपने उसे गाली नहीं दी थी? मैं आपको एक प्रोग्रेसिव आदमी जानकर आपकी जीविका का प्रबंध करता चलूं और आप सबसे लड़ते रहें. मैंने दूसरा मास्टर ठीक कर लिया है.

—लेकिन . . . .

—लेकिन-वेकिन कुछ नहीं. मैंने कह दिया, मुझे आपकी आवश्यकता नहीं. इसी हरकत के चलते शरणकुमार वकील और प्रोफेसर शर्मा ने भी दूसरा शिक्षक रख लिया है.

यह सब सुनकर उसे एक सख्त झटका-सा लगा. किसी गलियारे के कुत्ते की तरह बिना कुछ भौंके उसने सब कुछ सुन लिया. उसने प्रजापति लाल को अप्रत्याशित नजरों से देखा और सड़क पर आ गया.

वह करमटोली सड़क पार कर के अखबार वाले के पास आ गया. उसने एक अखबार खरीदा. इसी शहर से प्रकाशित होनेवाला एक साप्ताहिक अखबार. अचानक उसकी निगाह ठहर गयी. . .'सासाराम, २२ सितंबर, आज यहां के एक शिक्षक श्री सोहन कुमार ने स्थानीय पंजाब मेडिकल हाल में रेस्टिकलिन के कैप्सूलों के रंगों में भिन्नता पाकर जिलाधिकारी और सिविल सर्जन को लिखित सूचना दी जिसके आधार पर दवा की कई शीशियां जब्त कर ली गयीं. इस संदर्भ में डाक्टर ज्ञानेश्वर, डा. जे. प्रसाद एवं अन्य फिजिशियनों ने अपनी राय दी है कि कैप्सूल नकली नहीं हैं बल्कि ढीले कार्क के कारण उनके रंग परिवर्तित हो गये थे.'

पढ़ते ही उसने अखबार के तमाम पृष्ठों को अपनी मुट्ठी में पूरी ताकत से भींचा और चलने की रफ्तार तेज कर दी. □□□

७४ इ, गोरक्षिणी पथ, सासाराम –८२१११५.

एक लघुकथा

राजा भोज और वृद्धा

● समीरकुमार सिन्हा

एक बार राजा भोज एवं कविराज वेष बदल कर उज्जयनी के राजप्रसाद से निकल पड़े. भ्रमण करते हुए वे काफी दूर निकल आये और लौटते वक्त रास्ता भूल गये. इसी समय उन्हें एक झोपड़ी में एक वृद्धा दिखाई दी.

दोनों ने वृद्धा के निकट पहुंच कर कहा— माता, यह मार्ग किस ओर जाता है? वृद्धा ने दोनों को देर तक गौर से देखा और फिर धीरे से बोली––यह मार्ग कहीं नहीं जाता बल्कि लोग इस पर आते-जाते हैं. हां, तुम लोग हो कौन?

––हम यात्री हैं, महाराज भोज बोले. वृद्धा बोली––यात्री तो केवल दो होते हैं. एक सूर्य और दूसरा चंद्रमा. तुम लोग यात्री कैसे हो सकते हो?

––हम क्षणभंगुर मानव हैं, बड़े सतर्क हो कर कविराज ने कहा.

––क्षणभंगुर! क्षणभंगुर तो संसार में दो ही चीजें हैं, एक यौवन और दूसरा धन.

––मैं राजा हूं, महाराजा भोज बोले.

––राजा भी केवल दो ही होते हैं. एक इंद्र और दूसरा यम, वृद्धा ने पुनः टोक दिया.

राजा और कविराज ने मन-ही-मन वृद्धा की विद्धता के सम्मुख हार मानते हुए भी उसे ऊपर से प्रकट नहीं किया और कविराज ने काफी सतर्कता के साथ कहा– हम लोग सहनशील व्यक्ति हैं.

इस पर वृद्धा बोली—सज्जनों! सहनशील भी संसार में दो ही हैं. एक पृथ्वी और दूसरी नारी.

कविराज घबड़ा गये और विनीत स्वर में बोले––माता, हम परदेशी हैं. .

वृद्धा बोली— नहीं हो सकता. परदेशी केवल दो होते हैं. एक जीविका और दूसरा वृक्ष के पत्ते . राजा भोज और कविराज ने वृद्धा के सम्मुख अपनी हार स्वीकार कर ली.

इस पर वृद्धा बोली––संसार में हारने वाले व्यक्ति भी केवल दो ही होते हैं. एक उधार लेने वाला और दूसरा कुमारी कन्या का पिता. क्यों सच-सच कहो न कौन हो तुम लोग?

राजा भोज एवं कविराज नतमस्तक खड़े थे. वृद्धा ने मुसकराते हुए कहा––तुम राजा भोज और तुम कविराज हो न? और दाहिनी ओर तर्जनी से संकेत करते हुए बोली––इधर से सीधे चले जाओ. आगे कुछ दूरी पर उज्जयनी जानेवाला राजपथ मिल जायेगा. □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रा-सी बात

नवनीत मिश्र

मई-जून की धूप की तरह यह खबर मिनटों में सारे मोहल्ले में फैल गयी कि नीरेन पांच साल की इंजीनियरिंग की पढ़ाई खत्म कर के लौट रहा है. अपने ही शहर में नौकरी मिल गयी है उसे. नीरेन के पिता अवकाश प्राप्त कर चुकने के बाद अब चैन से रहेंगे. पुश्तैनी मकान, लड़का इंजीनियर, बैंक में काफी रुपया और चाहिए भी क्या एक सुखी आदमी को. बीच-बीच में छुट्टियों में नीरेन लौटता, घर में जैसे जश्न होता. खुद अपने हाथों पका कर खिलाने का सुख उठाते... 'नीरेन आ रहा है' कपूतों के पिताओं ने डाह से सुना, सपूतों के पिताओं को एक निकट का प्रतिद्वंद्वी मिला और सीमा के सपनों को मिलीं अंगड़ाइयां. यह नीरेन नहीं कोई मौसम लौटने वाला था. किसी मौसम के शुरू होने के दिन कैसे होते हैं? पता नहीं देखने में कैसा लगेगा इतने दिनों बाद? पांच साल का समय भी तो कम नहीं होता. समय का कितना बड़ा हिस्सा बीत गया, यूं ही. क्या ऐसा नहीं हो सकता कि फिर उससे नया परिचय हो, धड़कनों की रफ्तार फिर एक बार नये वाकये की तरह तेज हो? कैसी तो मूर्ख हो गयी है, समय भी पांच साल पीछे का चाहने लगी है वह.

सामने का घर जब खाली हुआ तो मोहल्ले के शोहदों को यह चिंता खाने लगी कि अगले किरायेदार के यहां 'लगेज' है या नहीं. 'लगेज' उनका आपसी 'कोड' था किसी परिवार में किसी भी तरह फंसाई जा सकने लायक लड़की के लिए. मोहल्ले के उस हिस्से में तो फिलहाल सीमा ही माल थी, लगेज थी, सुंदर-सी लड़की थी. फिर जो परिवार आया उसमें कोई 'लगेज नहीं था. एक बूढ़े पिता के साथ उनका एक जवानी की देहलीज पर दस्तक देता हुआ लड़का नीरेन. पता नहीं कब और कैसे नीरेन सामने के घर से ज्यादा इस घर का हो गया था.

* *

—कल तुम्हारे कमरे की लाइट दो बजे तक जलती रही? एक दिन सीमा ने पूछा. 'तुम्हें कैसे पता' का भाव नीरेन के चेहरे पर छप गया.

—मेहरबानी कर के इतनी 'ब्रॉड टो' का जूता पहन कर आप मेरे सामने मत आया कीजिए. सीमा ने हाथ जोड़ कर एक दिन 'अल्टीमेटम' दिया. वह जब नराजगी जाहिर करती तो 'तुम' से 'आप' पर आ जाती.

—तुम्हें नहीं मालूम आजकल इसीका फैशन है, नीरेन ने जनसाधारण में फैले हुए प्रचलन की जानकारी [illegible]

—होगा फैशन, मुझे बड़ा वाहियात लगता है. और ये रबर सोल क्यों बनवाया है. न आने का पता और न जाने का. जूते की तेज खट् खट् से कितना 'मैनली' एफेक्ट पड़ता है, तुम्हें तो सारी बातों के लिए एक लंबा-चौड़ा भाषण देना पड़ता है. और सचमुच ही सीमा ने जोरदार भाषण दे डाला.

—क्या लेदर सोल से ही 'मैनली' एफेक्ट पड़ता है? तब तो घोड़े की टाप...और नीरेन ने बीच में ही हंसना शुरू कर दिया.

अपनी बात का यूं मजाक बनता देख सीमा का चेहरा तमतमा गया. नीरेन की हंसी पर भी एकाएक रोक लग गयी.

—अरे, मैं तो मजाक कर रहा था. मैं रबर सोल इसलिए पहनता हूं, कि जैसे मान लो मैं उस तरफ से आ रहा हूं. तुम्हारे पीछे से आ कर चुपचाप तुम्हारे सामने खड़ा हो जाऊं तो तुम चौंक जाओगी न? —नीरेन ने मनाते हुए कहा.

सीमा का सारा रोष कपूर की तरह उड़ गया—काश, एक दिन तुम मुझे ऐसे ही चौंकाते!

मगर फिर चौंक पड़ने के सुख की ओर से उदासीन बनती हुई बोली—मुझे चौंकाने के लिए आप हवाई चप्पल पहन कर आ सकते हैं. जूते में सोल चमड़े का ही लगेगा, रबर का नहीं! फर्मान जारी समझा गया.

सीमा अब मन की उन सीमाओं को पार कर रही थी,

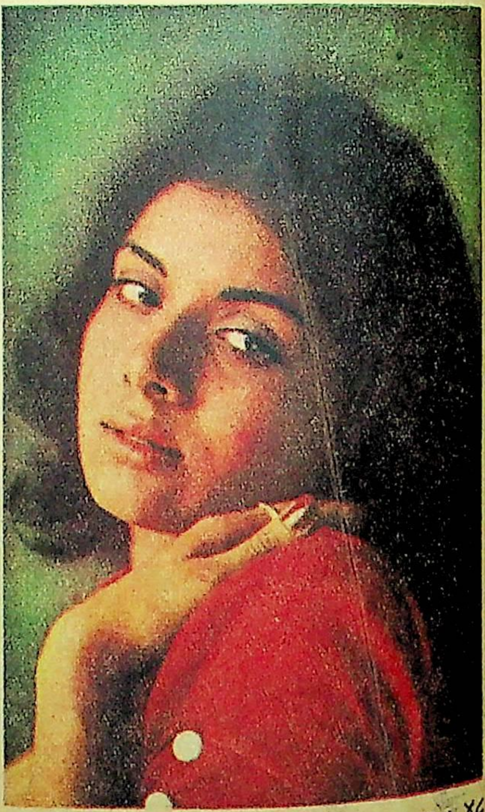

● एन. के. मदीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहां तकिये नहीं भीगते, जहां अकारण उदासी नहीं होती. मगर फिर यह सांझ ढले ही शुरू हो जाने वाली बेचैनी क्या है? क्यों किताबें एलबम बन कर रह जाती हैं? सीमा को कुछ पता नहीं!

नीरेन को सारे रिश्तों का पता है, मगर यह कौन-सा रिश्ता है? अनाम-अनजाना-सा! दिन भर उसे शाम का इंतजार क्यों रहता है. यह कैसा प्रवाह है, जिसमें वह आपादमस्तक डूब जाना चाहता है? एक ऐसी अनुभूति उसके आसपास जैसे मंडराती-सी रहती है, जिसे वह महसूस तो कर सकता है पर कितनी अव्यक्त-सी है वह. . .

ऐसी थी सीमा और ऐसा था नीरेन.

एक दिन दोनों खूब लड़े.

—तुम्हें पता है नीरेन, जब कोई जल्दी मर जाता है तो वह या तो फूल बनता है या तारा! सीमा ने उसे परियों के लोक की कहानी-सी सुनायी.

—अच्छा! नीरेन ने पत्रिका के पन्नों को पलटते हुए साधारणतया कहा.

—तुम बताओ, अगर मैं मर जाऊं तो फूल बनूं या तारा? पत्रिका को हवा में उछालते हुए सीमा ने इस उम्मीद से पूछा कि नीरेन उसके मरने पर ही राजी नहीं होगा.

—मरने के बाद की कौन जानता है! सीधा-सपाट जवाब मिला उसे.

—तुमसे यह किसने पूछा है? तुम सिर्फ इतना बताओ कि मैं फूल बनूं या तारा? सीमा को गुस्सा तो बहुत आया मगर वह पी गयी.

—अच्छा फूल बनोगी तो कौन-सा? —नीरेन ने थोड़ी दिलचस्पी दिखायी.

—जो फूल तुम्हें पसंद हो, सीमा ने उत्साहित होकर अनजाने ही सब कुछ समर्पित कर डाला.

—मुझे तो सभी फूल अच्छे लगते हैं. नीरेन ने बात को सम पर आने से पहले ही काटा. और फिर सीमा खूब रोयी. दोनों खूब लड़े. कई दिनों तक बोले भी नहीं. फिर एक दिन उन दोनों की हंसी आसमान सर पर उठा रही थी.

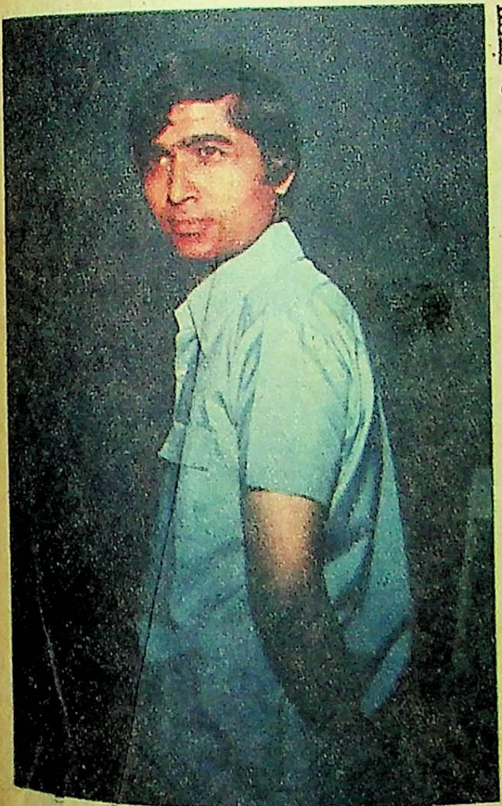

मूसलाधार वर्षा का वह तीसरा दिन था. छत की नाली से जुड़ा ड्रेन पाइप बरसात से ज्यादा शोर कर रहा था. जहां कहीं भी भर गये पानी के छोटे-छोटे-से तालों में छपाक छपाक करते मोहल्ले टोले के लड़के दुबक गये थे अपने-अपने घरों में. ऐसे में नीरेन गा रहा था धीमे-धीमे सुरों में. अपनी बांह को पानी में भिगोने के लिए उसने खिड़की के सीखचों के बाहर लटका रखा था.

—जरा जोर से गाओ न, मैं भी सुनूंगी. सीमा न जाने कब उसके पीछे आ गयी थी. . .नीरेन ने गाया था.

प्यार पर बस तो नहीं है मेरा लेकिन
ये बता दे कि तुझे प्यार करूं या न करूं. . .

सीमा सुन रही थी—एक गीत नहीं, एक सवाल. एक ऐसा सवाल, जिसके उत्तर में वह केवल मौन रह सकती थी. नीरेन गा रहा था तन्मय हो कर.

अब जाऊं? नीरेन ने धीरे से पूछा.

—जाओगे? —सीमा का मोह भंग हुआ.

—कैसा लगा गाना? नीरेन ने पूछ लिया.

—सच, कमाल कर दिया तुमने, बिल्कुल तलत की कापी कर के रख दी! सीमा ने आंखें बंद कर के फिर उन क्षणों को जीना चाहा.

—बस, सिर्फ कापी ही लगी? और कुछ नहीं? नीरेन ने एक सांस में पूछ डाला. मौन रह गयी सीमा. कैसे कहे कि गीत में उससे कही गयी सारी बातें उसके सर माथे पर.

नीरेन जा चुका था.

बाहर चले जाने पर भी नीरेन वहीं कहीं आसपास ही बना रहा. उसकी अनुपस्थिति में उसका सवाल सीमा को और भी तंग करता. 'बस, सिर्फ कापी ही लगी? और कुछ नहीं?'

सुबह से शाम हो जाती. सीमा सोचती रहती और सोचती रहती. सपने तो याद नहीं रहते, वरना कौन जाने वहां भी कोई यही सवाल करता रहा हो.

* *

नीरेन आ रहा है. पूरे पांच साल बाद वह उसे देखेगी. प्रतीक्षा की है उसने पांच साल की सारी शामों को साक्षी कर के, सारी बरसातों को यूं ही गुजर जाने दे कर. नीरेन नहीं, तो शाम क्या, बरसात क्या?. . .●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

रंग उमंग का पहला पाठ
उम्मेद वस्त्रों में
लाजवाब छबियों का ठाठ

उम्मेद—जिन्होंने अब तक दिये हैं सतरंगे
सुन्दर छपे वस्त्र . . . स्कूलों
बच्चों के ड्रेस . . . शानदार शर्टिंग . . .
अब पेश करते हैं
६७% पॉलिएस्टर ३३% कॉटन शर्टिंग
और अनेक मनभावन रंग-बिरंगे वस्त्र
साथ में कई कई रंगोंवाले
औद्योगिक धागे भी

उम्मेद

सुन्दर वस्त्रों के निर्माता
महाराजा श्री
उम्मेद मिल्स लिमिटेड
पाली—मारवाड़ (राजस्थान)

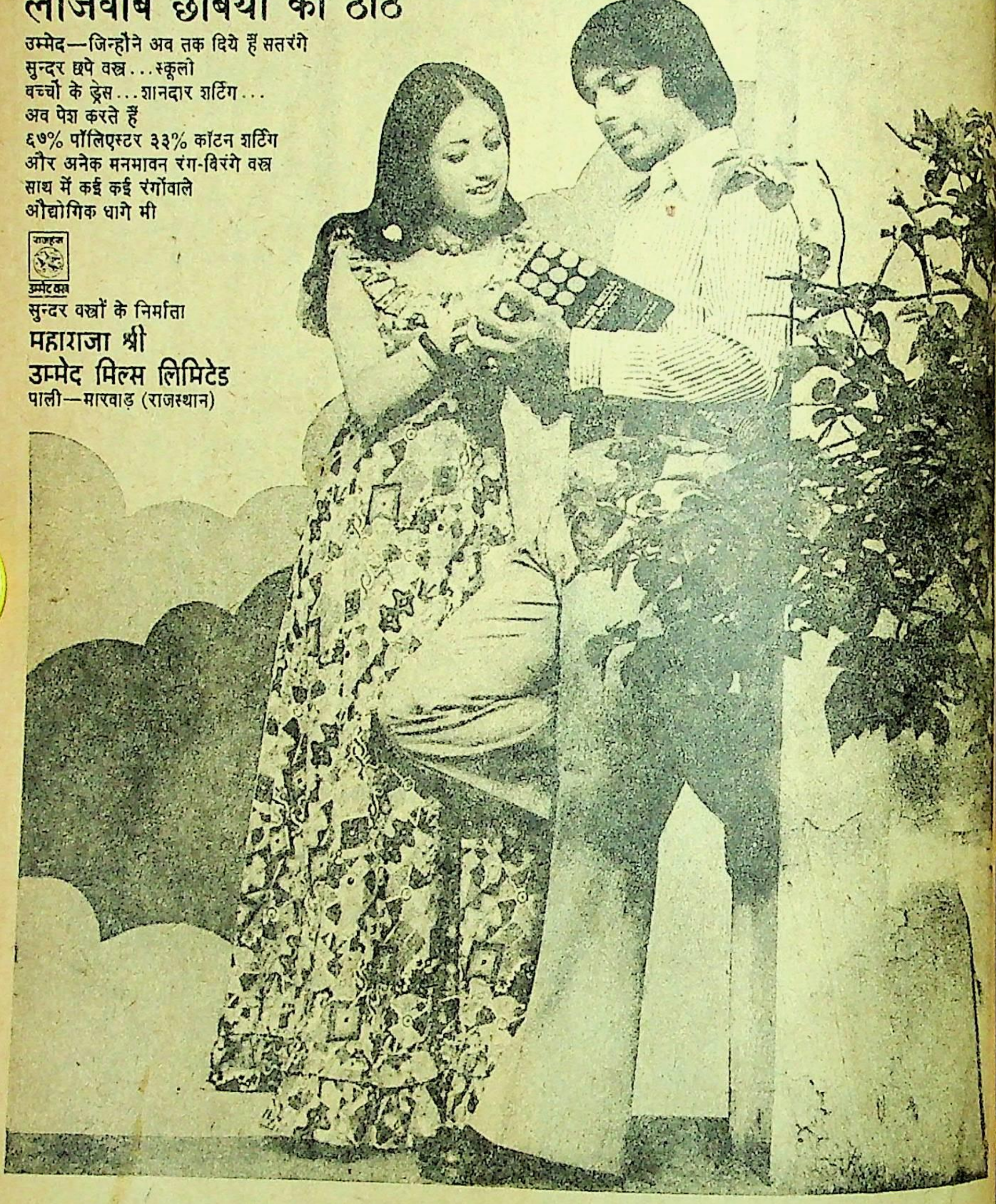

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारा कमरा चमका [illegible]
अस्तव्यस्त-सा हो रहा था सब कुछ. इतनी बेचैन वह केवल एक बार हुई है जब उसका हाई-स्कूल का रिजल्ट निकला था. तब भी वह बेकार ही ऊपर से नीचे तक सीढ़ियां चढ़ती-उतरती रही थी.

दो कदम सीढ़ियां चढ़ रहे थे.

पास की अलगनी पर सूखने के लिए फैलायी गयी धोती को उसने पर्दा बना लिया, उस पर चली गयी.

उसने धोती के, जमीन से थोड़ा ऊपर उठे हुए किनारे के ठीक पीछे देखा—'बेल-बॉटम' की पैंट के चौड़े पायचों में से दो चमकती जूतों की 'टो' झांक रही थीं.

—कैसी हो तुम? नीरेन उसके सामने था.

—तुम बताओ, और क्या कहती सीमा.

—बड़ा सन्नाटा है, कहां हैं सब लोग? नीरेन ने चारों ओर निगाहें दौड़ाते हुए सवाल किया.

—सब लोग कहीं गये हुए हैं. सीमा ने जवाब दिया.

—तुम नहीं गयीं? नीरेन ने कमीज के कालर पर अंगुली फिराते हुए कहा. सीमा कहना चाहती थी कि जब से सुना है तुम आने वाले हो, मैं घर में ही रहती हूं कि पता नहीं तुम किस दिन, कब आ जाओ. ऐसा न हो कि तुम आओ और मैं न रहूं. पर उसने कहा—हां, मैं नहीं गयी...

—अच्छा चलूं, फिर आऊंगा, नीरेन ने कदम मोड़े.

सीमा हतप्रभ-सी रह गयी—रुको, एक प्याला चाय तो पी लो.

—तीन दिन से जहां जा रहा हूं, चाय ही पी रहा हूं, बहुत हो गयी.

सीमा ऊपर से नीचे तक तड़प गयी. जिसकी पसंद का फूल बन कर वह जिसे अगले जनम तक का स्वामी बनाने की कल्पना करती रही, उसे तीन दिन बाद उसकी याद आयी.

—गाना-वाना अब भी गाते हो या नहीं? वह जानना चाहती थी कि क्या अब वह नहीं पूछेगा कि तुझे प्यार करूं या न करूं...? दिखने में सीमा रो नहीं रही थी.

—गाना-वाना तो बढ़ती का शौक है. अब तुम्हारे लिए भाभी लाने जा रहा हूं. वही आ के गायेगी. नीरेन अपने मजाक पर खुद ही हंसा और चुप हो गया.

—अच्छा भई.... व्यस्तता से उसने कमीज की बांह सरका कर कलाई पर बंधी घड़ी देखी और चल पड़ा.

सीमा ने न तो उसे रोका और न ही फूट-फूट कर रोयी. वह भाग कर अपने कमरे में भी नहीं चली गयी. इस समय उसके दिमाग में एक ही बात आयी, बेहद जरा-सी बात. कितना अच्छा होता, अगर उसने नीरेन को जिद करके चमड़े के सोल वाला जूता पहनने की आदत न डलवायी होती. कम-से-कम आज उसके दूर जाते कदमों की आवाज तो सुनायी न पड़ती.

नीरेन खट्-खट् करता हुआ सीढ़ियां उतर रहा था. □□□

कौशांबी, ३५, खुरशेद बाग, लखनऊ-२२६००४

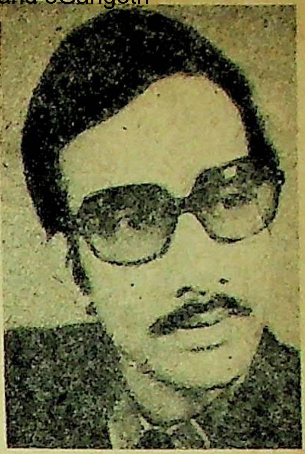

नवनीत मिश्र: हिंदी के युवा कहानीकार हैं. इन्होंने अपने आसपास की जिंदगी विशेषरूप से युवकों की रोमांसपूर्ण जिंदगी के सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर विशेष ध्यान दिया है और मूलतः उसी पक्ष को नये परिप्रेक्ष्य में रूपायित किया है.

अकाल ● कुमार सरदार हसन

मैं भी उस भीड़ में जा कर उत्सुकतावश खड़ा हो गया. उस गांव के पुर्वतन गौंतीया के घर के सामने बस्तीवालों की भीड़ जमा थी. बीच में एक निहायत कमजोर औरत एक बच्चे को जमीन में डाले बिलख-बिलख कर रो रही थी. रोते-रोते वह कहती जा रही थी—मालिक, तुमने मेरे बच्चे को जहर दे कर मार डाला. उसके साथ और दो तीन औरतें भी सिसके जा रही थीं.

गौंतीया कह रहा था—यह झूठ है, फरेब है. आप लोग सुनिए. अभी बारह बजे ये लोग मांगने आये थे. कहते थे, देश में अकाल पड़ा तो मांग कर खा-पी कर जीने के लिए देश छोड़ दर-दर भटक रहे हैं, चार दिन के भूखे हैं, बच्चे पर रहम करें. मेरे मना करने पर भी शुमा की मां नहीं मानी. इन्हें खाने को खाना दिया. और अब वह मेरे ऊपर उलटा इल्जाम लगा रही है.

—मेरा बच्चा भूख में मरा जा रहा था. मैंने सब खाना उसे खिला दिया. मेरे सामने वह छटपटा कर मर गया. तुम खूनी हो, तुम कातिल हो. मुझे मेरा बच्चा दो वर्ना मैं थाने में रपट करूंगी.

गौंतीया डर से थर थर-कांप रहा था. किसी ने कहा—कुछ दे-दिला कर मामला निपटा लो. बेकार में फंसोगे. गौंतीया ने ला कर एक-एक रुपये के दस नोट उसके आगे कर दिये.

औरत ने भूखे गिद्ध की तरह उन नोटों को झपट लिया. उसकी आंखों में एक चमक-सी उभरी. फिर वह बच्चे को वहीं छोड़, कहीं फिकवा देना, कह उठ कर चली गयी! □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक और महाश्वेता

□ रामनारायण सिंह चौहान

वाराणसी के मणिकर्णिका घाट पर जो चिता इस समय जल रही है, उसी में महाश्वेता का शव जल रहा है. जब महाश्वेता का शव घाट पर आया था, उसके कुछ समय पहले से ही मैं यहीं हूं. मेरी आंखों के सामने ही शव को आंशिक रूप में अनावृत कर उसे गंगा-स्नान कराया गया था. मेरे साथ जिन सहस्र-सहस्र उपासकों ने उस समय महावेता का शव देखा था, वे सभी महाश्वेता के शरीर-सौंदर्य को देख कर हतप्रभ थे. उस समय संगमरमर की अखंड चट्टान को तराश कर गढ़े हुए उस सौंदर्य-शव के जीवन की दिव्यता का स्मरण कर सबकी आंखों में अश्रु छलक आये थे.

संक्षिप्त में महाश्वेता के जीवन की कहानी यह है :—

किसी समय दालमंडी में महानंद भट्ट की प्रसाधन की एक छोटी-सी दुकान थी. सांझ के युवा होते ही नगर के युवा श्रेष्ठीजन इस गली में मनोरंजन के लिए विचरण करने लगते थे. महानंद भट्ट की दुकान यद्यपि बहुत छोटी थी, किंतु प्रसाधन-सामग्रियों की बिक्री अच्छी हो जाती थी और लाभांश से भट्ट महोदय के निर्वाह की गाड़ी सरलता से चल रही थी. कहा जाता है कि महाश्वेता भी किसी स्वर्गीया वेश्या की ही पुत्री थी, जिसे जन्म की अवस्था से ही महानंद ने गोद ले लिया था. महानंद भट्ट संस्कृत के पंडित तथा कर्मकांडी ब्राह्मण थे. अतः उनके धार्मिक संस्कारों का उत्तराधिकार महाश्वेता को भी प्राप्त था. दस वर्ष की अवस्था में ही महाश्वेता ने दसवीं कक्षा की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की थी. महानंद भट्ट अपनी पुत्री को संस्कृत की विदुषी बनाना चाहते थे इसीलिए महाश्वेता को अधिकांश समय संस्कृत ग्रंथों के अध्ययन में लगाना पड़ता था. कई बार महानंद की अनुपस्थिति में स्नान और ध्यान पूजा करने के पश्चात् जब महाश्वेता दुकान पर बैठती, तो उसके रूप-लावण्य की पवित्रता से वह प्रसाधन की दुकान भी मंदिर की पवित्रता से भर जाती. महाश्वेता के रूप-वैभव को, उस सौंदर्य की हाट में भी पवित्रता की अलौकिक प्रतिष्ठा प्राप्त थी. गली सौंदर्य-जौहरियों से भरी रहती, किंतु महाश्वेता के रूप-दर्पण में अपने अस्तित्व को निहार कर सब में श्रद्धा का भाव पैदा हो जाता था.

अभी महाश्वेता की देह केवल सोलह वर्ष की थी, किंतु उसकी विद्वता और उसके महान आत्म-ज्ञान का यश भगवान् शंकर की नगरी काशी भर में निर्विवाद हो चुका था. इसी समय महानंद भट्ट उस नाव पर से फिसल कर महासागर की अतल गहराइयों में डूब गये, जिस पर बैठी हुई अकेली महाश्वेता निश्चिंत होकर यात्रा कर रही थी. आज ही की तरह उस दिन भी इसी मणिकर्णिका घाट पर महानंद के शव की चिता जलते समय जिन्होंने प्रशांत एवं अथाह वेदना की प्रतिमूर्ति के रूप में महाश्वेता को देखा था, उन सबकी आंखों में आंसुओं की भीड़ लगी थी.

बापू के शरीरांत के बाद महाश्वेता नियमित रूप से गंगा-स्नान के लिए जाने लगी. उसकी धार्मिक आस्थाओं में गहराइयां और ऊंचाइयां समाहित होने लगीं. उस समय हरिश्चंद्र घाट को जानेवाली गली में एक विशाल मंदिर था. मंदिर के साथ एक बड़ा-सा आंगन था. प्रातः से ही एक महात्मा प्रवचन करते. आते-जाते महाश्वेता जिज्ञासावश सब देखती रहती. कई दिनों से एक अंग्रेज साधक को भी उस मंदिर में जाते देखकर महाश्वेता की जिज्ञासा में वृद्धि हो गयी. एक दिन जब वह गंगा-स्नान कर लौटी रही थीं, और अंग्रेज साधक मंदिर में प्रवेश कर रहा था, तब भी वह अपने पांव न रोक सकीं और उसके बाद वह नित्य उस मंदिर में जाने लगी.

कुछ दिनों में अंग्रेज साधक से महाश्वेता की मित्रता हो गयी. समाजशास्त्र में वह पी.एच.डी. था. भारत आने से पूर्व वह दुनिया के अनेक देशों का भ्रमण कर चुका था. उसे दुनिया के अनेक देशों के धर्मों का व्यापक ज्ञान था. हिंदू धर्म और संस्कृति में अपनी प्रगाढ़ आस्था के कारण उसने अपना नाम अच्युत रख लिया था. इस समय वह सारनाथ की एक धर्मशाला में रहता था. मित्रता हो जाने पर महाश्वेता से वह घंटों धर्म और जीवन के गूढ़ विषयों पर वार्ता करता . कई बार महाश्वेता उसके साथ सारनाथ चली जाती और कई बार कई-कई दिन अच्युत के साथ ठहरती भी.

एक दिन सूर्यास्त से पूर्व महाश्वेता और अच्युत बौद्ध-मंदिर के पीछे लॉन की झाड़ी की छाया में बैठे जो बातें कर रहे थे, उन बातों का संबंध धर्म तथा जीवन से उतना न था, जितना कि शरीर से.

—महाश्वेता , मैं तो यह जानना चाहता हूं कि स्त्री के पास पुरुष के लिए जो जीवनात्मक शुभ कामनाएं हैं, उनका उपभोग वासना के कीचड़ में फंसे बिना पुरुष कैसे प्र प्त कर सकता है ?

—क्या तुम मानते हो कि वासना की या वासना से कुछ पाया जा सकता है?

—लेकिन उससे आनंद की सृष्टि तो होती है.

—ऐसा लगता ही है. जिनमें महानंद और परमानंद की अनुभूति को प्रवेश नहीं मिलता, वे अवश्य ऐसे शारीरिक आनंद की चिता में जलते हैं. यह नहीं कहती कि शरीर किसी विकार का ही परिणाम है, लेकिन निरा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र की स्थितियां और उनके आनंद, आकार के आनंद दिव्य हैं—ऐसा शरीर तथा प्राण के अध्ययन से भी प्रमाणित है.

—मेरे लिए तो यही परमानंद की बात है कि महाश्वेता को समझना जितना कठिन है, उसके विचार को समझना उतना ही सरल है. लेकिन महाश्वेता, मेरा मन भिन्न है. जो पुरुष, नारी को पोषणात्मक प्यार प्रदान करता है, वह अपनी इच्छाओं के लिए उसका शोषण क्यों करता है?

—इसमें पुरुष या नारी का कोई अपराध नहीं है. यह अपराध भी शरीर का स्वभाव है. जो स्त्री-पुरुष जहां तक शरीर का जीवन जीते हैं, उनके लिए वहां तक पारस्परिक पोषण और शोषण दोनों ही अनिवार्य हैं. पोषण के बिना शोषण संभव नहीं और शोषण के लिए पोषण अनिवार्य है.

—महाश्वेता, आप तो प्रश्न के मूल अर्थ को ही बदल देती हैं. मैं जानता हूं, आपके विराट् ज्ञान के लिए यह सब कितना सरल है. थोड़ी देर के लिए मुझे कुछ अपने संबंध में बतायें.

महाश्वेता के अधरों पर सहज मुसकान की अरुणाभा छहर गयी. उसने कहा—मैं जानती हूं कि अच्युत महाराज, च्युत होने का मार्ग खोज रहे हैं. उदाहरण के लिए हमारे साथ एक स्थिति है. मैं प्रायः तुम्हारे साथ रहती हूं. तुम्हारी व्यवस्था से अन्न-जल भी प्राप्त करती हूं. इस प्रकार तुम मेरा पोषण करते हो. हमारी मित्रता भी बड़ी विश्वसनीय है. क्या तुम मानते हो कि तुम्हारे पोषण प्रदान करने के कार्य में किसी प्रकार के शोषण का भाव नहीं है?

अच्युत आश्चर्य से महाश्वेता की सहज मुखाकृति को ताकता रह गया. कहा—ऐसा कुछ तो मैं अनुभव नहीं करता. यह असत्य है.

महाश्वेता हंसने लगीं—असत्य नहीं है, अच्युत! क्या यह असत्य है कि तुम मेरे सान्निध्य से सुखी होते हो? तुम्हारी दृष्टि निरन्तर मेरे रूप-सौंदर्य को निहारना चाहती है? मेरे प्रति तुम्हारे मन में जो आदर है, वह केवल मेरे ज्ञान के लिए नहीं, वरन शरीर के लिए ही अधिक है! तुमने ज्ञान की हजारों पुस्तकों का अध्ययन किया है, लेकिन किसी भी ग्रंथ को तुमने इतना प्यार नहीं किया, जितना मुझे करते हो.

अच्युत अवाक् था और सन्नाटे के विवर्तों में वातावरण डूबने ही वाला था कि महाश्वेता ने आगे कहा—तुम्हारी निराशा भी तुम्हारे शरीर का स्वभाव है, अपराध नहीं है. आज पूर्णिमा है. गंगाजी में जल-विहार करेंगे. वहीं बातें होंगी.

मणिकर्णिका घाट से गंगाजी के किनारे-किनारे चल कर जब महाश्वेता और अच्युत हरिश्चंद्र घाट पर पहुंचे, तब पचास से अधिक साधु-संन्यासी उनके पीछे चलने लगे थे. महाश्वेता एक ऊंची सोपान पर बैठ गयी थीं. नीचे की सोपान पर अच्युत बैठ गया और उनके नीचे की समूची सीढ़ियों पर उपासकों की भीड़ बैठ गयी. समाचार पाकर राधाकृष्ण मंदिर के बड़े पुजारी शिवानंद महाराज भी आये और महाश्वेता को प्रणाम कर अच्युत के पास बैठ गये. उन्होंने बड़ी विनम्रता से प्रार्थना की—बहुत दिनों बात महामाया ने कृपा की है. आज मंदिर में विश्राम कर उपासकों को आशीर्वाद प्रदान करें.

• ब्रह्मदेव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाश्वेता ने कहा—शिवानंदजी, आपका अनुरोध अवश्य पूरा करती, लेकिन आज आपके भक्त अच्युत के शरीर का प्रश्न है. उसके शारीरिक विकार गति पाने के लिए व्याकुल हैं. कुछ करना पड़ेगा. किसीसे एक नाव लाने के लिए कह दें. वहीं अच्युत से बात भी होगी और विश्राम भी.

किनारे लगी नाव के श्वेतासन पर महाश्वेता के बैठते ही भक्तों की भीड़ में चरण स्पर्श करने की होड़ लग गयी और 'जय महामाया' के ऊंचे स्वरों से वातावरण पुलकित हो उठा. अच्युत के नाव में चढ़ने के बाद संकेत पा कर नाविक ने नाव को धार की ओर बढ़ाया. तब भक्तों की भीड़ और भी ऊंचे स्वर से 'जय महामाया' के उद्घोष करने लगी.

विगत शीतकाल में जो विश्वधर्म-सम्मेलन टाऊन हाल के विशाल प्रांगण में हुआ था और जिसमें अस्सी देशों के धर्मगुरु एकत्र थे, उसमें उद्घाटन भाषण महाश्वेता ने दिया था. महाश्वेता का उद्घाटन भाषण पांच घंटे में समाप्त हुआ था और धर्म-इतिहास में यह दूसरी घटना थी, जब देश-विदेश के दो लाख से अधिक धर्म-प्रेमियों ने पूर्ण एकाग्रता से इतने लंबे भाषण को सुना था. इसी धर्म-भाषण का प्रभाव था कि विश्व-धर्म सम्मेलन ने अपने अंतिम सातवें दिन के कार्यक्रम में एक नया कार्यक्रम भी सम्मिलित कर लिया था—महाश्वेता को 'महामाया' की उपाधि से सम्मानित करने का.

गंगा के निर्मल प्रशांत प्रवाह पर पूर्णिमा की रजत चांदनी फैली हुई थी. महाश्वेता दक्षिण की ओर सुदूर तक फैले जल-विस्तार को निहार रही थी. अच्युत ने मौन भंग किया—महाश्वेता, मैं चाहता हूं कि आप अपनी स्त्री के संबंध में भी विचार करें.

—मैं जिनकी स्त्री हूं, वे ही मेरी स्त्री के संबंध में भी विचार करें. लेकिन मैं किसी पुरुष की स्त्री नहीं हूं. मैं तो शक्ति की स्त्री हूं. शक्तियां मेरी स्त्री के संबंध में विचार करती हैं. मैं शक्तियों के रूप में अपनी स्त्री का विचार करती हूं. तुम मेरी शक्तियों को मेरी स्त्री से अलग कैसे करोगे?

—मैं प्रार्थना करूंगा कि आप करें.

महाश्वेता श्वेतासन पर रखी ऊंची तकिया के सहारे लेट गयी. अच्युत काठ की छोटी चौकी पर बैठा था. अच्युत की प्रार्थना सुन कर महाश्वेता हंसने लगी. कहा—मां अपनी संतान को वही देना चाहती है, जो उसके कल्याण के लिए सर्वोत्तम है.

—क्या संतान सदैव पाना ही चाहती है, देना नहीं चाहती?

—नहीं, लेकिन मां को देने योग्य उसके पास आकार में कुछ नहीं होता. संतान के शरीर तथा ज्ञान के लिए यह असंभव है.

अच्युत की आंखों में आंसू छलक आये. वह जानता ही नहीं था कि जीवन का आत्म-प्रवाह ऐसी ऊंचाइयों पर भी प्रवाहित होता है. उसने एक क्षण को नाविक की ओर देखा, जो शीतल वायु की थपकियों में निद्रा गया था. तब अच्युत ने कहा—महाश्वेता के लि[illegible] भी अगम्य नहीं है. मां के पवित्र हृदय में भी संता[illegible] लिए इतनी महान कल्याण-कामनाएं हैं, तो भी क[illegible] समय में संतान की वासनात्मक तृप्ति के लिए [illegible] होती है.

महाश्वेता ने कहा—अच्युत, मां निरंतर शक्ति[illegible] साधना की प्रतीक है. संसार की असंख्य स्त्रियां [illegible] तरह मां नहीं हैं, जिस तरह असंख्य पुरुषों में ए[illegible] पिता नहीं है. संसार में तो मां और पिता के [illegible] उनकी भौतिक स्थितियां हैं, स्वरूप हैं, साम[illegible] परिवेश हैं और सामाजिक मान्यताएं हैं. एक बात [illegible] कहूंगी—वासना अभाव की प्रतिक्रिया है. वास[illegible] शारीरिक है. अतः शरीर-सौंदर्य में जिस सीमा [illegible] अभाव है, वासना उसी सीमा तक विकसित होती [illegible] कुरूपता ही वासना के लिए वरदान है. जो सर्वांग [illegible] हैं, उसके प्रति किसीके मन में वासना नहीं पैदा होती.

अच्युत शांत और गंभीर था. दो क्षणों के बाद पू[illegible] आपके प्रति क्या किसी के भी मन में मोह नहीं है [illegible] वासनात्मक?

महाश्वेता की मुखाकृति पर और उसके श्वेत व[illegible] पर स्निग्ध ज्योत्स्ना की किरणें फैली थीं. सहज [illegible] कान के साथ महाश्वेता ने कहा—अच्युत, मेरे [illegible] किसी पुरुष के मन में यदि सच्ची वासना संभव हो[illegible] तो वह एक ही क्यों होता और तब क्या शरीर-सौं[illegible] तथा प्राण-सौंदर्य का इतना विराट् वैभव ले कर [illegible] तुम्हारे साथ इस एकांत में निश्चिंत लेटी रहती? तब [illegible] दोनों ओर से हिंसात्मक प्रतिशोध प्रारंभ होते.

तब देर तक अच्युत के मौन रहने पर महाश्वेता [illegible] कहा—अच्युत, भारत में मूर्ति-पूजा का रहस्य भी [illegible] है. इसलिए भारतीय धर्मों में कलाओं को उचित प्रतिष्ठा [illegible] प्राप्त है. यही भारतीय संस्कृति की विशिष्टता है.

अच्युत और अधिक इस निरानंद स्थिति में रह[illegible] नहीं चाहता था. उसने दुखी हो कर कहा—महाश्वेता [illegible] की आज्ञा हो तो नाविक को जगा कर पार चला जा[illegible]

—समय क्या हुआ है?

अच्युत ने घड़ी देख कर बताया—दो बजने वाले हैं.

—ठीक है. नाविक से कह दो, नाव को राजघा[illegible] के निकट ले चले. वहां भीड़ नहीं होगी. आज भी पैदल ही चलेंगे.

* *

उस दिन सारनाथ की सड़कों पर अतिरिक्त सज्जा[illegible] तथा भीड़ थी. जापान और थाईलैंड के राजदूत विशेष [illegible] रूप से भगवान् बुद्ध के महानिर्वाण-दिवस पर सारनाथ [illegible] आने वाले थे. दिन के पांच बजे अच्युत ने कक्ष में प्रवेश [illegible] कर विश्राम कर रही महाश्वेता को सूचित किया—बौद्ध [illegible] मंदिर में महती धर्म-सभा का आयोजन है- देश [illegible] आयोजन के संयोजक श्री मेधकर आपसे सभा में [illegible] पधारने की प्रार्थना करने आये हैं.

—अच्युत, उन्हें सूचित कर दो कि हम आ रहे हैं.

साढ़े पांच के लगभग जब महाश्वेता कक्ष से बाहर निकली, तब अच्युत उनकी प्रतीक्षा ही कर रहा था.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाश्वेता को देखकर अच्युत ने कहा——चलिये, कुछ विलंब हो गया है.

बौद्ध मंदिर के सामने ही बने विशाल एवं भव्य पांडाल के धवल मंच पर उस समय देश-विदेश के राजनयिक तथा विद्वान धर्मगुरु विराजमान थे. कार्यक्रम प्रारंभ हो चुका था. महाश्वेता ने बीच के लाल वस्त्र से ढके संकीर्ण पथ से जैसे ही पांडाल में प्रवेश किया, "महामाया की जय" के ऊंचे उद्घोषों से कार्यक्रम स्थगित हो गया. यद्यपि महाश्वेता ने भाषण देने की प्रार्थना को पहले ही अस्वीकार कर दिया था, किंतु श्रोताओं की हार्दिक इच्छा के कारण भिक्षु मेधंकर ने माइक पर खड़े होकर एक विशेष प्रार्थना की——यह सौभाग्य की बात है कि परमपूज्य महामाया हमारे मंच पर विराजमान हैं. सभा में उपस्थिति सभी विद्वान श्रोताओं की आकांक्षा एवं प्रार्थना है कि वे अपनी परम पुनीत कृपा कर सभी को आशीर्वाद प्रदान करें–परमपूज्य मातेश्वरी महामाया!

तब देर तक सभा की करतल-ध्वनियों से वातावरण उल्लासमय बना रहा. तभी भिक्षु मेधंकर ने माइक ले जाकर महाश्वेता के सामने रख दिया.

–मेरी आत्माओं, जीवन-धर्म की प्रतिष्ठाओं के लिए गौतम ने जितने प्रयोग किये, उतने किसी अन्य से नहीं हुए. उनमें अहिंसा की अद्भुत शक्ति थी इसीलिए अशोक और अंगुलिमाल जैसे दुर्दांत व्यक्ति भी उनके उपासक बने. उन्होंने ब्रह्मचर्य की महत्ता को भी आचरण से व्यावहारिक बनाने के प्रयोग किये. इसीलिए उन्होंने महिलाओं को भी दीक्षित करने की स्वीकृति प्रदान की. भिक्षु और भिक्षुणिओं को साथ-साथ रहने की स्वीकृति भी उन्होंने दी. यह एक अद्भुत प्रयोग था क्योंकि शरीर-धर्म के लिए यह प्रयोग सहज नहीं था. इसीलिए बौद्ध-विहारों में भ्रष्टाचार फैला और बौद्ध धर्म का यश कलंकित भी हुआ. शरीर में काम, क्रोध, मद, लोभ आदि जो विकार हैं, उनमें काम ही एक अनिवार्य तत्व है. पचीस वर्ष के बाद भी यदि कामशून्य जीवन इस संसार में रहता है, तो मानना चाहिए कि वह काममुक्त नहीं है. उसका ब्रह्मचर्य व्रत कहीं न कहीं से खंडित है. पूर्णत: काममुक्त शरीर पचीस वर्ष की अवस्था में ही अपनी जीवन-साधना की उपलब्धियों से उस विराट् एवं दिव्य महाबिंदु पर स्थिर हो जाता है, जहां रहने के लिए उसकी भौतिक देह का विनाश अनिवार्य होता है. और इस परिणाम का मुख्य कारण यह है कि ब्रह्मचर्य की साधनाशील देह में इन पचीस वर्षों में जो विराट् आत्मशक्ति उत्पन्न होती है, वह भौतिक शरीर के लिए ही महागरल बन जाती है. यह महागरल काममुक्त शरीर के लिए अमोघ रूप से विनाशकारी बन जाता है, जब उसे किसी प्रत्यक्ष वासना की अनुभूति होती है या कोई अप्रत्यक्ष वासना उसे स्पर्श करती है. जो भी आत्माएं ऐसे योग की साधना करें, उन्हें वासना से मुक्त होने में प्रयास करने से पूर्व अपने शारीरिक सौंदर्य तथा स्त्री के सर्वांग सौंदर्य को परखने वाली विविक दृष्टि के बीच अभाव की स्थिति को समाप्त कर लेना

रामनारायण सिंह चौहान: युवा कथाकार हैं. इन्होंने युवा वर्ग की समस्याओं और उलझी हुई मानसिकताओं को अपनी कहानियों का माध्यम बनाया है. इनके पात्र परंपराओं में जकड़े हुए लोग हैं जो उनसे मुक्ति की तलाश में भटक रहे हैं.

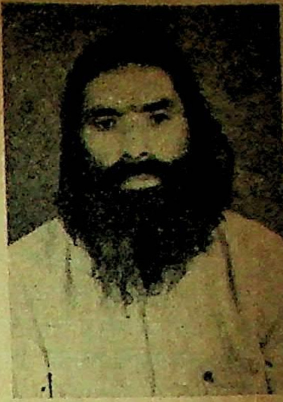

चाहिए. आप सब सुखी हों, आत्मसौंदर्यमय हों और जीवनधर्म के वाहक बनें!

महाश्वेता के उद्बोधन के पश्चात बड़ी देर तक सभा करतल-ध्वनि करती रही.

* *

कई दिनों से अच्युत बहुत उदास है. वह निरंतर महाश्वेता के संबंध में विचार करता है. उसने भारतीय धर्म, दर्शन एवं संस्कृति का गहन अध्यन अवश्य किया है किंतु ज्ञान की योग दृष्टि से भी जब वह महाश्वेता के सौंदर्य-शरीर को देखता है, तब उसे आश्चर्य एवं दिव्यता के अतिरिक्त कुछ अनुभव नहीं होता. कभी-कभी वह अपना ही प्रश्नकर्त्ता बन जाता है, किंतु प्रश्न करता है महाश्वेता के संबंध में. बौद्ध सभा के पश्चात महाश्वेता के इस विचार से वह बहुत चिंतित है कि पूर्ण काममुक्त शरीर के लिए पचीस वर्ष से अधिक इस संसार में रहना असंभव है.

एक दिन संध्य मय जब अच्युत, महाश्वेता के साथ बौद्ध मंदिर के उत्तर की बाटिका में टहल रहा था, तब महाश्वेता के सहज एवं प्रसन्न अनुभव कर उसने पूछा—इस समय महाश्वेता की शारीरिक अवस्था क्या है?

महाश्वेता ने हंसते हुए एक हाथ ऊपर को उठाया और आम्र पल्लव से एक पत्ती तोड़ कर उसे अधर के सिरे पर टिकाते हुए कहा–पचीस वर्ष पूरे होने में केवल तीन माह शेष हैं. कुशल तो है?

——महाश्वेता ने बौद्ध सभा में काम-मुक्त शरीर के जीवन की एक सीमा का उल्लेख किया था. तभी लाखों भक्त चिंतित हैं.

महाश्वेता सहज ही हंसती रही. कहा–सीमा तो है, लेकिन मेरे शरीर से उस अवधि का कोई संबंध नहीं है. क्या आज की एकादशी के महाश्वेता के संबंध में तुम कुछ जानते हो?

अच्युत ने कह दिया –नहीं, मुझे ऐसा कुछ ज्ञात नहीं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाश्वेता ने कहा—इस एकादशी की महिमा यह है कि आज की तिथि के उत्तरार्द्ध में जिनका शरीरांत होगा, वे महानिर्वाण के अधिकारी होंगे.

लेकिन अच्युत का ध्यान फिर भी महाश्वेता के 'काममुक्त शरीर' वाले विचार पर ही केंद्रित रहा. उसने साश्चर्य कहा—महाश्वेता के मुंह से यह मैं क्या सुन रहा हूं?

——यह इसलिए कि मैंने कामयुक्त होने की कोई साधना नहीं की. मुझे तो शरीर-सौंदर्य का वैभव ही इतना संपूर्ण मिला है कि उसका ऐसी इच्छा से संबंध ही नहीं बना. मुझ जैसा सौंदर्य संपूर्ण पुरुष यदि कहीं होता, तो संभव था कि मुझमें भी वासना किसी न किसी रूप में जनम जाती.

अच्युत चुप रह गया. आगे उसने कोई प्रश्न नहीं किया. कुछ देर टहलने के बाद महाश्वेता के साथ अच्युत वापस आ गया.

भोजनोपरांत, रात देर तक, अच्युत महाश्वेता के कक्ष में ही बैठा रहा. शांत और गंभीर. महाश्वेता शयनासन पर लेटे-लेटे कोई पुस्तक पढ़ रही थी. नींद का अनुभव होने पर महाश्वेता ने कहा—अच्युत, अब मुझे नींद आ रही है, जाते समय बत्ती बुझा देना. और महाश्वेता सोने लगी.

अच्युत ने उठकर तुरंत ही बत्ती बुझा दी, किंतु वह पुनः उसी कुर्सी पर बैठ गया. उसके मन में महाश्वेता को लेकर वर्षों से जो अंतर्द्वंद्व चल रहा था, उसे आज एक समाधान महाश्वेता के शब्दों में ही मिल गया था. पता नहीं विनाशकारी समय मनुष्य को कैसी-कैसी अद्भुत बुद्धि प्रदान करता है. रात्रि एक बजे के लगभग अच्युत अपनी कुर्सी से उठा और धीरे से महाश्वेता के शयनासन पर लेट गया. उसने अपना हाथ पहले महा-महाश्वेता के वक्ष पर रखा और फिर वहां से उठ कर उसी से महाश्वेता के कपोलों, माथ, पलकों, अधरों तथा नासिका को रगड़ने लगा.

किंतु दो-चार क्षणों के बाद अच्युत को लगा महाश्वेता का शरीर पाले की तरह शीत हो गया उसका वासनाशील हाथ सहम कर महाश्वेता के क पर से हट गया. वह अपने को महाश्वेता के शरीर दूर कर तुरंत खड़ा हो गया और भयभीत होकर लगा. जल्दी से उसने बत्ती जला दी. प्रकाश होने महाश्वेता की ओर देखा. उसके समीप गया. पांव, माथा, नासिका और वक्ष, सर्वत्र जीवन की की. किंतु दिव्य सौंदर्य से परिपूर्ण एक शव ही उस में उसके समक्ष था.

* *

चिता जल जाने के बाद जब उपासकों की लौटी, तब एक-एक ने एक-एक से पूछा-पचीस से पहले ही महामाया का शरीरांत क्यों हो गया?

किसी-किसी ने कहा—उनका पचीसवां वर्ष ही

किसी विशेष ने कहा—किंतु अभी तीन माह शेष

तब एक साधु ने कहा—शेष तीन माह महाम अच्युत को दे गयी हैं.

महाश्वेता के निर्वाण के बाद अच्युत एक पल भारत में नहीं रहना चाहता था किंतु अपने देश ज की सरकारी स्वीकृति लेने में उसे दो माह से अधि समय लग गया. जिस दिन वह वाराणसी से दिल्ली लिए अंतिम बार हवाई जहाज में सवार हुआ, कहते कि उसी दिन महाश्वेता के महानिर्वाण को तीन म पूरे हो चुके थे. वाराणसी निवासियों को तो यह सम चार दूसरे दिन प्रातः मिला कि कल संध्या दिल् के निकट होनेवाली हवाई दुर्घटना में अच्युत भी मृ का शिकार हुआ है. □□□

७३।२१ सेण्ट्रल बिल्डिंग, कमरा नं. ३४,
कलेक्टर गंज कानपुर,

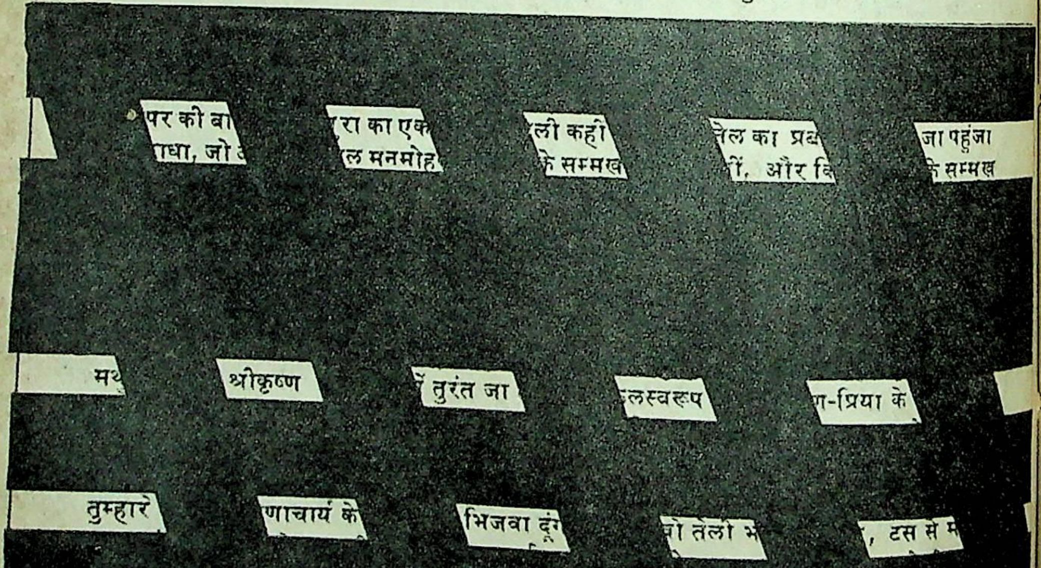

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या 'समांतर' महज आंदोलन है?

१ जून, १९७५ को आकाशवाणी, दिल्ली से 'साहित्यिकी' के अंतर्गत एक बातचीत का प्रसारण हुआ, जिसमें भाग लेने वाले लेखक थे सर्वश्री राजेंद्र यादव, से. रा. यात्री व गोविंद मिश्र. यहां प्रस्तुत है उसी प्रसारण पर आधारित एक रिपोर्ट.

राजेंद्र यादव :—स्वतंत्रता के बाद हिंदी कहानी उथल-पुथल की कहानी रही है. कभी इसे आंदोलनों का नाम दिया गया है—कभी इसे एक वैचारिक स्थिति के रूप में स्वीकार किया गया है. इधर हिंदी में समांतर कहानी का नाम बार-बार सामने आ रहा है. एक विशेष राजनीतिक दृष्टि के लोग, जिनमें कई सशक्त दृष्टि के लेखक भी हैं, एकजुट हो कर लिख रहे हैं. यात्री जी, आप समांतर लेखन पर थोड़ा प्रकाश डालिए.

यात्री :—यह संवाद आरंभ से ही गलत दिशा में न भटक जाये, इसलिए मैं निश्चयात्मक स्वर में कहना चाहूंगा कि समांतर कोई आंदोलन नहीं है. जैसा कि अभी आपने स्वीकार किया कि आजादी के बाद की कहानी संक्रमण काल की कहानी है—मैं भी यह मानता हूं कि पिछले पच्चीस वर्षों में कहानी कई तरह के युग-व्यापी तनावों को वहन करके आज एक केंद्रीय विधा के रूप में स्थापित हो गयी है. मुझे यह कहने में संकोच नहीं है कि कहानी में कई तरह के शिल्पगत उलझाव और अप्रामाणिकता के स्वर भी आ मिले थे, जिन्होंने कहानी को भटकाया भी, लेकिन अतिरंजना-पूर्ण, झूठी स्थितियों को हिंदी तथा इतर भाषाओं के सशक्त लेखकों ने निर्ममता से काट कर फेंक दिया और कहानी पुनः प्रामाणिक संदर्भों की ओर लौट आयी है. समांतर लेखन की दृष्टि में लेखक की हैसियत इस जमीन के किसी भी आदमी की अपेक्षा विशिष्ट नहीं है. हम स्वयं सामान्य जन हैं—मामूली आदमी में पूरी तरह शामिल हैं. बहुत बार प्रतिबद्धता की बात की जाती है. पर समांतर लेखक इसे आरोपित स्थिति मानता है. लेखक साधारण आदमी से स्वयं को अलग मान कर ही प्रतिबद्धता की बात कर सकता है. यदि वह उनमें से एक है तो फिर प्रतिबद्ध नहीं, संबद्ध होगा. समांतर लेखन संबद्धता का लेखन है.

गोविंद मिश्र :—मैं यात्री की बात से बिल्कुल सहमत नहीं हूं. स्वयं को सामान्य जन कहते ही उसमें 'जस्टीफिकेशन' आ जाता है! इस समांतर लेखन को जब आप जन-चेतना का संघर्ष कहते हैं, तो यह सापेक्ष स्थिति लगती है, यानी आप कहना चाहते हैं कि समांतर के पूर्व का लेखन लोक-चेतना के संघर्ष को अंकित नहीं कर रहा था—इसी लेखन से यह नजरिया आया है. फिर लोक-चेतना के संघर्ष और समांतर लेखन में भी कोई तालमेल नहीं है. ऐसा लगता है, छपने के महत्वाकांक्षी लोग इसमें आ मिले हैं.

राजेंद्र यादव :—मिश्र जी, यह ज्यादती है—मात्र छपने की भूख समांतर के पीछे नहीं है. यात्री जी, इस तरफ भी गौर कीजिए कि स्थितियों को बदलने की बात सचेतन कहानीकारों ने भी की थी—बाकी लेखक भी कई आंदोलनों का सूत्रपात इसी बदलाव को ले कर करते रहे हैं, फिर समांतर इनसे किस रूप में भिन्न है?

गोविंद मिश्र :—अभी मेरी बात बाकी है. प्रेमचंद के युग में भी आम आदमी को सामने रखा जाता था—प्रगतिशीलों ने भी इसे ले कर नारा बुलंद किया था—नयी कहानी में भी आम आदमी को याद किया गया, लेकिन यह आदमी हमेशा लेखक की ढाल ही बनता रहा है. इसके अलावा मैं यह भी कहना चाहूंगा कि आम आदमी की तस्वीर ही अलग से कहां बाकी रह गयी है? उसका वजूद तो परिवेश के साथ डायल्यूट हो गया है—इन स्थितियों में समांतर महज एक नारा लगता है.

राजेंद्र यादव :—मिश्र जी, यह भी विचारणीय है कि आज की कहानी, उसकी स्थितियां और तनाव निश्चय ही पिछले समस्त कथा-आंदोलनों से भिन्न हैं. जहां तक 'नयी' कहानी का संबंध है, उसका आदमी, पात्र या नायक स्थितियों में आक्रामकता के स्तर पर रिएक्ट नहीं करता था. आज की कहानी का नायक यशपाल, जैनेंद्र और अज्ञेय की कहानी के पात्र से एकदम अलग है.

यात्री :—यह एक सही मुद्दा है. जैनेंद्र और अज्ञेय की कहानियां शिल्प और भाषा के उलझाव का भटकाव हैं. आज का समांतर लेखक उस अयथार्थ और रोमांटिकता में नहीं भटकता, जिसमें ये लेखक भटकते रहे हैं. समांतर लेखक मामूली आदमी की हैसियत से चौमुखे तनावों को झेलते हुए जीता है. वह अपने ऊपर विशिष्टता का कोई आरोपण नहीं करता—आरोपित स्थितियों से बचने की सजगता ही उसे संबद्ध बनाती है. रोजमर्रा की जिंदगी ढोते हुए औसत आदमी प्रत्येक क्षण असुरक्षा, अपमान, आर्थिक-सामाजिक शोषण और छल का शिकार होता है—उसकी विवशताओं और दूसरी सीमाओं में लेखक उसके साथ शामिल है. इसके विपरीत वे कलमकार भी मौजूद हैं जो आदमी के इस खटने के प्रति तटस्थ, निरपेक्ष या अनासक्त हैं—ऐसे लेखकों के पास दर्शन या आदर्श की तरह-तरह की बैसाखियां हैं, लेकिन कुल मिला कर यह बच निकलने की चालाकी है. समांतर लेखक आहत आदमी के यथार्थ से आंखें नहीं बचाता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बल्कि आहत करने वाले प्रसंगों से संघर्ष करता है. मोटे तौर पर यही उसका वाम है. साहित्य में ऐसे लेखकों या आंदोलनों का अभाव नहीं है, जो विशिष्ट विचारधारा का चोगा पहन कर वाम बने हुए हैं, लेकिन यह एक आरोपित वाम है. समांतर लेखक स्वयं पिटे हुए वर्ग का है तथा उसका निरंतर प्रतिकार भी करता है और उसकी यही सक्रियता उसे वाम बनाती है.

किसी भी समांतर लेखक की यह नियति है कि वह साधारण आदमी की समस्त मूर्त्त-अमूर्त्त तकलीफों में स्वयं भी ग्रस्त है, लेकिन साथ ही यह भी साफ है कि समांतर लेखक साजिश के स्रोतों पर अपनी धारदार अभिव्यक्ति की मार करता है. यह कितनी विचित्र स्थिति है कि अज्ञेय, जैनेंद्र तथा यशपाल आदि ने अपने कथापात्रों को प्रायः क्रांतिकारी बनाया, परंतु उनमें से एक भी सामान्य जन के बीच खप सकने योग्य नहीं बन पाया! मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि समांतर लेखक और उसका लेखन चिरंतन वाम है, क्योंकि वह या उसका लेखन किसी खास राजनीति अथवा गढ़ी हुई विचारधारा के कुहासे से आच्छादित नहीं है और न ही उसकी एप्रोच रुग्ण या रोमांटिक है. समांतर लेखन इन्वॉल्वमेंट के प्रत्येक स्तर पर सक्रिय है—मैं इस स्थिति को चिरंतन वाम की स्थिति कहूंगा.

गोविंद मिश्र :—साहित्य का मतलब क्या राजनीतिक विचारधारा के अलावा कुछ नहीं है? यह ठीक है कि राजनीति से अलग नहीं रहा जा सकता, लेकिन राजनीति लेखन पर हावी हो जाये तो उसे सृजनात्मक लेखन कैसे कहा जा सकता है?

राजेंद्र यादव :— विचारधारा का हमेशा महत्व रहता है—सुनिश्चित विचारधारा के बिना साहित्य कहीं नहीं पहुंचता. चाहे आज का युग हो, चाहे मध्य-

राजेंद्र यादव

काल का. सुनिश्चित विचारधारा ने अपना काम हमेशा किया है!

यात्री :—निश्चय ही ठोस और सुनिश्चित विचारों ने अपना काम किया है. गांधी, मार्क्स, क्रोपोत्किन तथा और भी अनेक चिंतकों ने युग विशेष में सामाजिकता को दृष्टि दी है, पर हमें अपने समय में उसके सार्थक संदर्भों की जांच-पड़ताल करनी पड़ती है—समांतर के पास विवेचन और जांच-पड़ताल की खुली दृष्टि है. यही कारण है कि वह किसी भी जड़ वाद या चिंतनधारा का अंधानुकरण नहीं करता—विचारधारा और युग बोध का पारस्परिक तालमेल ही सर्जना का सहज आधार है.

राजेंद्र यादव :—यात्री, तुम इसे आंदोलन नहीं मानते, लेकिन क्या यह सच नहीं है कि साहित्य में आंदोलन रचनाओं की वैचारिकता से निकलते हैं, न कि पहले से ही दर्शन तैयार करके उस पर रचनाएं करने से. जहां तक मैं समझता हूं, समांतर के साथ यही हुआ है कि पहले एक विचारधारा तैयार की गयी है और उसके बाद फॉर्मूला-लेखन शुरू हुआ है. 'नयी' कहानी छह-सात साल के लेखन के बाद स्थापित हुई और वह सृजनात्मकता के सहारे टिकी रह सकी—पर समांतर के पीछे यह दृष्टि दिखलायी नहीं पड़ती.

गोविंद मिश्र :—यादव जी, आपकी बात मुझे एकदम सही लगती है—समांतर के सभी लेखक एक-सा ही लिख रहे हैं. सारा लेखन स्टीरियोटाइप है. इसके समस्त लेखक कथ्य को एक ही दिशा में मोड़ना चाहते हैं. यह पूर्वाग्रह इन सब में है—कामतानाथ की **'तीसरी सांस'** कहानी हो, या जितेंद्र भाटिया अथवा इब्राहीम शरीफ की कहानी. फिर एक दिलचस्प स्थिति और भी है: भीष्म साहनी और अनीता औलक इस आंदोलन में एक साथ हैं!

यात्री :—आप दोनों ही अपनी स्थापनाओं को अपने ही तर्कों से काट रहे हैं. जहां तक 'नयी' कहानी का प्रश्न है, उसके संबंध में यही कहा जा सकता है कि यह कुछ लोगों को स्थापित करने का सिलसिला था. आज जिसे 'नयी' कहानी की 'उपलब्धि' कहा जाता है, वह तो अपने पुष्ट तथा सार्थक लेखन से 'नयी' कहानी के आरंभ से पहले ही स्थापित हो चुकी थी. लेकिन उसे सामने रखे बगैर दूसरे कई कच्चे लेखक स्थापित नहीं हो सकते थे. यही वजह थी कि **'नई कहानियां'** के प्रकाशन के साथ ही 'नयी' कहानी का आंदोलन भी चला और उसके लिए बाकायदा आलोचक भी स्थापित किये गये. लेकिन इसका नतीजा क्या निकला? समर्थ लेखन के बल पर ही कुछ लेखक टिके रहे और स्थापित रहे. बाकी का कुछ नहीं बना. जब आंदोलन को बचाने का प्रश्न सामने रहता है तो यही होता है. लेकिन जहां तक समांतर का प्रश्न है, इसकी स्थिति भिन्न है. एक बात तो यह समझ लेने की है कि यह लेखन महज हिंदी में ही नहीं हो रहा है—दक्षिण की सारी भाषाओं में समांतर लेखन हो रहा है; पंजाबी-डोगरी की रचनाएं भी इसका प्रमाण हैं! इसके अतिरिक्त दलित पैंथर्स के माध्यम से मराठी भाषा में बहुत श्रेष्ठ समांतर साहित्य का लेखन हो रहा है. 'नयी' कहानी ने जिस प्रश्न को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से. रा. यात्री

शायद ही कभी छुआ हो, समांतर में एक सही सृजनात्मकता का सवाल बन कर उभरा है—अस्पृश्य और सवर्ण का भेद जिस सांप्रदायिक अश्लीलता को जन्म देता है, उसे नजरंदाज नहीं किया जा सकता. दलित साहित्य केवल भारत के छूत-अछूत का सवाल नहीं है. यह तीसरी दुनिया का भी एक ज्वलंत प्रश्न है—इसमें केवल भारत ही नहीं है, कंबोडिया, विएतनाम और औपनिवेशिकता के दमन से आक्रांत अफ्रीकी देशों की दुर्दांत स्थितियां भी हैं. मिश्र जी ने कहा है कि समांतर में भीष्म साहनी और अनीता औलक साथ-साथ हैं. यह समांतर की सही दृष्टि और जीवंतता का प्रतीक है—इसमें पीढ़ी, उम्र तथा दूसरे लिहाज नहीं हैं. अपने समय की चिंताओं को जो भी लेखक व्यक्त करता है, वह समांतर लेखक है. जहां तक समांतर के आंदोलन होने का प्रश्न है—इसका प्रचार कभी राजनीतिक स्तर पर अथवा मैनिफेस्टो के रूप में नहीं किया गया. जो कुछ भी सामने आया है, वह केवल रचनात्मकता के स्तर पर आया है. समांतर लेखन पर जड़ता या एकरसता का आरोप केवल वही व्यक्ति लगा सकता है, जो कुंठित नजरिये से इन कहानियों को पढ़ता है.

गोविंद मिश्र :—मैं यह बात रचनाओं को देख कर ही कह रहा हूं कि समांतर लेखन में विविधता की गुंजाइश नहीं है. इसमें गांव की कहानी नहीं है—प्रेमचंद के युग से 'नयी' कहानी तक की लंबी यात्रा में गांव की कहानी मौजूद है, लेकिन समांतर लेखन में इसका अभाव है.

यात्री :—चूंकि समांतर कहानी किसी आग्रह के तहत नहीं लिखी जा रही है, इसलिए मूल संवेदना को ही प्राथमिकता दी जाती है. समांतर लेखन के '**सारिका**' के कई अंक इस तथ्य के साक्षी हैं कि गांव की सही समस्याओं को समांतर कहानियों में अनेक बार रूपायित किया जाता है! मधुकर सिंह की अधिकांश कहानियां ग्रामीण परिवेश को सहज-सार्थक रूप में प्रस्तुत करती हैं—मधुकर सिंह की कहानियों में परिस्थितियों का दैन्य और इस दैन्य के प्रति पात्रों का कटखनापन एक साथ मौजूद है.

गोविंद मिश्र :—मैं तो यही मानता हूं कि समांतर लेखक सब एक जैसा लिखते हैं. कामतानाथ की कहानी '**तीसरी सांस**' राजनीतिक फार्मूले की ही कहानी है. प्रगतिशील आंदोलन की सारी डिकेडेंट प्रवृत्तियां समांतर में उपस्थित हैं.

यात्री :—मैं एकरसता या फार्मूला इस लेखन पर कतई हावी नहीं मानता. कथ्य, शिल्प, भाषा, रचना-प्रक्रिया की अनेकस्तरीय एप्रोच, सभी में ये लेखक एक-दूसरे से अलग व्यक्तित्व रखते हैं! इब्राहीम शरीफ और जितेंद्र भाटिया की कहानियां मूल संवेदना में एक हो कर भी अपने पूरे ट्रीटमेंट में अलग हैं. राजनीतिक नजरिये को ले कर देखें तो, मधुकर सिंह, कामतानाथ और सुदीप का व्यक्तित्व अलग-अलग है! निम्न-मध्यवर्ग के आहत प्रसंगों को राम अरोड़ा और लानी दोनों उठाते हैं; पर उनका व्यक्तित्व लेखकीय स्तर पर पूर्ण स्वतंत्र है. मैं और भी अनेक कहानियों तथा उनके लेखकों का नाम गिना सकता हूं. मैं एकरसता के प्रसंग को इन कहानियों के संदर्भ में उठाना ही गलत समझता हूं, क्योंकि समांतर कहानियां इकहरी सच्चाइयों की कहानियां नहीं हैं. ये बहुमुखी और बहुआयामी आसंगों की कहानियां हैं.

गोविंद मिश्र

गोविंद मिश्र :—समांतर के बाहर कालिया और काशीनाथ बहुत सार्थक और प्रासंगिक लिख रहे हैं.

यात्री :—मेरे लिए यह बहस का प्रश्न नहीं है, क्योंकि जब मैं इसे आंदोलन ही नहीं मानता तो 'इसके भीतर' और 'इसके बाहर' जैसे विशेषण ही मुझे अर्थहीन लगते हैं. समांतर लेखन किसी एक व्यक्ति या संस्था की जड़ पूंजी नहीं है, यह जीवंत और जागरूक लेखकों की सार्वजनिक व्याप्तियों का सृजनात्मक आलेख है. जिसे आप किसी क्षेत्र या भाषा के दायरे में कैद करके नहीं रख सकते. अभिव्यक्ति की इस जीवित निरंतरता को व्याख्याओं से पकड़ने की जगह संवेदना की प्रामाणिकता से ही पकड़ा जा सकता है. समांतर सारी भाषाओं की अभिव्यक्ति को एक दिशा देने का काम करता है.

राजेंद्र यादव :—यात्री की इस बात में संगति है कि समांतर आंदोलन नहीं है, सहचिंतन के लिए खुला हुआ एक अत्यंत व्यापक मंच है. अपने समय की सच्चाइयों को व्यक्त करने वाला लेखन निश्चय ही रेखांकित होता है, फिर चाहे उसे कुछ नाम दिया जाये या यों ही बगैर विशेषण के छोड़ दिया जाये. □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन दिन के लिए घर आया हूं.

एक परिचित गंध मेरी नाक में भर गयी है. दादी का बड़ा वाला बक्सा जब खुलता था तो उसमें से मसाले, अचार, इत्र, धूप, कड़वे तेल, सिरके, दही आदि की मिली-जुली गंध का अनुभव होता था. उसमें कोई भी चीज रख दी जाये, उसमें भी वही गंध समा जाती थी. कुछ वैसी ही गंध मेरे घर की भी है.

घर क्या है, पूरा कबाड़-खाना है. चौके में कालिख पुते बर्तन औन्हाये हुए, थालियों में जूठन, कड़ाही में पानी, राख, कोयला, सब्जी और प्याज के छिलके, सब कुछ इस तरह बिखरा हुआ कि वहां खड़ा होना पहाड़ हो जाये. आंगन में एक कोने में कुदाल, फटे हुए टायर, झाड़ू आदि रखे हैं और एक तरफ क्यारी बना कर गेंदे के तीन-चार पौधे लगे हैं. बाबू जी कहते हैं—फूल मत तोड़ो. इसी से तो आंगन में सुगंध रहती है. खाक सुगंध रहती है! पास वाली नाली में सभी मूतेंगे, तो आंगन में गेंदा क्या, गुलाब और केवड़े की भी गंध हवा हो जायेगी. और बच्चे हैं कि मानते नहीं हैं. रात-बिरात तो बाबूजी भी वहीं पेशाब करते हैं. इन लोगों को इतना भी खयाल नहीं है कि आंगन में ही तुलसी माई का स्थान है. एक रस्सी आंगन में लटकी हुई है. मां इसे अरगनी कहती हैं और आभा के फ्रॉक, बाबूजी की फटही धोती, मां की चिथड़ी साड़ी, चीकट तकिये के खोल और भीगे बोरे, सब इस पर टंगे रहते हैं. आंगन के तीनों तरफ तीन पक्के कमरे हैं—पक्के, लाल फर्श वाले. बाबू जी कहते हैं—इन्हें खून-पसीना एक करके बनवाया है, इसीलिए लाल हैं. इन कमरों में झाड़ू सिर्फ मां ही लगा सकती हैं. नौकरानी हो सकता है कुछ चुरा ले जाये, गोकि खुला कुछ भी नहीं रहता. यहां तक कि अचार भी ताले में बंद.

मेरे आने से घर में गति आ गयी है. छोटे की आंखें मेरे नये सिले कोट पर टिकी हैं, और भाव व्यक्त कर रही हैं कि उसे भी ऐसा ही सिलवा देना चाहिए. आभा इस फिराक में है कि भैया अभी सूटकेस खोलेगा. बाबूजी, मां, छोटे, आभा और केशव, सब मुझे घेर कर खड़े हो जाते हैं, जैसे मैं कोई अजूबा होऊं, जिसे वे सब पहले-पहल देख रहे हों.

—भैया, मेरा पेन लाये हो? छोटे से रहा नहीं जाता बिना पूछे.

—नहीं.

—और मेरा फ्रॉक, जो मैंने मां से लिखवाया था, चिट्ठी में? आभा ऐसे पूछती है जैसे नया फ्रॉक कभी पहना ही न हो.

—कुछ नहीं लाया हूं, कह दिया न!

मां सबको डांट देती है—सब खरीद दिया जायेगा. भागो तुम सब. बेचारे के पास बंधा-बंधाया पैसा जाता है. कहां से सबको गहने गढ़ायेगा?

मैं अपराध भाव से ग्रसित हो जाता हूं. आभा ने मुंह फुला लिया है. छोटे बुत बना खड़ा है. मेरी हालत उस सांप की-सी हो जाती है, जिसे केशव ने ईंटों से मारा था. घर के सारे लोग सांप को घेर कर उसके बारे में तरह-तरह की चर्चाएं कर रहे थे. ठीक इसी तरह.

मां ने मेरे लिए हलवा बनाया है. चाय भी बना दूं? मां ऐसे पूछ रही है, जैसे कि मैं जब कहता हूं, तभी चाय बनाती है. बनानी थी तो अब तक बना चुकी होती. मैं चुप ही रहना बेहतर समझता हूं. मां केशव को चाय की पत्ती लाने घर से बाहर भेजती है. केशव खिसिया रहा होगा. बेचारे को चाय लानी पड़ेगी. लानी ही पड़ेगी. मैं जो आया हूं!

आभा पता नहीं क्यों गला फाड़ कर चिल्ला रही है. हलवे के लिए रो रही होगी. मां से मैंने लाख बार कहा होगा कि इन सब के मुंह में हलवा ठूंस-ठूंस कर भर दे, ताकि फिर कभी न मांगें. लेकिन मां इतनी गयी-गुजरी है कि क्या कहूं? इन भुक्खड़ों को टुंगा-टुंगा कर देती है. सत्तू का पेट कहीं सुहारी से भरा है?

आभा चिल्ला रही है. उसे हलवा देना जरूरी हो जाता है.

—ले आभा, ले हलवा. ले, खा ले. आभा हलवा ले कर चुप होने की कोशिश करती है. लगता है, मां ने इसे ठोंका भी है, तभी हिचकियां ले रही है. थोड़ा-सा हलवा उसे और दे दिया जाता तो कौन अकाल पड़ जाता! पांच बरस की बच्ची कोई कड़ाही भर हलवा थोड़े खायेगी!

—क्यों री डायन, भैया से भी हलवा ले लिया! आती हूं, तेरे पेट की भवानी को शांत करती हूं. तेरे पेट में दलिद्दर पैठा है क्या, रे?

और मां इसके बाद एक भरपूर तमाचा चला देती है.

आभा फिर और जोर से चिल्लाने लगा है. एकदम शरारत भरी, बेहूदा आवाज में. मैं तो जमीन में गड़ा जाता हूं.

★ ★

शाम को बाजार में ऐसे ही निकला तो जद्दू मिल गया. जद्दू यानी यदुनाथ तिवारी. हम और जद्दू साथ-साथ खेले, पढ़े थे. वह फेल होता रहा. वह जब-जब मुझसे मिलता, यह जरूर जता देने की कोशिश करता कि वह मेरा क्लासफेलो रह चुका है. अब वह सिर्फ इंटर फेल रह गया था. घर में पैसा था ही. खूब अच्छे कपड़े पहनने की आदत पड़ गयी. वह किसी भी मामले में मुझ से बेहतर था. रही फेल होने वाली बात, वह तो पढ़ने वालों के साथ लगी ही रहती है. वह अकसर मुझे 'गिरते हैं शह सवार ही मैदाने जंग में' वाला शेर बड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

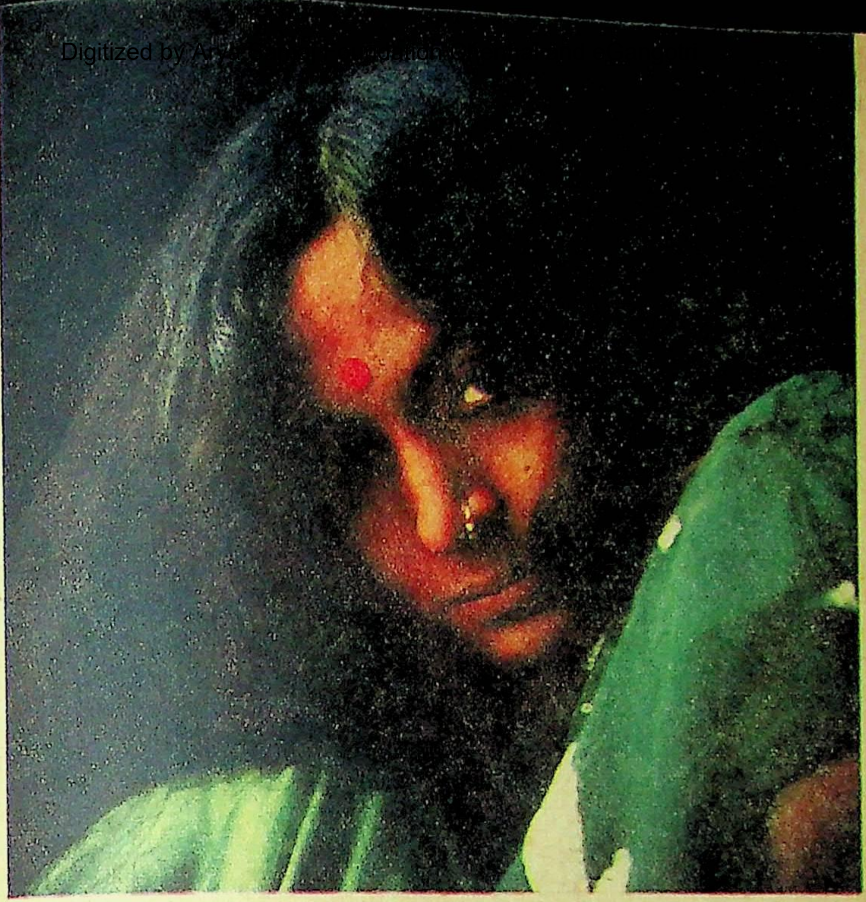

● महेंद्र बंसल

भोंडे ढंग से सुनाया करता था. वह मेरे साथ ऐसी बेतकल्लुफी झाड़ता था जैसे उसके और मेरे तबके में कोई फर्क ही न आया हो. कितना भी हो, मैं ठहरा रिसर्च-स्कॉलर और वह ठहरा इंटर फेल. पैसे से क्या होता है? कभी-कभी जद्दू मुझे जबरदस्ती होटल में चाय पिलाता और कहता—पैसा खर्च करने में कंजूसी क्या? पैसा तो हाथ का मैल है.

—और यह मैल तुम्हारे घर ज्यादा इकट्ठा हो गया है! मैं कहता और वह चिढ़ जाता.

आज पता नहीं मुझे क्या सूझी कि मैंने जद्दू से पूछ लिया—चाय पियोगे? मैंने आशा की थी कि जद्दू नहीं कर देगा, लेकिन वह चुप रहा.

मेरे मन में चिंता घर करने लगी कि मेरे घर के सारे कपों के हैंडल टूटे हैं. चाय में अदरक, मिर्च और तुलसी का पत्ता डाल कर उसे लोग आयुर्वेदिक आसव बना डालते हैं. मेरे घर वालों का टेस्ट इतना बिलो स्टैंडर्ड है कि भला जद्दू क्या कहेगा? मैंने सोचा कि किसी तरह टाल जाऊं. सिर्फ चाय पिला कर बस कर देना अपनी वास्तविक स्थिति को जाहिर कर देना है, इसलिए इसे घर न ले चलूं तो ही अच्छा. लेकिन यह जद्दू ऐसा बदतमीज है कि इसने एक बार भी न नहीं कहा.

मैं सप्रयास बोला—यार आजकल शाम को मैंने चाय पीना कम कर दिया है.

वह अनायास भुनभुनाया—मैं तो शाम को ही पीता हूं.

मैं विवश हो गया. मैं चेष्टा करने लगा कि कहीं जद्दू ताड़ न रहा हो. मैं अपने ही पिंजरे में कैद हो गया था.

* *

दरवाजे के समीप पहुंचा ही था कि एक आवाज से मैं चौंक गया.

'झन्न!' कटोरा पटकने की आवाज. . .बाबूजी कह रहे थे—पता नहीं इस औरत के बाप ने कैसे इसे मेरे गले मढ़ दिया! औरत के नाक न हो तो. . .

माहौल समझने में मुझे देर न लगी. आज भी मां ने बाबूजी की थैली से पैसे निकाले होंगे या कोई और बात होगी.

—मिस्टर जद्दू, लगता है कि फादर किसी बच्चे पर खफा हैं. वह छोटे हैं न, पूरा विलेन हो गया है और फादर मुझसे भी थोड़ा एडजस्ट नहीं कर पा रहे हैं.

—नहीं जी, कोई और बात है.

—लैट इट गो, यार. खामखा मैंने तुम्हें बोर किया. अब तुम जाओ तो ही बेटर होगा. और मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुंह फेर लिया. जद्दू ने स्पष्ट कर दिया था कि वह सारा मामला ताड़ गया है. मेरी स्थिति ऐसी हो गयी थी जैसे जद्दू ने नाली में पड़ा गंदा मेढक देख लिया हो.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुरू से ही बाबूजी और मां के झगड़े मैंने सहे हैं. हर बार वही सब रिपीट होता है. बाबूजी रात को नहीं खाते हैं. बरतनों की उठा-पटक होती है. गंदी-गंदी गालियां बकी जाती हैं. इन्हें यह परवाह नहीं रहती कि मैं हूं, आभा है, केशव है, छोटे है. मां इतनी जोर से चिल्लाती है जिससे लगे कि उसे जान से मार डाला जा रहा है. इतनी नीचता तो किसी परिवार में नहीं दिखी जा सकती. इतनी बिलो स्टैंडर्ड गालियां ये लोग एक दूसरे पर उछालते हैं कि. . .और वो भी बच्चों के सामने. मेरी समझ में क्या कुछ नहीं आता? मेरी उमर तो ज्यादा है, चौदह साल का केशव भी समझता होगा कि ये लोग क्या चीज हैं.

जद्दू से पीछा छुड़ा कर मैं घर आया कि देखें, मामला क्या है.

जैसा सोचा था, ठीक वही दृश्य. थाली का चावल, दाल, सब्जी और पानी इधर-उधर छितराये हुए, सुराही फूटी हुई, चूल्हा लगता है पैर से तोड़ा गया है. बच्चे शायद रजाई में मुंह ढके रो रहे हैं. बाबूजी लालटेन की रोशनी में कुछ गिन-गुंथ रहे हैं. थोबड़ा ऐसे लटका है जैसे कि बड़े सीधे हों, कुछ जानते ही न हों. हो सकता है, मां आज पिटी भी हो. है कहां? दिखायी भी नहीं पड़ रही है. कुएं में कूदने की धमकी तो देती है लेकिन कूद नहीं सकती. कूद जाती तो झंझट ही छूट जाता. न रहता बांस, न बजती बांसुरी. बाबूजी भी भूखों मरते, तो अक्ल ठिकाने आ जाती. बेचारी मर-मर कर काम करती है, और उस पर यह इल्जाम थोपते रहते हैं. अपना युधिष्ठिर बने बैठे हैं! रजाई ओढ़ कर, और गिन-गुंथ रहे हैं, पाई-पाई. एक भी पाई खिसकी तो निकला प्राण. मक्खीचूस कहीं के!

जैसा मैं ऐसे मौकों पर करता हूं, अपने कमरे में जा कर चुपचाप पड़ जाता हूं. पर नींद आये तब न.

छोटे मुंह लटकाये बड़ी शालीनता से कमरे में घुसा.—भइया, खाना नहीं पका है.

मुझे कुछ जवाब सूझे, उससे पहले ही उसने बतलाया —भइया, आज मां ने बाबूजी की थैली में से दस रुपये चुराये थे. बाबूजी ने मां को पीटा नहीं, सब्र किया. बाबूजी ने मां को खूब गाली बकी और उसने भी गाली दी. भइया, आभा डर गयी है. रजाई में मुंह ढक के रो रही है. केशव भी. और लगा कि वह भी रो देगा.

—चुप रहो. जा कर सो जाओ. मैंने उसे डांट कर भगा दिया. मुझे नाराज होना चाहिए किस पर, और हो रहा हूं किस पर? उस बेचारे को डांटने से क्या फायदा?

लगता है मां की चोरी की आदत छूटने से रही. बाबूजी कहते हैं, मांग लिया करो. दें तब न कोई मांगे! मसल-मसल कर तो पैसा निकालते हैं. हद दर्जे के कंजूस हैं. घी खाते रहेंगे और पूछेंगे नहीं कि कहां से आया है. मां बेचारी कहां से लायेगी? यह तो मां है जिसकी वजह से सबको पेट भर खाना मिल जाता है. वह भी किस दिन मिल रहा है, मिल रहा है. यह होते तो सब अब तक मार चुके होते, खाने बिना. मेरी गलती है इन कमीनों के घर पैदा हो गया. बाबूजी दिन भर तीन बार पैसा गिनेंगे. झूठ कह देंगे—दो घंटा पहले सौ सत्तासी रुपये रखे थे, अब दो सौ बयासी हैं. लगता है पांच का नोट किसी ने उड़ा दिया. चारों तरफ चोरों का बसेरा है. पैसा रखा कि पांच का नोट गायब!

हो सकता है गिनने में गलती हुई हो, लेकिन वह नहीं मान सकते. कहते हैं—तीन बार गिना था. तीनों बार गलती होगी?

—यही करना है, तो गिन करके रखिए ताले में, समझे? मां चिलायेगी.

—अरे तुम तो ताले में से भी उड़ा डालोगी. तुम्हें तो टोना आता है न? और झगड़ा शुरू हो जाता है. मुझे मां की चोरी का पूरा-पूरा भरोसा है, लेकिन ऐसे मौकों पर बाबूजी का व्यवहार मुझे बिल्कुल नापसंद है. मुझे तो कभी चोरी नहीं लगाते. केशव पर जरूर लगाते हैं. वह चोरी नहीं करता, सब्जी के पैसों में से थोड़ा बचाता है. वह भी कलम-कापी के लिए. इसे चोरी नहीं कहते. जब उसे पैसा दिया नहीं जायेगा तो कहीं-न-कहीं से वह निकालेगा ही.

कुछ भी हो, मां चुराती जरूर होगी. लेकिन करती क्या है, इसका नहीं पता.

* *

कभी-कभी बाबूजी ऐसी बेतुकी बातें करते हैं कि दिमाग गरम हो जाता है. कह रहे थे, रिसर्च करके कौन नार्लीकर हो जाओगे? अरे, कुछ कमाओ-धमाओ. नहीं तो कोई दुकान ही खोल लो. चेहरा बना कर लोफरिज्म करने से क्या पाओगे? अरे, भूखों मरोगे भूखों! कोई दो कौड़ी में भी तुम्हें नहीं पूछेगा. जब तक मैं जिंदा हूं, तब तक टेरीकॉट पहन लो. मर जाऊंगा, तो लुगरी लपेटोगे. क्या ये भरोसेलाल का लड़का घूमता है! पहले सूट पहनता था, अब जांघिया पहनता है.

मेरे कपड़ों की हालत कैसी है, इसे मां जानती है. कपड़ों के लिए बाबूजी से कहना मैंने एक अरसे से बंद कर दिया है. कभी-कभी अपनी फटेहाली पर मां से रो-धो लेता हूं. मां भी क्या करे? हो सकता है मुझसे सहानुभूति पाने के लिए ही, मेरे सामने बाबूजी को दो-चार गालियां बक देती है. कभी-कभी कहती है, आग लगे ऐसे धन में. पाई-पाई जोड़े कोई कुबेर होता है? मर जायेंगे, तो ले जायेंगे क्या? देखो, कोई इंतजाम होगा. घबड़ाओ मत. घबड़ा कौन रहा है? मां तो इतनी सांत्वना भी दे देती है. बाबूजी कहते हैं, प्लेन लिविंग एंड हाई थिंकिंग. बड़े-से-बड़े आदमी को देख लो, कोई कीमती कपड़े पहनता है? हमारे जमाने में एक प्रोफेसर थे, लुंगी पहन कर आते थे. उन्हें तो कोई कुछ भी नहीं कहता था. सारे लोग हाथ जोड़ते थे. कदर नॉलेज की होती है, कपड़ों की थोड़े होती है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे हाइ थिंकिंग सिखाने चले हैं! इनकी हाइ
...ग तब उजागर होती है जब मां से झगड़ा
...ा है.

नींद नहीं आ रही है. एक उपन्यास उठा लेता हूं.
पता नहीं मां बाबूजी से झगड़ा करके कहां गयी
हो सकता है, ठाकुर साहब की बीवी के यहां गयी
वहां जा कर वह मेहमान की तरह बैठी होगी. जाहिर
...करेगी कि लड़ कर आयी है. इस तरह की नकल
वह चतुर है. घर पर बाबूजी थोड़ा भी डांटेंगे तो
...मान सिर पर उठा लेगी. बाबूजी घबड़ा जाते हैं.
...ते हैं कि कोई सुन न ले. इज्जत का इतना खयाल
तो नंगई करने की क्या जरूरत है?

झगड़ा करने के बाद मां ठकुराइन से क्या बात करती
...ी? घंटों से वहां क्या कर रही है? बच्चे भूखे सो
...ए, उसे थोड़ी भी चिंता नहीं है.

मैंने सोचा कि ठकुराइन के यहां चल कर देखूं कि
...बजे रात को भी मां आयेगी कि नहीं. और देखा कि
...ठकुराइन के यहां गप्प लड़ा रही है—शायद स्वेटर
...बुनाई भी देख रही है.

—मां चलो, खाने-वाने का इंतजाम करो. रात को
...से नहीं बैठते हैं.

—अरे, थोड़ी देर बैठ ही गयी तो क्या बिगड़ गया!
खाना लोगों को तुम नहीं परोस सकते थे! आदमी
के पास ही तो आदमी बैठता है. मां ऐसी स्वाभाविक
मुद्रा में कह रही है, जैसे खाना सचमुच बना ही हो.

—चलें बहन जी, देर हो रही है. वे नाराज होंगे.

—अरे बैठिए भी. उन्हें कहना पड़ा.

—नहीं-नहीं, अब चलूं.

—अरे, थोड़ी देर और! ठकुराइन ने अपनी
शिष्टता पर और जोर दिया.

—फिर कभी. चलूं, नहीं तो बच्चे सो जायेंगे.
जैसे बच्चे अब तक जगे ही हों.

मां मेरे साथ ऐसे आ रही थी जैसे उसे मैं जबरदस्ती
खींच कर ला रहा हूं. उसके चेहरे से यह भय टपक रहा
था कि हो सकता है सारे लोग जगे हों.—सब बच्चे
सो गये होंगे. भूखे ही. बताओ, ऐसा बवाल इन्होंने खड़ा
कर दिया कि खाना हराम हो गया. हत्यारे से पाला
पड़ा है. तुम्हें भूख लगी है?

मैंने कहा—नहीं. लगता था मां को भी भूख लगी है.
लेकिन इतनी रात को खाना कौन खायेगा? मां तो खाने
से रही! मां कह रही है—अरे, यह आज की ही बात नहीं
है. ऐसा तो हमेशा करते हैं. छोटी-सी बात हुई कि हुआ
तूफान. मैं मां का मुंह देख रहा था जो रुलाई दबाने में
असफल हो रहा था.

घर आ कर मां चुपचाप सो गयी.

मैंने सोचा, अब ज्यादा दिन यहां नहीं रहना है,
कल चला जाऊंगा.

* *

आज सुबह घर का वातावरण नॉर्मल है. जैसे रात
ने सारा मनोमालिन्य धो दिया हो.

हिंदी कथा-जगत में नये-नये उभर कर आने वाले प्रतिभाशाली लेखकों में एक नाम रवींद्रनाथ उपाध्याय का भी है. यथार्थ स्थितियों को, बिना किसी लाग-लपेट या बनावट के अपनी कहानियों में ज्यों-का-त्यों रख देना इनकी विशेषता है. इस कहानी 'घर' में इस विशेषता का भरपूर प्रमाण उन्होंने दिया है.

मैंने अपने जाने की घोषणा कर दी है.

आज शाम की ट्रेन से जाऊंगा. घर के सारे लोग मुझसे फिर प्रेम करने लगे हैं.

चिट्ठी जल्दी-जल्दी लिखा करना. फाउंटेन पेन लेते आना मेरे लिए. इस बार न भूलना. ट्रेन में सामान से सचेत रहना...रुपया-पैसा ठीक से रखना. ट्रेन में सोना मत—आदि वाक्यों से मुझ पर प्रेम बरसाया जा रहा है. मुझे ऊब हो रही है.

मां ने मुझे बुला कर एक सौ का नोट दिखा कर मेरी पैंट की जेब में डाल दिया है.—ये रख लो. कपड़ों के लिए. बाबूजी से कहने से कुछ भी न होता. बड़ी तकलीफ से ये पैसे मैंने जुटाये हैं. एक-एक करके जोड़े हैं. कभी पांच निकाल लिया, कभी दो, कभी एक. किसी तरह पूरा किया है. तुम कहोगे तो और इंतजाम कर दूंगी. इनसे गरम कोट ही बनवाना. और किसी मद में खर्च न करना. ध्यान करके. समझे? तुम्हारे पास कोट है भी नहीं. जाड़ा कैसे निकालोगे?...यह सोच कर बहुत तकलीफ होती थी...कितनी होती है, कोई नहीं जानता... और मां का गला भर आता है.

मैं समझ गया. अंदर से लगा कि मैं झकझोर दिया गया हूं. मां एक साबित चोर की इज्जत से इस घर में रहती है. डांटी जाती है. गाली सुनती है. गाली बकती है. झगड़ा करती है. कलह करती है. क्यों?...

मैंने पैसे रख लिये. और करता भी क्या? कोट तो जरूरी बनवाना था, नहीं तो सर्दी कैसे गुजरती?... □□□

१३७, हिंदू छात्रावास,
प्रयाग विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

दुर्घटना □ शंकर

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अखबार का बंडल सहेजना छोड़ लखराजी बाहर निकल कर टटियारी में चली आयी. टटियारी चारों कोने पर बांस को टाट से घेर देने से बनी थी. टाट काफी पुरानी पड़ गयी थी. जहां-तहां पेबंदें भी लगी थीं. टटियारी चार साल पहले छोटकू के बाबू रत्तीराम ने खड़ी की थी. हर साल टाट की बदली होनी चाहिए थी लेकिन कभी ऐसा हो नहीं पाया था. तब से टटियारी बरसात के दिनों के अलावा बाकी अन्य दिनों में आंगन का काम करती आयी थी.

टटियारी के एक कोने में थोड़ी देर पहले लखराजी ने चूल्हे पर अल्युमीनियम की तसली चढ़ायी थी. चावल के फुदकने के समय का अंदाज ले कर ही वह टटियारी में आयी थी. उसने तसली में झांका; फिर उसको डबरे में उलट दिया. डबरे में हलके मटमैले रंग का पानी फैल कर पसर गया. डबरे से उठती हुई सुगंध छोटकू तक पहुंची और वह अखबार के बंडल के पास से उठ कर डबरे के पास बैठ गया. तभी रत्तीराम ने भी करवट ली और सिर लुगदी के बाहर निकला. बाबू की तरफ पीठ किये छोटकू ने सुड़क-सुड़क कर पूरा डबरा खाली कर दिया. फिर पेंदे पर बैठे चावल के दाने बीनने लगा.

तभी लखराजी ने छोटकू के बाबू की आंखों में झांकने की कोशिश की. लुगड़ी में मांस के लोथड़े की तरह लिपटा हुआ वह गड़ती नजरों से छोटकू के आगे पड़े खाली डबरे को देख रहा था. लखराजी के कलेजे में दर्द-सा उठा. उसके जी में आया, वह छोटकू को एक जोरदार तमाचा जड़ दे.

—चल उठ, पेटू कहीं का! बाबू के हिस्से का भी तू खा गया! लखराजी ने छोटकू को बांह पकड़ कर उठा दिया. लेकिन दूसरे ही क्षण छोटकू के चेहरे पर नजर पड़ते ही वह पिघलने लगी. फिर सोच में डूब गयी. सुबह चूल्हे पर चढ़ाने के लिए वह पूरा चावल जुटा भी नहीं पायी थी. पिछले दिनों बड़ा लड़का बिरज जोरावरचंद से माहवारी की जगह चावल मांग लाया था जो कई दिनों तक लगातार चला था. फिर लखराजी गुलटिक्की के पैसों से गाजर खरीद लायी थी, जिसे उसन-उसन उसने दो जून गुजारी थी. वह तो रामसरन की भलमनसी थी कि उसने रत्तीराम का खयाल करते हुए लखराजी को आज सुबह में इस शर्त पर मदद दे दी थी कि वह गुलटिक्कियों के पैसे में से उतना काट लेगा. लखराजी को यह शर्त बहुत हलकी लगी थी. आज उसने तसली में जो चावल चढ़ाया था, वह रामसरन के पैसों का ही था.

बिल्कुल सुबह लखराजी ने छोटकू के बाबू के पेट में मरोड़ों की आवाज भी सुनी थी—गड़-गड़-गड़. तब वह एक बुरी आशंका से डर गयी थी. पिछले दिनों खिलौना बेचने वाले सिवचन के पेट में भी इसी तरह मरोड़ें उठी थीं. सोने से पहले उसने बताया था कि तीन दिनों से उसने कुछ खाया नहीं था. इस बीच गर्म पानी जैसी कोई चीज उसकी अंतड़ियों में उठती-गिरती रही थी. उसके इर्द-गिर्द बैठे लखन, गुलाब, बिंदे, तेतर आदि ने उसके पेट में उठने वाली मरोड़ों की आवाज भी सुनी थी. सुबह सिवचन अपनी झुग्गी में मुर्दा पड़ा मिला था. सिवचन की याद आते ही लखराजी भीतर से हिल गयी थी. तब कोठरी की एक-एक हांडी को उसने टटोला था. कुछ नहीं मिलने पर वह रामसरन से मदद मांगने गयी थी.

डबरा छोड़ कर उठने के बाद छोटकू कुछ क्षणों के लिए अपराधी की तरह खड़ा रहा. फिर अखबार के बंडल को कंधे पर रख टटियारी के बाहर चला आया. इस बीच बाबू ने लुगदी अपने सिर के ऊपर तक खींच ली थी. अब वह लुगदी के भीतर सिमटा हुआ पड़ा था.

* *

लखराजी छोटकू के साथ आज भी गली के अंतिम छोर तक आयी. वहां गोदामपट्टी की इन झुग्गियों की कतार खत्म होती थी और एक पतली-सी पगडंडी रेलवे गोदाम की बगल से होती हुई रेलवे प्लेटफार्म तक जाती थी. कल भी वह यहां तक आयी थी. दो-चार दिनों तक ऐसा करना उसने जरूरी समझा था. उसे विश्वास था, धीरे-धीरे छोटकू खुद-ब-खुद सब कुछ समझ जायेगा. जब यह सब छोटकू के जीवन का हिस्सा बन जायेगा, तब उसे यहां तक छोड़ने की जरूरत नहीं पड़ेगी. लखराजी गली की अंतिम हद तक आ कर रुक गयी.

आश्वस्त कराने के खयाल से छोटकू ने सिर घुमा कर मां की ओर देखा. अखबार के बंडल के दबाव से छोटकू की गरदन दूसरी तरफ झुक आयी थी. उसने दाहिने हाथ को ऊपर फेंक कर बंडल मजबूती से पकड़ रखा था. ऐसा करने से उसकी कमीज उठ गयी थी. लखराजी ने बंडल को थोड़ा हिला-डुला कर संतुलित कर दिया. फिर ढाढ़स देते हुए बोली —तू चला जायेगा न? छोटकू ने गरदन हिला कर हामी भरी. फिर पगडंडी पर उतरने लगा.

लौटते हुए लखराजी छोटकू के बारे में ही सोचती रही. वह खुश थी कि छोटकू जो काम अपने बाबू के साथ पांच-छह वर्षों के बाद करता, उसे उसने अभी से ही शुरू कर दिया था. स्कूल जाना उसने पिछले साल छोड़ा था. पास में किताबें नहीं होने के जुर्म में मास्टर ने दस बेंतों की सजा दी थी. दूसरे दिन से उसने स्कूल जाना छोड़ा तो फिर कभी नहीं गया. तब से उसने रेल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इंजन के इर्द-गिर्द खासकर वहां, जहां इंजन रुकता था, कोयले की झुर्री और मंडी की सड़कों पर गोबर चुनना शुरू कर दिया था. लखराजी कोयले की झुर्री और गोबर की गुलटिक्की बनाने लगी थी. रामसरन स्टेशन वाली दूकान के लिए एक रुपये में सौ गुलटिक्कियों के हिसाब से नियमित रूप से गुलटिक्कियां खरीदने लगा था. पिछले दिनों लखराजी को बनी हुई गुलटिक्कियां बेच डालने में कभी कोई दिक्कत नहीं हुई थी. छोटकू हलकी-फुलकी आमदनी का जरिया बन गया था.

इन्हीं दिनों रत्तीराम के लिए नया संकट उठ खड़ा हुआ था. पिछले दो-तीन महीनों से अखबार की बिक्री में गिरावट आ रही थी. संभवतः इसकी एक वजह यह थी कि आम मुसाफिरों ने बढ़ी हुई कीमत पर अखबार खरीदना बंद कर दिया था. इस स्थिति को देखते रहने के बावजूद स्टाल-मालिक ने प्रति अखबार पर मिलने वाले कमीशन की पुरानी दर में कोई बढ़ोतरी नहीं की थी.

ऐसे ही गाढ़े वक्त पर चलती गाड़ियों में सीखचों के सहारे एक डिब्बे से दूसरे डिब्बे में आने-जाने की कड़ी मेहनत से उसकी छाती में दर्द उठ आया था. हाथ-पाव कांपने लगे थे. पूरी देह भीतर से शुन्न होने लगी थी. ऐसा कई बार पहले भी हुआ था. तब भी उसने चलती गाड़ियों में अखबार बेचने का सिलसिला बंद नहीं किया था.

परसों उसने जमीन पकड़ ली थी. साढ़े चार बजे वाली पैसिंजर से उतरते ही उसके सिर में चक्कर आ गया था. झुग्गी में लौटते ही वह जमीन पर गिर पड़ा था. लेखराजी कुछ देर बाद आयी थी. वह रामसरन की दूकान में गुलटिक्कियां पहुंचाने गयी थी. छोटकू खांचों में गोबर और झुर्री लिये शाम को लौटा था.

झुग्गी में वापस लौट कर लखराजी ने तसली और डबरा साफ किया . फिर बचा हुआ पानी चूल्हे में डाल दिया. आग जल्द ही बूझ गयी. आग बुझते ही वह अधजली गुलटिक्कियों को राख से चुन-चुन कर अलग रखने लगी.

तभी रत्तीराम ने जोरों से हिचकी ली. लुगदी उसकी देह से सरक कर नीचे खिसक गयी. उसका चेहरा झुलसे हुए मांस-पिंड की तरह एक तरफ लुढ़का हुआ था. आंखों से जैसे भाप निकल रही थी. होठों पर पपड़ियां जमी हुई थीं. लखराजी जल्दी से टटियारी के दूसरे कोने में पड़े मुंहकटे घड़े से पानी ले आयी. रत्तीराम पूरे गिलास का पानी गटागट पी गया. पानी पीने के तुरंत बाद उसके पेट में एक लंबी मरोड़ उठी. आवाज इस तरह हुई थी जैसे मरोड़ नाभि के नीचे से उठी हो और कलेजे तक होती हुई पुनः नाभि तक वापस आ गयी हो. उसने करवट ली. फिर लुगदी को सिर तक खींच लिया.

चिंता में डूबी लखराजी टटियारी के बाहर चली आयी. यहां गोबर और झुर्री से भरी खांची पड़ी थी. कल परसों गुलटिक्कियां बन नहीं पायी थीं. सुबह रामसरन से जो उधार लिया था, उसकी चुकती के लिए उसे आज ही गुलटिक्कियां तैयार कर देनी थीं. वह तेजी से गोबर और झुर्री मिलाने लगी. . .इसी वक्त उसे बिरज की याद आयी.

★ ★

बिरज को बाबू की तबीयत की खबर देने लखराजी गल्ला मंडी में आयी. उस वक्त शाम का धुंधलापन पसर रहा था. यह मंडी बंद होने का समय था. आसपास के गांवों से आयी बैलगाड़ियां वापस लौट रही थीं. लद्दू बैलों की जमात भी इस वक्त तक तितर-बितर हो चुकी थी. मंडी में मरघट का सन्नाटा घुस रहा था.

लखराजी जोरावरचंद की गद्दी के सामने आ कर रुक गयी. यह मंडी की सबसे बड़ी गद्दी थी. इसी गद्दी में बिरज पिछले कई वर्षों से नौकर था. आधी रात हो या दोपहर, इस गद्दी में गल्ला हर वक्त उतरता-चढ़ता था. चूंकि यहां उसकी किसी भी वक्त जरूरत पड़ सकती थी, इसलिए जोरावरचंद ने उसे गद्दी में ही स्थायी कर दिया था. तब से बिरज के लिए घर जाना असंभव हो गया था. अपनी यह मजबूरी उसने मां से जाहिर भी कर दी थी. तब से लखराजी हफ्ते दो हफ्ते पर खुद बिरज से आ कर मिलने लगी थी.

कुछ ही क्षणों में बिरज आ गया. मां को इस वक्त मंडी में देख उसने अंदाज लगा लिया, मां कुछ जुटाने के इंतजाम में आयी होगी. गद्दी में उसके इस वक्त आने की कोई दूसरी वजह नहीं हो सकती थी. उसके कुछ

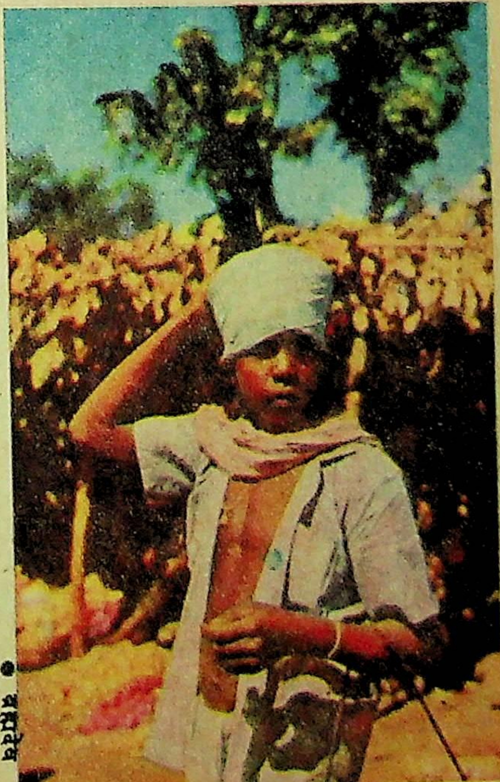

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेज़र से त्वचा कटाकर और खूँटे-से बाल उगाकर झेंपते रहिए या...

एन् फ्रेंच हेयर रिमूवर से रेशम-सी कोमल त्वचा पाइए

शेविंग ? नहीं, यह तो पुरुषों के लिए है। फिर त्वचा कटने और बाल कड़े उगने का भी डर। तो ? इसके लिए एन् फ्रेंच हेयर रिमूवर लगाइए। कैसे ? बिल्कुल आसान है : अनचाहे बालों पर क्रीम लगाइए; थोड़ी देर ठहरिए, फिर गीली रूई से पोंछ डालिए। यह त्वचा के नीचे जाकर कार्य करता है। देखा बाल ग़ायब ! आपकी त्वचा हफ़्तों मुलायम। तो छोड़िए रेज़र, एन् फ्रेंच हेयर रिमूवर अपनाइए !

एन् फ्रेंच हेयर रिमूवर

अनचाहे बालों को हटाने का मनचाहा क्रीम

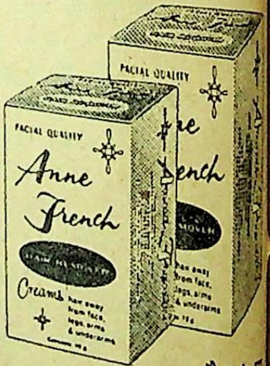

Licensed user of TM : Geoffrey Manners & Co. Ltd.

126 HR-203 Hin

२ साइज में सुलभ : ४० ग्रा. और ७५ ग्रा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शंकर (जन्म : १९४७) ने हालांकि काफी कम लिखा है लेकिन जो कुछ भी लिखा है वह छोटी-छोटी पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ है. पिछले दो वर्षों से एक अनयितकालिक पत्र का संपादन कर रहे हैं और आज कल वाणिज्य कर विभाग में प्रशिक्षणाधीन अधिकारी हैं.

पूछने के पहले ही लखराजी पूछ बैठी—बाबू को देखने नहीं चलेगा. परसों से उसके पेट में मरोड़ें उठ रही हैं. उसने आज भी कुछ नहीं खाया..

बिरज ने घबड़ाहट के साथ गद्दी के भीतर देखा. उसे पता था, जोरावरचंद उसे यहां मां से बातें करते देख बिगड़ उठेगा. खुद जोरावरचंद आज रोज से ज्यादा व्यस्त दिख रहा था. दरअसल रात को गद्दी में 'चेकिंग' के लिए साहब आने वाला था. सुबह में ही उसने गद्दी के तमाम कामगारों को हिदायत दे दी थी. बिरज ने ऐसी 'चेकिंग' कई बार पहले भी देखी थी. वह जानता था, रात होते-होते जोरावरचंद उसे गद्दी से हरफेर कटरे के पहरे पर भेज देगा. जब सुबह वह गद्दी में आयेगा, तब पता चलेगा—रात बिक्री टैक्स का साहब आया था. बगल के शहर से कोई मेम भी आयी थी. साहब चावल के बोरों की जांच करने की बजाय रात भर लुढ़का पड़ा था.

—तू देख नहीं रही है, सेठ कितना बेचैन है? अभी दस रोज भी नहीं हुए, उसने चावल दिया था. मेरी माहवारी वह इतनी जल्दी-जल्दी नहीं चुकायेगा. तू चल मैं सुबह आऊंगा. कहते हुए बिरज गद्दी के सामने से हटकर बगल के घूरे के पास खड़ा हो गया. लखराजी ने मान लिया, बिरज के लिए जरूर कोई मजबूरी होगी. उसने चुपचाप रास्ता पकड़ा.

* *

छोटकू रात को आठ बजे तक भी वापस नहीं आया. कल वह शाम ढले ही लौट आया था. उसके हाथों बहुत कम ही अखबार बिके थे. जब उसने दिन भर की बिक्री के पैसे दिये थे, उस वक्त लखराजी की आंखों में चमक आ गयी थी.

मंडी से लौटने के बाद जब उसने ढिबरी जला कर रत्तीराम को देखा था, छोटकू की याद तभी आयी थी. सुबह छोटकू के बाबू ने कुछ नहीं खाया था. शाम को छोटकू के पैसे से ही चावल खरीदने की बात लखराजी ने सोची थी. कहीं चावल-नमक की दूकान बंद न हो जाये. वह चिंतित हो उठी थी.

लखराजी झुग्गी से बाहर निकल आयी और वहां तक गयी, जहां वह सुबह छोटकू को छोड़ने गयी थी. स्टेशन की तरफ जाने वाली पगडंडी पर जहां तक उसकी नजर जा सकती थी, वहां तक उसने गौर से देखने की कोशिश की. जब छोटकू नहीं दिखायी पड़ा, तभी उसे खयाल आया कि वह स्टेशन पर चल कर रामसरन की दूकान देख ले. मौके-बेमौके छोटकू वहां भी बैठता था. वहां बैठने से सबसे बड़ा फायदा यह था कि वह मुसाफिरों के जूठे गिलासों में बची चाय जमा कर-करके अपने लिए भी चाय जुटा लेता था. कई बार रामसरन ने खुश हो कर उसे ताजा गिलास भी दिया था.

रामसरन की दूकान पर पहुंच कर उसने चारों तरफ नजर दौड़ायी. छोटकू कहीं नजर नहीं आया. दूकान पर सिर्फ दो-तीन मुसाफिर बैठे थे. फिर भी तसल्ली के लिए उसने रामसरन से पूछ लिया—छोटकू को देखा तुमने? आया था इधर?

रामसरन ने नकारात्मक मुद्रा में सिर हिलाया. तब लखराजी को अनायास सिनेमा हौल की याद आ गयी. वह एकबारगी खुश हो गयी. उसे लगा जैसे उसने छोटकू को ढूंढ़ लिया हो. वह यह सोच कर आश्वस्त हो गयी कि पैसे पा कर छोटकू सिनेमा में घुस गया होगा. चलते-चलते उसने रेलवे कैंटीन, बस पड़ाव और गांधी-स्थान भी देख लिया.

सिनेमा के गेट पर उसके खड़ा होने के थोड़ी ही देर बाद शो टूट गया. वह निकलने वाले हर आदमी को बहुत गौर से देखती रही, भीड़ में से छोटकू की उम्र का कोई लड़का नहीं निकला. आधे से ज्यादा लोगों के निकल चुकने पर उसने सोचा छोटकू, भीड़ में पीछे पड़ गया होगा. वह कुछ ज्यादा ही उत्सुकता से देखने लगी. तभी रात वाले शो की घंटी बज उठी. बाहर खड़े लोग दौड़-दौड़ कर अंदर घुसने लगे. सिनेमा हौल का अहाता मिनटों में सूना पड़ गया.

सिनेमा हौल से लौटते हुए लखराजी भीतर से बेचैन हो उठी. जिन-जिन जगहों पर छोटकू के मिलने की उम्मीद थी, वह उन तमाम जगहों को देख चुकी थी. लखराजी के पांवों में इस वक्त तक थरथराहट आ गयी. निराश हो कर वह स्टेशन की तरफ लौटने लगी.

गांधी-स्थान से थोड़ा आगे रिक्शा वालों की बातें सुन कर वह अचानक बुत की तरह खड़ी हो गयी. उन्हीं में से किसीने बताया—डिहरी और करवंदिया के बीच कोई अखबार बेचने वाला लड़का शाम वाली पैसिंजर से डिब्बा बदलते वक्त गिर कर कट गया था. □□□

१४१-सी, गोरक्षिणी पथ, सासाराम.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय की भयानकता से जूझता समांतर साहित्य

● डॉ. वि...

कहानीकार परिवेश और जीवन-स्थितियों के प्रभाव से अपने जीवन-बोध और जीवन-साधना के अनुपात में अपनी अनुभूति से कथानुभव की जितनी सशक्त अभिव्यक्ति कर पाता है, कहानी उतनी ही सार्थक, समय-सापेक्ष और प्रामाणिक बनती है. ऐसे में साहित्यकार की प्रतिबद्धता विचार-धाराओं के अतिवाद को नकारती हुई, सीधे जीवन से जुड़ती है, और क्योंकि, जीवन की विचार-धारा-निरपेक्ष एक सहज-स्वाभाविक गति होती है, इसलिए रचनाकार न केवल जीवन की अभिव्यक्ति या विश्लेषण में अपनी एक स्वतंत्र दृष्टि की स्थापना करता है, बल्कि वह अपने अनुभव और पाठक के अनुभव के बीच से हट कर, गतिशील जीवन-प्रक्रिया के लिए, किसी भी विचारणा के निर्माण का दायित्व भी स्वतंत्र रूप से उनके ऊपर छोड़ देता है, जिनके लिए वह पूरी सतर्कता से रचना में प्रवृत्त है. इस प्रकार वह जहां अपने लिए एक स्वतंत्र चिंतन-क्षेत्र की मांग करता है, वहां दूसरे पक्ष की स्वतंत्रता का भी आदर करता है. लेकिन इन दोनों स्वतंत्रताओं को जोड़ने वाला एक सूत्र भी है. . . वह सूत्र है 'सामान्य जन' के संघर्ष में लेखक और 'आम आदमी' का सहभागी होना. यहां यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि संघर्ष की पूरी प्रक्रिया में लेखक खुद सामान्य जन होता है, कोई विशिष्ट व्यक्ति नहीं.

वर्तमान के संदर्भ में लेखक तथा आम आदमी की यह भागीदारी ज्यादा महत्व रखती है, क्योंकि जीवन के प्रत्येक स्तर पर वैयक्तिक और सामाजिक बिंदुओं पर, दोनों एक-सी स्थितियों के भोक्ता हैं. अतः आज की जीवन-साधना को 'रचनात्मक अनुभव' के स्तर पर व्यक्त करने में वही साहित्य कारगर होगा जो समकालीन जीवन से जुड़े अहम प्रश्नों को उजागर करते हुए यथास्थिति के विरुद्ध एक विकल्प की तलाश ले कर आगे आयेगा. समकालीन कहानी के संदर्भ में जब मैं रचना-धर्मिता के प्रस्तुत रूप पर विचार करता हूं तो 'समांतर कहानी' या 'आम आदमी के आसपास : आज की कहानी' की बात बहुत हद तक सार्थक और प्रामाणिक लगती है. इस सार्थकता और प्रामाणिकता की साक्षी के लिए यदि थोड़ा पीछे देखा जाये तो पता चलेगा कि कहानी के क्षेत्र में उभरे कई आंदोलनों का अंत बड़े दिलचस्प तरीके से हुआ. (यहां 'अंत' शब्द को मैं बिल्कुल स्थूल रूप में प्रयुक्त कर रहा हूं, क्योंकि मैं यह मानता हूं कि मानसिकता के आधार पर प्रत्येक नये आंदोलन से जुड़ी मानसिकता थोड़े-बहुत रूप में अब भी विद्यमान है.) हर आंदोलन में रचना-प्रेरणा की कुछ विशिष्ट स्थितियों को रेखांकित किया गया, लेकिन बाद में संबद्ध रचनाकारों ने खुद उस लक्ष्मण-रेखा को भंग भी किया—यह स्थिति कहानी के लिए अच्छी ही रही, क्योंकि इससे वैचारिक जड़ता टूटी और नयी जीवन-स्थितियों के लिए मार्ग खुला.

मोटे तौर पर **'समांतर—१'** (१९७२) के प्रकाशन से इस नयी कथा-संवेदना का प्रारंभ माना जा सकता है. यहां नयी कथा-संवेदना शब्द पूर्वापर संबंध सापेक्ष है, क्योंकि **'समांतर—१'** के संपादक कमलेश्वर ने **'नयी कहानी की भूमिका'** में नयापन भी स्थितियों में नहीं, बल्कि स्थितियों के प्रति नयी दृष्टि में माना है. और पहले युगारंभ के बिंदु पर कमलेश्वर की **'राजा निरबंसिया'**, **'कस्बे का आदमी'** कहानियां आयीं तो वर्तमान की नयी कथा-संवेदना के तहत **'बयान'** और **'जोखिम'** की रचना हुई. जैसा कि मैं पहले एक लेख **'आंदोलन और हिंदी कहानी'** में लिखा था, 'प्रतिकूल स्थितियों का जन्म मोहभंग की प्रक्रिया प्रारंभ करता है और उनकी परिपक्वता मोहभंग की प्रक्रिया को पूरा करती है. यदि इस बीच कोई अनुकूल स्थिति नहीं आती तो लेखक का दूसरी दिशा में सोचना अनिवार्य हो जाता है. यह दूसरी दिशा ही उसे नयी भाव-भूमि—संघर्ष भूमि—पर ले जाती है, जहां वह संघर्ष का धरातल, रूप और दिशा तलाश करता है.' कहना न होगा कि आज की समांतर कहानी ने 'आम आदमी के आसपास' उस संघर्ष की जमीन देखी और उसके सहभागी बनने में वह अपनी दिशा तलाश रही है.

* *

इस दृष्टिकोण से समांतर कहानी के सीधे दो पक्ष हो जाते हैं. एक पक्ष में वह उन सारी शक्तियों के उन्मूलन का स्वर-घोष करती है जिनके कारण आज के समाज में आम आदमी ऐसे दमघोंटू वातावरण में रहने को अभिशप्त है जहां उसकी कम-से-कम आवश्यकताओं की पूर्ति का आधार भी लुप्त हो गया है. दूसरे पक्ष में वह आम आदमी के संघर्ष की अभिव्यक्ति करते हुए उन सारे कमजोर स्थलों को भी बेरहमी से चीर रही है, जिनके कारण आम आदमी के संघर्ष की पकड़ दुर्बल हो रही है. इसी प्रक्रिया में समांतर कहानीकार को उस बिंदु की तलाश है, जहां अंतरवर्ती दुर्बलता का ह्रास हो और प्रतिगामी शक्तियों के ध्वंस के रास्ते खुलें.

तो क्या पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित प्रगतिशील आंदोलन और समाजवाद के राजनैतिक नारे ने प्रतिगामी शक्तियों का ह्रास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं हुआ? उत्तर है, नहीं. ही हुआ. बल्कि ये शक्तियां कई नये रूपों में आम आदमी की चेतना पर अपना शिकंजा कसती जा रही हैं. स्वतंत्रता के बाद, बावजूद अनेक स्थूल निर्माणों के, अनेक पंचवर्षीय योजनाओं के, अनेक नये आर्थिक उपायों के, आम आदमी हर मोर्चे पर गिरता ही गया है. उपलब्धि के रूप में उसे केवल वह मानसिकता मिली, जिससे वह सिर्फ इतना ही समझ पाया कि सारी स्थितियां उसके प्रतिकूल चल रही हैं और उसे किसी ठोस आधार पर अपनी लड़ाई लड़नी है. पुराने जमाने के राजा, जमींदार, सेठ-साहूकार अब नयी शक्लें ले कर उसके सामने हैं और वह अभी भी शायद पूर्व-वत असहाय है. लेकिन इस यथार्थ के साथ कि वह निरंतर परास्त हो रहा है, उसकी आंखों में यथार्थ का एक और रूप स्पष्ट हो गया—वह समझ गया कि उसकी सहन-शीलता, भोलेपन और विश्वास-मयी चेतना के विरुद्ध उसके अपनों ने ही उसे पीड़ा पहुंचायी.

यह बहुत दूर की बात नहीं कि सामाजिक मोर्चे पर सदियों से जो लड़ाई लड़ी जा रही थी, आज वह बेमानी हो गयी है, शायद इसलिए कि उसके अस्तित्व को खतरे में डालने के लिए एक नया राजनैतिक-आर्थिक मोर्चा खोल दिया गया और व्यवस्था की कारगुजारी देखिए कि आर्थिक और राजनैतिक संधि इस रूप में की गयी कि वर्तमान स्थिति से बेहतर स्थिति बनाने के लिए व्यापक संघर्ष के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं रह गया. क्योंकि इस देश का पूंजीवादी संस्थान तथा उससे पालित-पोषित राजतंत्र यह जानता है कि प्रांतों, वर्गों, और क्षेत्रों में बंटी भारतीय जनता के लिए एकजुट हो कर किसी भी व्यापक संघर्ष को रूप देना निकट भविष्य में कठिन होगा, शायद इसलिए चारों तरफ व्यवस्था की लूटपाट जारी है.

राजनैतिक रूप से सत्ता-धारियों ने मध्यवर्ग को कुछ सुवि-धाएं दे कर अपनी और आम आदमी की लड़ाई के बीच जैसे एक 'सैकंड लाइन ऑफ डिफेंस' खड़ी कर दी. एक पक्ष को सत्ता ने आत्म-रक्षा के लिए लड़ते शक्तिहीन करने की चाल चली; दूसरे पक्ष को सुविधाओं के संधान का ग्लैमर दिया.

अब प्रश्न यह है कि लेखक, सत्ता के संदर्भ में, व्यवस्था के प्रसंग में, किस पक्ष में आता है? इस स्थिति का विश्लेषण दिल-चस्प हो सकता है, लेकिन वह अपनी परिणति में अत्यंत भयावह भी लगता है. इस बीच हुआ यह है कि मध्यमवर्ग को सुविधाएं देते हुए व्यवस्था ने लेखक को भी उसी ग्लैमर में घसीटने का प्रयत्न किया. परिणाम यह हुआ कि तीव्र गति से उभरने वाला संघर्ष दोहरी मार खा कर अवरुद्ध होता दिखायी दिया. लेकिन सजग लेखक इस रोटी के टुकड़े के पीछे छिपी चालाकी को समझता है. वैसे यह समझना उसकी नियति भी है और जरूरत भी.

व्यवस्था के ग्लैमर में प्रवेश करने पर भी लेखक की मानसिकता आम आदमी से जुड़ी रही, क्योंकि उसके लेखन का चिंतन, रचना की निर्णय - शक्ति आम जनता की विभीषिका, असहायता और यंत्र-णाओं में उभरती है. वह यंत्र-णाओं को तो नजरंदाज भी कर सकता है, किंतु उससे बने पूरे माहौल से व्यक्त होते संवेदन

डॉ. विनय

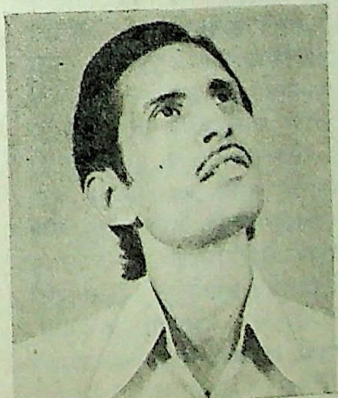

[illegible] नहीं [illegible] सकता. जो इस कला में भी माहिर हैं, उनके विषय में कुछ नहीं कहना—और हमने देखा कि जिन्होंने यह कला अपनायी, वे पूरी तरह से सम-कालीन न होते हुए भी रचना के स्तर पर रैलेवेंट नहीं रह पाये—तो समय को ठीक तरह से देखने-समझने वाले लेखक ने सारी प्रतिरोधी शक्तियों की सक्रियता के विरोध में रचनात्मक सक्रियता तीव्र की और आम आदमी के समांतर संघर्ष में खुद को निबद्ध किया. हुआ यह कि व्यवस्था की चमक में वह फंसा, किंतु व्यवस्था का शिकंजा इतना कसा हुआ है कि वे तमाम त्रास जो आम आदमी को आर्थिक, सामाजिक मोर्चों पर झेलने पड़े, लेखक को भी नैतिक स्तर पर उन्हें झेलने को विवश होना पड़ा. यही वह बिंदु है, जहां से लेखक और आम आदमी की भागीदारी शुरू होती है. लेखक ने भी व्यवस्था के शिकंजे में अप-मान-बोध, असहायता-बोध और टूटन से साक्षात्कार किया. इससे हुआ यह कि उसे अपने अस्तित्व की सुरक्षा के लिए आम आदमी के साथ रहने पर मजबूर होना पड़ा. जहां यह मजबूरी आरोपित की गयी, वहीं लेखन गैर-जिम्मे-दाराना तरीके से, प्रकारांतर भेद से, पूंजीवादी शक्तियों की इच्छा को ही पालता रहा, लेकिन इसके विपरीत सजग लेखक, दूसरी दिशा में जीवन के स्पंदन के साथ चलता रहा और एक पूरी पीढ़ी नयी रच-नात्मक शक्ति से 'आम आदमी' के नायकत्व को स्थापित कर भ्रष्ट राजनीति और चालाक पूंजीवादी संस्थानों से संघर्ष के स्तर पर आमने-सामने आ गयी. परिणाम स्वरूप समांतर साहित्य की नयी संवेदना रूपायित हुई.

समांतर कहानी का नायक 'सामान्य जन' लोक-जीवन में विविध स्थितियों और समस्याओं से ग्रस्त है. वह अतिवामपंथी का क्रांतिकारी मन भी नहीं, और सामंतवादी चेतना में पालित-पोषित, अपनी स्थिति को सहज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वीकारने वाला, व्यक्ति भी नहीं उसके पास एक ओर आर्थिक वृत्त में टूटता खुद का व्यक्तित्व है, दूसरी ओर समय की सापेक्षता में जन्म लेने वाली द्विविधा-रहित अपराजेयता भी. एक उसके वर्तमान का यथार्थ है, दूसरा उसके आगे की चिंता. अपने संघर्ष के एक स्तर पर, उसकी समस्या है कि वह किस प्रकार आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विषमताओं से जूझते अपने अस्तित्व को वरण के एक ऐसे निर्णायक दौर पर ले जाये, जहां वरण की सच्चाई और ईमानदारी की समांतरता हो.

* *

अब देखना यह है कि आज की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि में समांतर कहानी के जिस वैचारिक आधार को प्रतिपादित किया गया है, उसकी सफल अभिव्यक्ति कहानियों में हो पायी है या नहीं.

प्रस्तुत वैचारिक धरातल पर कुछ बुनियादी स्थितियां सामने आती है. ये स्थितियां समांतर कथाकार के लिए संघर्ष का रूप-आकार स्पष्ट करती हैं और इनसे जूझने के बाद ही वह निर्णय के दौर में कदम रख सकता है. इस दृष्टि से सबसे पहली स्थिति, जो आम आदमी की चेतना में भीतर तक प्रतिष्ठित हो चुकी है. . .अपने निर्णय लेने की क्षमता का अभाव है. दूसरी स्थिति है, निरंतर अपमान को सहन करते, प्रतिष्ठित प्रतिगामी शक्तियों को परास्त करने के अपने भीतरी लावे को सही तौर पर प्रयोग करना, क्योंकि गलत तरीके से संघर्ष की नीति को तैयार करके वह फिर से अपने को पीछे धकेला जाने के खतरे से भी अवगत है. तीसरी स्थिति अपनी ही जमात में उत्पन्न पूंजीवादी ताकतों के इशारे पर चलने वाले तत्वों के पराभव की है. इन तीनों बातों से मिल कर सामान्य जन का जो संश्लिष्ट रूप उभर कर आता है, समांतर कहानी उसके विविध पक्षों का उद्घाटन करती है—इसलिए उसकी दृष्टि में आम आदमी सिर्फ आम आदमी है. वह किसान, मजदूर, क्लर्क, सर्वहारा के वर्गों में बंटा हुआ न हो कर संश्लिष्ट व्यक्ति (व्यक्तित्व) है.

जैसा कि मैंने पहले कहा कि यह संश्लिष्ट व्यक्ति ही समांतर कहानी का नायक है. आज की कहानी में यह नायक अपनी अनेक समस्याओं, अंतर्विरोधों और संघर्षशील प्रवृत्ति को ले कर कहीं व्यवस्था के दमन-चक्र में पिसता दिखायी देता है, तो कहीं देश-विदेश के बदलते राजनैतिक संबंधों के कारण अपनी सत्यता को प्रमाणित न कर सकने के क्षोभ से पीड़ित है. कहीं पर वह आर्थिक संकट में फंसा अपने और दूसरों के बीच दूर तक दिखने वाले फासलों की रेलिंग पर चिपके हुए अर्थहीन जीवन की वेदना से ग्रस्त है. उसकी कुछ समस्याएं नितांत अपनी हो सकती हैं. किंतु वे स्व-निरपेक्ष विस्तृत समाज और व्यापक कालखंड की उपज होने के कारण सब की समस्याओं के रूप में उभरती हैं. कुछ ऐसी हैं, जिनका उससे सीधा संबंध नहीं है, फिर भी उनके होने-न होने की स्थिति से उसके अस्तित्व का संबंध जुड़ जाता है. वह पाता है कि स्थितियों के निर्माण में उसका कोई योग नहीं रहा, फिर भी वही एकमात्र ऐसा व्यक्ति है, जो उनके दंश को अपने में गहरे गड़ा हुआ महसूस करता है. भीष्म साहनी का 'वाङ् चू' चीन और भारत के राजनैतिक संबंधों के बिगड़ने पर पूरी कोशिश और निरीहता से भी अपनी ईमानदारी का विश्वास नहीं दिला पाता. वह जिस त्रास को भोगता है, उसमें उसका पक्ष निरंतर कमजोर पड़ता चला जाता है. इससे अलग से. रा. यात्री की कहानी **'अंधेरे का सैलाब'** और श्रवणकुमार की **'नहीं, यह कोई कहानी नहीं'** शिल्प की दृष्टि से रिपोर्ताज लगती हुई भी संवेदना के स्तर पर प्रभावित करती हैं. इनकी सफलता जीवनगत सामान्य स्थितियों को अनेक स्तरीय बना कर प्रस्तुत करने में है. बस बिखरते हुए संवेदनात्मक सूत्रों को एकत्र करने के लिए अंदर की गहराई की प्रतीक्षा करता है. . . लेकिन तब तक सब कुछ निर्जीव और बीता-सा हो जाता है.

वस्तुतः आम आदमी की असहायता के स्तर पर स्तर उद्घाटित करती हुई कहानियां अर्थ-संदर्भ में इतनी व्यापक हो जाती हैं कि वे मानवीय सत्य की सीमा का स्पर्श करती हैं. ऐसे में एक घटना पूरे आकाश पर छाती हुई एक प्रतीक, या चरित्र, बन कर वेदना का घनत्व उपस्थिति करती है. यहां वे सारे अंतर्विरोध भिन्न सूत्रों से गहराते हुए कहानी को सार्थकता प्रदान करते हैं.

* *

अब तक 'समांतर कहानी' के रूप में जितनी कहानियों का प्रकाशन हुआ है, उनमें से कुछ विशिष्ट कहानियों के आधार पर यह देखा जा सकता है कि समांतर कथा-लेखक बुनियादी रूप से आम आदमी से जुड़ा है. उसका आम आदमी पूरे समाज में व्याप्त है. वह सड़क पर खड़ा भीख मांग रहा है, फैक्टरी में मजदूरों के अधिकारों के लिए लड़ता मृत्यु का वरण कर रहा है, पूंजीवादी संस्थानों या सेठ-साहूकारों की चालाकी के कारण जमीन का आखिरी टुकड़ा बेच रहा है या अपना काम करवाने के लिए किसी अफसर को 'कॉल गर्ल' के रूप में अपनी बीवी पेश करने की मजबूरी में जी रहा है, या आर्थिक चक्की में पिसते तंबोला खेल कर जीतने की उम्मीद में, बची जमापूंजी खर्च कर रहा है या फिर पैसे वालों के द्वारा खोले गये पब्लिक स्कूल की चमक के मुकाबले शिशु मंदिर का स्वप्न देखते-देखते अपने घर को छोड़ रहा है—तात्पर्य यह है कि जीवन की सारी असुविधा उसके कंधे पर बैठी है और वह अपमानित हो कर अपनी असहायता के माहौल में सांस लेने को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवश है. कहीं पर उसकी विवशता इतनी गहरा जाती है कि वह खुद अपने बच्चे के पेट में छुरा घोंप देता है.

लेकिन इन सारी चरित्रगत स्थितियों से यह आभास नहीं होना चाहिए कि यह कहानी केवल आदमी की दुर्बलता की अभिव्यक्ति ही करती है—अपितु उस संघर्ष की ओर भी संकेत करती है, जिसकी व्यापकता आज के जीवन के स्वास्थ्य की पहचान है. कहानी की सार्थकता इसी बात में है कि वह सारे अंतर्विरोधों के साथ समय और समाज की इकाई के सही जीवन की प्रतिध्वनि सुना सके. . .क्योंकि इसमें असहायता के तत्व ही नहीं, संघर्ष के तत्व भी हैं, अतः जीवन के विस्तृत क्षितिज पर उभरती शक्तियों का परिचय भी होता चलता है. जैसे हमारा जीवन चिरंतन है, वैसे ही हमारा श्रम भी चिरंतन है, और उसी रूप में सामान्य जन की विवशता और संघर्ष भी चिरंतन है. तो, समांतर कहानी में नितांत सामयिक स्तर पर मानव का एक अक्षत रूप भी मिलता है. वस्तुतः यह कहानी मानवीय द्वंद्वों - अंतर्द्वंद्वों के चित्रण के माध्यम से समय की भयानकता से जूझते, संघर्षरत मानव की जिजीविषा का संकेत करती है.

इस प्रकार के अनेक प्रसंगों में आम आदमी के कष्टों को व्यक्त करती इस चेतना की कहानियों ने अपनी सार्थकता के अनेक प्रमाण दिये गये हैं. जितेंद्र भाटिया की कहानी 'शहादतनामा' छोटे मजदूरों की पूरी कौम की विवशता को समझाती है. यहां पर व्यवस्था के द्वारा समांतर जीवन जीने वालों के बीच भी खाई पैदा करने की कोशिश का निर्मम रूप उजागर किया गया है. ट्रेजेडी केवल यह नहीं है कि अमरजीत के बहाने पूरी कौम को कॉस्टिक टैंक में ढकेल दिया गया. ट्रेजेडी यह है कि साधारण सुविधा दे कर हत्या के चश्मदीद गवाह को तोड़ लिया गया. 'आम आदमी' को अपनी लड़ाई लड़ने वक्त हर स्तर पर सुविधा की चास को झटकना होगा, वरना वर्षों-युगों तक यह लड़ाई किसी भी सही निर्णय तक नहीं पहुंच सकती. कुछ ऐसी ही ट्रेजेडी राम अरोड़ा की **'विदा-अलविदा'** कहानी में इस आधार पर दिखायी गयी है कि विभाजित लड़ाई कभी भी आदमी के अस्तित्व को नहीं बचा पाती. इस कहानी में भी बाहरी और व्यवस्था से संबद्ध शक्तियां भुवन को निरंतर तोड़ती हैं. यहां भी ट्रेजेडी भुवन के टूटने में उतनी नहीं,जितनी उसकी पत्नी को बाहरी शक्तियों के द्वारा अपनाने के बाद पैदा की गयी स्थितियों की टकराहट में है. यह कहानी कई स्तरों पर अपनी सार्थकता घोषित करती है. जहां से आम आदमी का संघर्ष कमजोर पड़ता है, वहीं उससे बचा जा सकता है, दूसरी आरोपित दिशा की खोज की जा सकती है... पर सही और ईमानदार लेखक कमजोर पड़ते संघर्ष के बिंदु को पूरी तरह से निःशेष करता हुआ आरोपित निर्णयात्मक तत्वों का ध्वंस दिखाता है. यह नहीं हो सकता कि पत्नी व्यवस्था के द्वारा पालित-पोषित पब्लिक स्कूल में काम करती रहे और पति उसके विरोध में शिशु मंदिर की योजना की असफल कोशिश करता रहे. दरअसल विभाजित लड़ाई का पूरा ढांचा उन्हीं लोगों के द्वारा खड़ा किया गया है जो समग्र लड़ाई को पनपने नहीं देना चाहते.

और यहां, हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि समांतर चेतना की कहानियां अभी रचना के प्रथम चरण में समय की नब्ज को परखने की प्रक्रिया में हैं. देखना यह है कि कब तक खेतों के बिकने के कारण जट्टी विधवा बनती रहेगी या जमीन का आखिरी टुकड़ा, कब तक परिवार की आर्थिक स्थिति में सांस फूंकता रहेगा.—या फिर कब तक तमाशा दिखाने वाला बाप भूल से अपने बच्चे के पेट में चाकू घोंपता रहेगा. और कब तक छोटा मजदूर अर्थी पर लुटाये जाने वाले पैसों से दिन भर की मजदूरी पूरी करेगा.

★ ★

पर, जहां तक कहानी के अच्छी, सामान्य या विशिष्ट होने की बात है, वहां केवल समयगत संदर्भों की गहरी अर्थवत्ता के साथ अभिव्यक्ति ही एक मात्र सार्थकता का आधार नहीं है. उसके लिए ऐतिहासिक विकास के दौरान विरोधी शक्तियों के विरोध में, जहां वस्तु के नये क्षेत्र खुलते हैं, वहां संरचना की नवीनता भी अपेक्षित है. समांतर कहानी वस्तु और संरचना, दोनों धरातलों पर नये क्षेत्रों का अनुसंधान करेगी, यह विश्वास प्रथम चरण की अनेक विशिष्ट रचनाओं से हो जाता है. वर्तमान में प्रचलित अनेक चिंतन-पद्धतियों की अतिवादिता को छोड़ कर सामान्य जन की उभरती अनेक समस्याओं को स्वतंत्र दृष्टि से रचनात्मक स्तर पर व्यक्त करना अपने समय के प्रति जागरूक लेखक का पहला कर्तव्य है. इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता कि हमारे समय की वास्तविकता में पराये श्रम पर जीने वालों का पराभव और अपने श्रम की पूरी कीमत चाहने वालों का अभ्युदय ऐतिहासिक तथ्य है. समांतर कहानी ने इस पराभव और अभ्युदय के मध्य संचरित मानसिकता की बेलाग अभिव्यक्ति की है. एक नयी शक्ति निश्चित रूप से आज के रचनाकार के सौंदर्य-बोध को नवीनता दे सकेगी. उसके शिल्प को ताजगी देगी. और अंत में एक बात और कि उससे संपूर्ण पंक्ति में वे लोग बहुत जल्दी पिछड़ जायेंगे, जिन्होंने महज फैशन के रूप में इस स्थिति को स्वीकार किया है.

कुल मिला कर, इस नयी कथा-संभावना के द्वारा अनेक नये कहानीकारों के लिए सोचने-समझने और रचनात्मक सफलता का नया रास्ता खुला है. □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गांव की पचायत बैठी है. औतार बाबा सबसे ऊंचे आसन पर हैं. बांस की मूंज से बुनी खटिया पर अपनी धोती के आधे हिस्से से कमर और दोनों घुटने बांधे झूमते हुए न जाने उन्होंने कितनों का नियाव किया है, कितनों का उद्धार. गांव का कोई झगड़ा ऐसा नहीं है, जो उनके बिना निबट जाये. घर वाले उन्हें 'छुट्टा' कहते हैं, तो कहते रहें. औतार का क्या है? वह कहीं भी दो कौर खा लेंगे. किसी जजमान भगत के कोल्हुआड़े या खरिहाने सो लेंगे. फिर नाती-पोते आ कर जगायेंगे—ए बाबा! बिज्जे भईल बा. औतार बाबा बिगड़ जायेंगे—चल-चल, हमको खाने की कमी है! खा-पी कर मस्त हैं. दो घड़ी में पंचाइत जुटे वाली है. हम कैसे जा सकते हैं! बच्चे घर चले जायेंगे. गोजर चौधरी सुरती मलते हुए आयेंगे—काहो पंडित बाबा! अबही पंच लोग नहीं आये! घड़ी-दो घड़ी में पंच लोग भी आ ही जायेंगे. औतार बाबा करवट बदल कर बैठ जायेंगे, और उनकी धोती के घेरे में कमर और दोनों पैर घिर जायेंगे. वह झूमने लगेंगे—हां, तो कह हो, गोजर भाई! ई जुटान काहे वास्ते भईलबा. यही सूत्र पकड़ कर फरियादी अपने दोनों हाथ जोड़ कर शुरू करेगा—सरकार, ऊ खदरुआ के मेहरारू के गुन देखीं. ए उमिर में चोरी कर रहलि बा. ऊंख तुरले बा.

बिरजू पंडित बीच में टोकना अपना परम धर्म मानते हैं. जवान औरत का केस हो और वह न बोलें! ऐसा हो नहीं सकता. वह दहाड़ते हैं—तुम खेत में पकड़ा उसको! खदेरू बो अपनी छोटी वाली आंख को और भी छोटी करके कहेगी—ए बाबा, आप चुप रहीं. हंसी का एक दौरा पड़ जायेगा और पंचायत हाथ से जाती रहेगी.

पंचों में बाबा लोग अधिक हैं और खदेरू की गली से हो कर ही अधिकांश बाबा लोगों के घर की राहें जाती हैं. इसलिए रोज पकड़ी जाने वाली खदेरू बो पंचायत से ऊपर है.

लेकिन आज की पंचायत वैसी नहीं है. आज गांव रहे, चाहे रसातल में जाये. यह अंधेर नहीं चलेगा. बाबा-पट्टी, तेलीटोला और चमारपट्टी के बीच आज फैसला हो कर रहेगा. गोजर चौधरी का गजर बजा—तो ई जुटान काहे भईल बा, पंचो! सब लोग अपनी जगह सीधे हो गये. खटिया-चौकी पर बाबा लोग, पंच लोग और बाबा लोगों के नाक सुड़कते बच्चे. पंचायत में बाबा लोगों के बच्चे और परोजन में करन्न को हटा दे—ऐसा कोई माई का लाल नहीं. बुलाएगा कोई नहीं मगर आ जाने पर हटा दे, ऐसा भी कोई नहीं. किसनू की कानी आंख झपकती है. —हां, भाई, बोलो!

नीचे गोल घेरे में बैठे हुए अधनंगे, अधेड़ लोगों में सुगबुगाहट होती है. कुछ के चेहरे पर आतंक उभरता है! कुछ सहम गये हैं और कुछ हंस पड़ने को हो कर अपने को रोक रहे हैं. मगर चुप सभी हैं. बोलता कोई नहीं. सतुआ बाबा की ललकार मौन भंग करती है. —काहे रे साले! बोलो! चोप काहे हो? आतंक और गाढ़ा होता है. अधेड़ उमर का काला-कलूटा, कंगाल जैसा आदमी धीरे-धीरे औतार बाबा की खटिया की ओर बढ़ता नजर आता है. सबकी नजरें उसी पर लगी हैं. वह कुछ कहने को हो कर रुक जाता है. जैसे बात गले में अटक रही हो. किसनू कोंचता है—बोल भाई. का चुप हो!

किसनू को देख कर वह उत्साहित होता है. फिर हाथ जोड़ कर खड़ा हो जाता है. बिरजू महाराज फिर टोंकते हैं और वह बिना किसी की ओर देखे एक सांस में कहना शुरू करता है, अब उसे अभय मिल गया हो जैसे. —सरकार, हमार खता ई है कि हम धरम नाहीं छोड़त चाहल बानीं.

एक साथ ही सब लोग चकित हो गये.—कौन तुम्हारा धरम ले रहा है? बोल! बोल!

सब लोग शांत हुए तो उसने कहा—हम मंगल भाई के हियां नहीं खाये. ई हमार खुशी. एह पर ई बउका हमें गाली दिया, सरकार, और मारे के कहा. उधर से बउका गरजा—तू काहे नाही खइब हमरी घरे? हम कवनो डोम-चमार हैं? एक साथ सतुआ बाबा, बिरजू बाबा, औतार बाबा सभी गरजते हैं—काहे नहीं खइब, बोल? नीचे बैठे लोगों में कुतूहल की लहर दौड़ जाती है. एकाएक किसी का अट्टहास सुनायी पड़ता है और सबकी नजर घूम जाती है. गिरगिटवा हंसते-हंसते लोट-पोट हो रहा है—डोम-चमार, आरे भाई! डोम चमार से अधिक! डोम-चमार से अधिक! हंसता जाता है.

बिरजू महाराज डांटते हैं—ए गिरगिटवा, चुप रहु. तें का बीच में नाचे लगले! औतार बाबा गिरगिटवा की ओर गौर से देख रहे हैं—का हो गिरगिट, तूं जरूर कुछ जानत बाड़. का बाति ह बोल.

गिरगिटवा फिर हंसता है.—ए बाबा, जानत त रउरूं बानी. काहें नहखीं कहत. बोलीं!

सभी लोग संदिग्ध दृष्टि से औतार बाबा की ओर देखने लगते हैं. उनके चेहरे पर कई रंग आ-जा रहे हैं. किंतु वह बराबर अपनी धोती में आगे-पीछे झूम रहे हैं. औतार बाबा बोलते कम हैं. इसकी जानकारी सबको है, मगर यह मौका तो उन्हीं के बोलने का है. पीछे से एक आवाज आती है—बाबा का बोलें! रात कासी उनके पास आधी रात ले बइठल रहलें. सब तय हो गईल. सब गड़प. अब बाबा कुछ नहीं जानते हैं.

यह मोहन है, बिरजू महाराज का भतीजा. पंदरहवां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

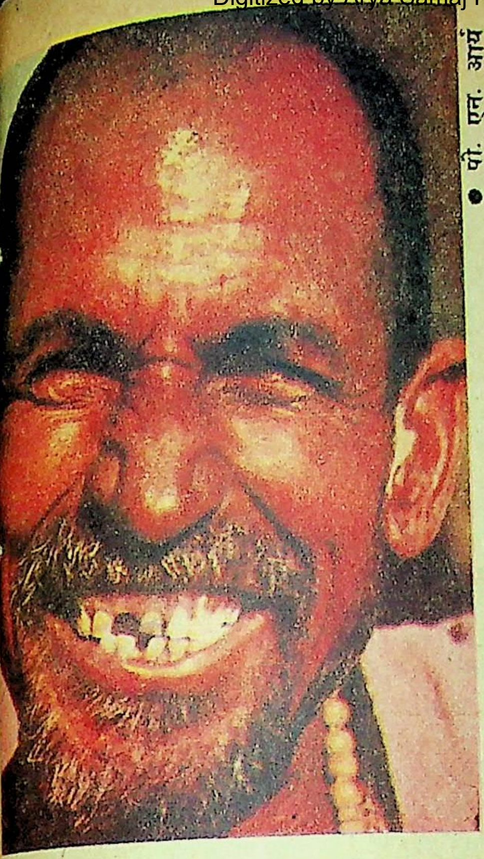

लगा है और अपने को गांव का सबसे बुद्धिमान महापुरुष मानते हैं. दर्जा छह में पांच बरस से सरका कूट रहे हैं. शादी हो गयी थी जब पहिले-पहिल गिरधारी मास्टर को दस रुपया पास-कराई दे कर दर्जा पांच पास हुए और छठे में गये. मेहरारू उनसे पांच-सात बरस बड़ी है. एक लड़की भी है मोहन बाबू की, जिसके चेहरे-मोहरे में गांव के लोगों को कभी बिरजू महाराज की, कभी किसी और की छाप दिखायी पड़ती है. बिरजू महाराज गांव के वैद्य-हकीम-डॉक्टर-ओझा-पंच-भंडारी-पंडित-पुरोहित सब हैं, इसलिए मुंह पर कोई कुछ नहीं कहता, लेकिन मोहन बो के नाम के साथ बिरजू बाबा का नाम जोड़ कर बूढ़े-जवान सबकी आंखों में चमक आ जाती है. मोहन बाबू का अधिक टैम पड़ोस के कस्बे में कचहरी के मुंशीजी लोगों के बीच कटता है. वैसे स्कूल में भी उनकी हाजिरी लगती है. एक बार यादव जी मास्टर साहब को छुरा दिखा कर उन्होंने फिट कर दिया था, तब से वह कभी इन्हें गैरहाजिर नहीं लगाते हैं.

दूसरे लोग चुप ही रहते हैं. कौन मोहन के गारी सुने जाय! बिरजू महाराज डांटते हैं—ए मोहन, तूं कहां इहां! जाके कस्बा-कचहरी देख! जा! चुप रह.

डांट का जवाब डांट में देते हुए मोहन बाबू कहते हैं—चुप रह तूं. बिरजू का चेहरा लाल हो जाता है, मगर चुप रहते हैं. मोहन बाबू चालू हो जाते हैं—औतार बाबा से पूछिल काल कासी से केतना लिहलें? का तैं कइलें? बोलत काहे नइखें! कैसे चुप हो गये हैं? घूसखोर कहीं के! और इतने तैश में आ जाते हैं कि धमधम करते हुए चले जाते हैं. सभी लोग राहत की सांस लेते हैं. औतार बाबा के प्रति उड़ती नजर सभी डाल लेते हैं. सतुआ बाबा डपटते हुए कहते हैं—कहु रे कसिया! चुप काहे बाड़े! काशी फिर हाथ बांध कर कुछ कहना चाहता है. बिरजू महाराज इशारे में बोलने को कहते हैं और वह बोलते लगता है—सरकार, हमार नियाव पंच सभे की हाथ में बा.

तब तक कड़कते हैं औतार बाबा—अरे ससुर, बाति कह.

न जाने कहां से फिर मोहन बाबू का आविर्भाव हो जाता है. वह बोलते ही प्रकट होते हैं—ऊ क्या बोले? मैं बतावत हूं. सुनो. चोकट चमार के जानते हैं कि नहीं? उनकी घरे परसों सूअर के गोश्त बनल रहे. समझते हैं कि नहीं समझते हैं? बड़कू और बिकरम ई दोनों आदमी दारू के साथ चिखना काट रहे थे. उहे बात इसने देख लिया, मुंडवा ने. आ कर अपने बाप से बोला कि चलो तुमहूं देख लो. कासी गये और छिप कर वे भी देख आये. अब बोलो.

इतने में बड़का गरजा—ए मोहन बाबू, जब तूं सनीचरी के घरवा में पकड़ाइल रहल आ चमरा कुलि तोहके धरिके पंचाइति में ले आवत रह लें कुलि, तब हमहीं छोड़वलीं. गिरगिटवा गवाह बा.

इतनी देर बाद गिरगिटवा गला साफ करके बोला—इसमें क्या खराबी है? मंत्री जी बोले हैं कि बाभन के लौंडों को चमार के घर सादी करने से इनाम मिलेगा. सादी नहीं भी करें तो चमार के लड़के उज्जर होंगे. बुद्धिमान होंगे. एही से हम कुछ नहीं बोला. उसका वाक्य पूरा भी नहीं हुआ था कि बिरजू महाराज खटिया से उतर कर खड़ाऊं उठाये दौड़ पड़े—कस रे सारे! चमार के नसल सुधारे के मोहने बाड़ें.

गिरगिटवा कूद कर भागा और पंचायत में भगदड़ मच गयी. मोहन अलग खड़े हो कर सबको ललकारने लगे. बड़का काशी के ऊपर चढ़ बैठा. किसी तरह सब शांत हुआ. सतुआ बाबा, औतार बाबा, किसनू गोजर, सबके चिरौरी-मिन्नत करने पर बिरजू बाबा और मोहन बाबू शांत हुए. बड़का को बैठाया गया और सबकी निगाहें नये सिरे से उसकी ओर केंद्रित हुईं. एक साथ कई लोग पूछने लगे—कस रे बड़का! तें बैसकुल के होके चमारे की घर में सूअर खइले ह! कुछ लोग थू-थू करने लगे. कई बाबा लोग आस्तीन चढ़ाने लगे. राम-राम! यह झूठ बात है. तेलीपट्टी के लोगों में खलबली मचती है मगर बाबा लोग ज्यादा परेशान दिखायी पड़ते हैं. धीरे-धीरे समझ जाते हैं कि बात उलट कर बाबा लोगों पर ही आ रही है.

मोहन बाबू पैंतरा बदल कर बड़े हो जाते हैं. —हां-हां ई सब झूठ है. हमने भी इसको सच नहीं माना. असल में मुंड़वा साला हम ब्राह्मन लोगों को बदनाम करना चाहता है. हम सब बाबा लोग तो काशी के यहां खाते हैं. उसका सीधा ले कर बनाते हैं. का का इसमें क्या।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

दोष है? और ई मुंडवा कहता है कि काशी के घर नहीं खायेंगे. इसकी ई मजाल! बिरादरी से बाहर कर दो.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी घबरा कर इधर-उधर देखता है, तब तक सतुआ बाबा आधे उठ पड़ते हैं.—सवाल इसका नहीं है कि मुंड़वा ने कासी को बदनाम किया. सवाल इसका है कि इसने हम पंचन को बदनाम किया. हम लोग कासी के घर खाते हैं और ई सार कहता है कि कासी का बेटा सूअर खाता है. अरथ विचार करो, पंचों! मतलब यह कि हम सब लोग सूअरखोर के घर खाने वाले हुए!

सब बाबा लोगों में जोश भर जाता है. सब काशी और मुंड़वा को गाली देने लगते हैं. काशी उठता है और कुछ न सूझने पर अपने बेटे मुंड़वा को पीटने लगता है.—इहे सार आग लगवलसि. ऊ चाहे जौन खांय, हमसे मतलब. दो-चार हाथ मार-पीट कर कुछ ब्राह्मण मंडली के सामने हाथ जोड़ता है.—सरकार हमार गलती है, माफी सरकार!

बाबा लोग फिर बिगड़ते हैं.—साला, माफी मांगता है! बाबा लोगों की इज्जत माटी में मिला दिया. माफी मांगता है. दंड भरो. इसका डांड सौ रुपया और बिरादरी को तीन भात. पक्का भोजन बाभन मंडली को.

काशी गिड़गिड़ाता है—सरकार, हम लुट जायेंगे. बच्चा है. नादान है. उसने कुछ नहीं देखा है. हमसे बड़ी गलती भई, महराज, हमार कोल्हू बंद है, सरकार. डांड हम कहां से देई, सरकार?

'डांड ई देई' की आवाज की ओर सब लोग घूम कर देखते हैं तो मोहन बाबू हाथ में एक बैल का पगहा लिये दिखाई पड़ते हैं.—कसिया के बैल खोल लाया हूं. रुपया दे. नहीं तो बैल नीलाम होगा. बोलो! एक, दो, तीन.

पंचों की बांछें खिल जाती हैं.

बिरजू महराज कहते हैं—कौनो मजाक है, कचहरी में झूठे थोड़े रहता है मोहना. पुलुस से दोस्ती है. जानता है कौन काम कैसे होता है. दंड वसूल करने का तरीका यही है.

काशी और मुंड़वा रोते हैं. उसके घर की औरतें चिल्लाती हुई बैल के पीछे-पीछे आती हैं. फिर एक हंगामा मचता है. किसी की कोई बात सुनाई नहीं देती. बड़का ताल ठोंकता है—सार हमको बदनाम करिहैं. दूसरे को बदनाम करने का फल भोगो!

गिरगिटवा फिर अट्टहास करता है.—और जुटावें पंचाइत? अब दें डांड नाहीं तो बेदखल बैल से. थोड़ी दूर जा कर कहता है—अरे कासी भाई! ई बाभन मंडली है, जियो तो खायेगी, मरने पर भी खायेगी. भागो. और जोर से हंसता हुआ चला जाता है.

यह गिरगिटवा भी अजब है. चालीस से उमर कम है, मगर दाढ़ी-मूंछ जटा बना कर घूमता है. मेहरी चमर टोली में सबसे सुंदरी थी. पड़ोसी गांव के बाबाजी के यहां रोज जाती थी. सोहनी और रोपनी में. बाद में बाबाजी आने लगे. एक दिन गिरगिटवा ने बाबाजी से कहा—महराज! चमार का दान लेंगे?

बाबाजी कुछ नहीं बोले. फिर हंसने लगे—हां-हां, गिरगिट भगत, काहे नाहीं लेंगे! दो, क्या दे रहे हो!

गिरगिट घर में गया और मेहरिया की बांह... बाहर आ गया, बोला—महराज, और कुछ तो है... आपके जोग, इहे है. आपके गोबर-पानी करेगी. हम... साधू हो गये. सारा गांव देखता रह गया. गिरगि... गांव छोड़ कर न जाने कहां चला गया. दो-तीन बरस... जटाजूट बढ़ाये लौटा तो पड़ोस के गांव के बाबा... उसकी बीबी के साथ परदेस जा चुके थे. तब से गिर... गिटवा गांव के सिवान पर पीपल के नीचे रहता... जून-कुजून गांव में आ कर दो कौर किसी के यहां... कर खा लेता है. और नारदजी का पेशा करता... सब जगह गिरगिट भगत मौजूद हैं. शादी-ब्याह, मर... जीयन से ले कर पंचायत-त्योहार तक.

गांव में सूखा पड़े तो गिरगिट भगत खुश हो... घूमते हैं. किसान इनकी अकाल-खुशी से चिढ़ते हैं... भगत कहते हैं—हम बोला है भगवान से, मत बरसा... पानी. गांव में दया-धरम नहीं रह गया. और बेईमानी करो! और चोरी करो! और बाबा लोगों को अपने... में सुलावें चमाइन लोग और ताड़ी पिलावें! पानी... बरसेगा. हम बोला है.

जब पानी बरसता है, और कई-कई दिन... लगातार बरसता है तो गिरगिट भगत कहते घूमते... कि हम बोला है मेघराजा से और प्रलै करौ. अत्याचार... रहा है. चमार खटिया से नहीं उतरता है, बाबा... देख कर. बाबा चमार के घर में पीछे से घुसता है. मुसलमा... को अंडा नहीं मिलता. बाबा अंडा खाता है. दूध... साला पानी मिलाता है, रासन में कंकड़. अब पा... नहीं खुलेगा.

कभी किसीको खीज आती है तो उसे चार गा... दे कर अपनी खीज मिटा लेता है. उससे गिरगिट... कोई फरक नहीं पड़ता. वह मस्त है. वह भगत है.

* *

पंचायत में सन्नाटा है. काशी का, हाथ जोड़ते... जोड़ते बुरा हाल है. मुंड़वा कभी रोता है, कभी रोते... रोते बड़का को, कभी अपने अभाग को गाली देता है... कहता है—हे भगवान, नियाव करो. पापी का पाप कहे... पर हमको उलटा डांड़ लगाते हैं. ई पंचाइत नाही, राव... का दरबार है.

मुंड़वा की माई, जिसको कभी किसी ने घर के... बाहर नहीं देखा, पंचों के सामने आंचल फैलाये भीख... मांग रही है—पंचो, नियाव करो! मुंड़वा के बाप के... सिर पर पहिले ही कर्जा है. बैल चलि जाई तो हमार... गांव छूटि जाई. सरकार माई-बाप! दोहाई हो.

उधर चमारों में हुड़दंग मच गया है. गोधन चमार... चोकट को अंधाधुंध गाली दिये जा रहा है...हुई सार अपने... सूअर खाई! ई तो ठीक. साहू के धरम काहें बिगाड़ी? बड़का को इसने काहे सूअर खिलाया? बिकरम चौधरी को काहे खिलाया? चमरटोली से बाहर करो.

कुछ चमार चोकट की तारीफ कर रहे हैं—अच्छा किया. बिकरम चौधरी कवनों गंवार हैं? बड़का कौनो बच्चा है? चोकट उन्हें बुलाने गये थे? अरे, वे सब जानते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब छुआछूत में कुछ नहीं रखा है. हमारे लरिका बका-पढ़ रहा है शहर में. ऊ बताता है कि दिल्ली में जनेऊ वाले बाबा लोग सूअर का गोस खाते हैं. इसमें कोई बुराई नहीं. आने दो बिरम चौधुरी को. पीछे से बोलता है—ऊ तो पीके पड़े हैं डीहे पर. जोर की हंसी.

यह बिकरम चौधरी मुखिया हुआ करते थे. बाप दलाल थे. पैसा छोड़ गये हैं. जमींदारों की दलाली का बेटा पी रहा है. कहता है, किसी के बाप का क्या, अपना पीते हैं. बीवी को संतान नहीं है. गांव में लोग तरह-तरह की बातें करते हैं—बिकरम खोजवा हैं. उन्हें मरद-वाला हथियारे नाही बा. कुछ कहते हैं—वह तो है मगर जब प्राइमरी में पढ़ते थे तो अलगू मुंशी उनहीं से मेहरारू का काम लेते थे. ऊहै लत इनको भी लग गयी. बेचारे लड़कों को मिठाई खिलाते हैं. लड़का हो कहां से?

कुछ लोग जो अधिक यथार्थवादी हैं, तार्किक कारण देते हैं. उनका कहना है कि बिकरम चौधरी में कोई खराबी नहीं. बिकरम बो तो कभी किसी को मना नहीं करतीं. बिरजू बाबा की चेलिन हैं. मूस महरा से बतियाती हैं. कस्बे की ओर भी जाती हैं. तो क्या सभी मर्द खोजवा हैं? जरूर कोई खराबी उनहीं में है.

वह बेचारी सब सुनती हैं, संतान-कामना से कुछ भी करने को तैयार हैं, देवी-बरम की मनौती से ले कर बिरजू बाबा की सेवा तक. मगर कोख नहीं फूटती तो वह क्या करें? चौधरी बिकरम मस्त हैं. अब सभापति के जमाने में उनकी मुखियाई नहीं चलती. न चले, दारू है और मिठाई पसंद करने वाले लड़के तो हैं!

अरे अब न मोहन बाबू बड़े हो गये हैं, मेहरी लड़की है—बिकरम की बड़ी मिठाई खाये हैं मोहन बाबू. अब तो बुलाने पर दूर छिटक जाते हैं. जायं. अपनी दारू भली.

सो, बिकरम चौधरी को कहां मालूम कि कैसी पंचायत हो रही है और उनके नाम पर कौन थूक रहा है! उनकी मेहरारू पंचायत की भनक पा जाती हैं और बीच सभा में आ कर हाथ नचाती हुई कहती हैं—कौनो मुंह-झौंसा उनकर नांव लेई त ओकर मूंह नोचि लेबि. अपने सूअर खाओ चाहे डांगर.

बिरजू महाराज पहले से ही रिस के मारे हांफ रहे हैं. बिकरम बो की उपस्थिति से क्रोध में वीर रस भी आ कर मिल जाता है. उछल कर ललकारते हैं—देखो चौधराइन, ई मुंड़वा और कसिया के. हम लोग जिसके घर खाते हैं, वह भला सूअर खायेगा? ई सब बाभन मंडली के खिलाफ जाल रचते हैं और बाभन सारे चुप हैं सब. देखो, कइसे धरम-करम का नास हो गया! उनके नथुने फूल जाते हैं और सतुआ काका उन्हें संभालते हैं.

★ ★

सतुआ बाबा बच्चों के बाबा हैं और अधेड़ों के काका. आधे लोग उन्हें सतुआ काका कहते हैं, आधे लोग सतुआ बाबा. गांव में सबसे बड़ा डील और सबसे लंबी उमर है. सफेद बाल. कभी किसी ने उन्हें कुर्ता-कमीज-बनियान पहने नहीं देखा. एक धोती, आधी कमर में होती, आधी ऊपर. जाड़ा, गरमी, बरसात, सतुआ काका की एक ही पोशाक. जाड़े में रजाई लपेट कर और लोग कउड़ा घेर कर बैठते, सतुआ काका सौ मील प्रति घंटा की रफ्तार से हनुमान चालीसा का पाठ करते हुए कुएं पर स्नान करते. न कांपना, न सिकुड़ना. नहा कर एक घंटा पूजा करते और किसी जजमान के यहां कुछ न हुआ तो अपने ही घर में भोजन बनाते. जो मिल जाये. वैसे उनके प्रिय भोजन में खिचड़ी या सत्तू का महत्व सबसे अधिक है. इसी सत्तू के चलते उनका अच्छा-खासा नाम बिगड़ गया. मां-बाप का दिया नाम था गिरधर चरण, मगर तसला भर सतुआ घोल कर पीने के चाव के कारण गांव के लोगों ने सतुआ काका कहना शुरू कर दिया. उन्हें इस पर कुछ एतराज भी नहीं, क्योंकि सतुआ के साथ उनके पराक्रम की भी अनेक कथाएं जुड़ी हुई हैं. एक तसला सतुआ खा कर पचा लेना जैसे उन्हीं के वश का था, वैसे ही दो कोस तक एक सांस में दौड़ जाना भी उन्हीं का काम था.

कहते हैं एक बार गरमी के दिनों में एक गुद्दी चिरई को कई कोस तक दौड़ा कर पकड़ लिया था, जवानी के दिनों में. काका बताते हैं—हुआ यह बचवा कि मैं आम की रखवाली कर रहा था. एक गुद्दी फुर-फुर करती कपार पर से निकल गयी. हमने कहा, तुम्हार ई मजाल! मैं दौड़ने लगा. जब वह कहीं बैठती, मैं ढेला मार कर उड़ा देता. खेतों की फसल कट गयी थी. सब खेत खाली थे. न कहीं बाग, न बगीचा. एकाध पेड़ या झाड़ी. सो जब गुद्दी बैठे, हम ढेला से उड़ा दें और दौड़ें. दो तीन बार मैदान का चक्कर लगते-लगते गुद्दी लड़खड़ा कर गिर पड़ी. लेकिन बचवा, हम भी भहरा कर गिर पड़े, मगर पकड़ ही लिया उसे.

इस प्रकार की पराक्रमगाथाएं उनकी अनेक हैं, जिनमें सबसे मजेदार वह है जिसमें रात को पड़ोस के गांव के धोबी का खस्सी मुंह बांध कर अकेले पीठ पर लाद कर उठा ले गये थे सतुआ काका. फिर रातों-रात उसे काट-बांट कर सीरागोड़ी खेत में गड्ढा खोद कर गाड़ दिया था. रात ही को भूंज-भांज कर कुछ मांस खा गये, कुछ यारों को दे आये और जब सबेरे पता चला कि बरेठा का बधिया खस्सी तो चरता हुआ घूम रहा है, तो सतुआ काका चकरा गये. चुपके-चुपके खेत में जा कर मिट्टी हटा कर देखा तो वह मूंड़ी गदहे के बच्चे की थी.

बहुत दिनों तक काका का पता नहीं चला और जब कई बरस के बाद गांव लौटे तो मांस खाना छोड़ चुके थे. अब तो लहसुन-प्याज भी नहीं छूते हैं.

मांस रहा हो या मछली, सतुआ काका ने अपना धरम कभी भरष्ट नहीं होने दिया. काका कहते हैं कि धरम बचा रहेगा बचवा, तो चोरी घाट करने से और मछरी-गोस खाने से नरक नहीं होगा. काका चोरी नहीं करते. सिर्फ एक बार नानू धुनिया के घर से दो मन जोकेराई से भरी हुई माटी की डेहरी पीठ पर लाद कर अकेले उठा लाये थे. फिर महीनों तक आराम से सतुआ खाते रहे. उनका धरम उनके पास सुरक्षित है. एक बार जब वह भोजन बनाने के लिए चौका दे रहे थे, तो उनके घर के सामने से आती हुई बिकरम बो रुक गयी थीं. कुतूहल-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वश इधर आ कर उस जगह खड़ी हो गयी, जहां से चौके की सीमा-रेखा शुरू होती थी. बस क्या था, सतुआ काका चैली ले कर दौड़ पड़े थे. कस रे बेसवा, कौनो बिरजुआ के चौका समझ लिया है इसको! अरे, हमार सब तो चला गया. न घर, न मेहरी. न जर, न जायदाद. ले-देके एक ठो धरम बचा है, इसको भी ले लेगी चौका छू कर? चौधराइन खिसिया कर भाग गयी थी.

वैसे गोजर कभी-कभी सतुआ काका से ठिठोली करते हैं और कहते हैं कि सतुआ काका जब चौधराइन पर बिगड़े रहे, वोह बाति के कारन हम जानते हैं. पता नहीं वह बात क्या है कि सतुआ काका इतने पर ही गोजर को गाली से नहला देते हैं और गोजर सुर्ती बनाते हुए हंसते रहते हैं.

गोजर भाई उमर में साठ पार कर रहे हैं, मगर सबके भाई हैं और गांव के पंदरह बरस के जवानों की मेहरारू को भौजी कहने में मजा लेते हैं. नीयत बुरी नहीं है सिर्फ कौतुकवश ऐसा करते हैं. वैसे उनकी पट्टी में उनको पतोह में दस आना हक मांगने वाला कहा जाता है. कहते हैं कि सात बरस की उमर में अपने बेटे बदरिया का ब्याह उन्होंने उसके लिए नहीं, अपने लिए कर दिया था. बदरिया भाग गया सिलीगुड़ी और समझदार हुआ तो आ कर मेहरारू को भी ले गया. तब से कभी नहीं लौटा. गोजर भाई का काम अब अड़ोस-पड़ोस में मुंह मार कर ही चलता है.

गांव में कहा जाता है कि उनकी जवान बहन मरछिया को उनके बाप ने मऊ ले जा कर पांच सौ रुपयों में बेच दिया था. वैसे गोजर भाई कहते हैं कि उनकी बहन कोई थी ही नहीं. यह जरूर है कि बहन का अस्तित्व स्वीकार न करने पर भी सबको चिढ़ाने वाली उनकी जबान रुक जाती है और वह उठ कर चल देते हैं.

* *

बैल का पगहा पकड़े-पकड़े अब मोहन बाबू थक गये हैं. उनका पारा चढ़ता जा रहा है. उधर काशी और मुंड़वा की माई का रोना जारी है. बिरजू बाबा हांफ रहे हैं और औतार बाबा अपने धोती के झूले में झूल रहे हैं. वे जैसे गहरे में डूब कर कोई निर्णय का रतन निकालना चाहते हैं. इसीलिए बाहर के शोर से अलग हैं. यहां लोग एक-दूसरे पर आरोप लगा रहे हैं और औतार बाबा को मन-ही-मन डर लग रहा है कि कोई मनचला कहीं उनके और धरमू के बीच वाली कथा न उघेड़ दे.

न्यायमूर्ति औतार बाबा की कमजोरी उनके भाई धरमू की करतूत है. धरमू तब गबरू जवान थे. औतार और धरमू की एक ही बहन थी, जिसको बदले में दे कर औतार बाबा का ब्याह हो गया था. छोटे धरमू जब जवान हुए तो औतार बाबा को रोज गाली देते कि साले ने अपना स्वारथ तो देख लिया, हमारे लिए क्या करता है? औतार बाबा चाहते तो बहुत थे कि धरमू की पीठ में हल्दी लग जाये, लेकिन कोई बाभन चढ़े तब न! पैतृक जायदाद थी नहीं और कोई हीला भी नहीं था. जजमानी भी कोई खास नहीं, जिससे जीविका चले. कई बार कर्ज-वर्ज ले कर लड़की खरीदने की डौल लगायी, लेकिन वह भी नहीं लगा. एक बार चार सौ रुपये में एक बहू मिली भी तो उसका ... सबने देखा, जाना कोई नहीं देख सका. बाद में ... खुली कि वह कोई नचनियां था जो औरत बन कर ... ठगने आया था. तब से धरमू और उग्र हो गये, जिस... चरम परिणति हुई मोहम्मद जुलाहे की बेटी के ... धरमू के भाग जाने में.

वर्षों बाद कलकत्ता में धरमू अपनी बीवी के ... गांव के जूट मिल-मजदूरों से मिले थे, तो उनसे संदेश भेजा था कि अगर पंच लोग हुकुम दें तो हम लोग ... में आ कर रहें. इसकी चर्चा गांव में तो खूब हुई, मगर औतार बाबा के सामने कहने की हिम्मत किसी ... नहीं हुई.

इस समय जब सबका कच्चा चिट्ठा खोलने ... सब लोग तैयार हो गये हैं तो क्या पता कोई कह ही दे. औतार बाबा चुपचाप आगे-पीछे हिलते जाते हैं, मगर चिंता उनके चेहरे पर बराबर खेल रही है. मोहन सबके सामने कह चुके हैं कि रात काशी औतार बाबा के पास देर तक बैठे थे. कहीं ऐसा न हो कि कसिया पोल खोल दे. लेकिन औतार बाबा का चेला है, कच्चा नहीं हो सकता. डांड़ भले दे दे, बात नहीं खोलेगा. वैसे मन-ही-मन औतार बाबा तरकीब सोचते जा रहे हैं कि काशी को डांड़ से कैसे बचायें.

एकाएक चमत्कार-सा हुआ. रोता-बिलबिलाता काशी मुंड़वा के गले पर चढ़ बैठा. दबोचते हुए बोला—मांग सारे, माफी मांग! सब पंचन से. नाहीं त गांव छोड़े के परी. मांग माफी!

मुंड़वा बाप के चंगुल से छूट कर औतार बाबा का पैर पकड़ कर बैठ गया और गिड़गिड़ाने लगा. औतार बाबा को रास्ता मिल गया. स्वयं कातर स्वर में कहने लगे—पंचो, काशी बेचारा गऊ आदमी है. मुंड़वा के कहने में आ कर बेचारे ने मंगल भाई के यहां खाने से इनकार किया. जब भरी सभा में कान पकड़ता है. हमारा खयाल है, उसे माफी दे दी जाये.

औतार बाबा जैसे खुद ही अपराधी हों. मोहन, बिरजू और सतुआ बाबा की हुंकार शब्द का रूप ले, उससे पहले ही सबकी नजरें सामने घूम गयीं और सबकी जबान बंद हो गयी.

सामने से थाने वाला सिपाही आता दिखायी पड़ गया. सब अपनी-अपनी जगह पर मौन रह गये. सिपाही सहज भाव से औतार बाबा वाली खटिया की ओर बढ़ कर उस पर बैठ गया. थोड़ी देर-उधर देखता हुआ चुप रहा. फिर पूछने लगा—काहो पंडितजी! ई कैसा जमावड़ा है, भाई? मोहन बाबू! किसका बैल है?

मोहन बाबू कुछ बोलें, उससे पहले ही काशी और मुंड़वा की माई रोने लगे.

सिपाही जी मामला सूंघते हुए सिर हिलाने लगे.

बाबाजी लोगों की व्यग्रता बढ़ गयी. आंखों ही आंखों में बातें होने लगी. अब क्या किया जाये? ई जम का दूत आ टपका. अब आधा डांड़ तो एही का चाही.

मोहन बाबू से बैल का पगहा न पकड़ते बनता था.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रामीण परिवेश और स्थितियों पर रामदेव शुक्ल की पकड़ बहुत मजबूत है. ग्रामीण पात्रों की मानसिकता को वह बखूबी समझते हैं--'ग्रामदेवता' कहानी इस बात का पुख्ता सबूत पेश करती है.

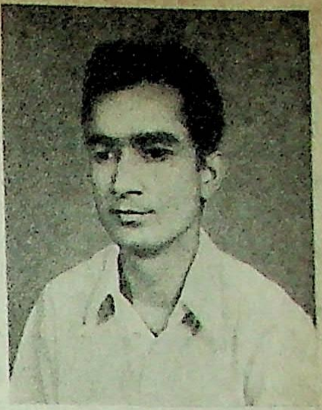

...ड़ते. सिपाही से उनकी जान-पहचान तो थी, ...न सामने परसी थाली को साधारण जान-पहचान के ...पर छोड़ने वाला सिपाही वह न था.

अब मोहन बाबू सकते में. अकेले मुंड़वा उत्साहित ...ई देता है. वह बार-बार कुछ कहना चाहता ...कि सिपाही उसकी ओर देखे और वह चालू ... अंत में सिपाही जी से उसकी नजरें मिलीं. ...नी जल्दी हो सके, उसने अपने को बेगुनाह और ...-बिकरम को गुनाहगार साबित करने के लिए ...कहना शुरू किया जो किसी की समझ में नहीं आया. सिपाही जी बिकरम के नाम पर कुछ उत्साहित ...

...तब तक एक बार फिर दृश्य बदल गया. आंखों पर कोल्हू के बैल की तरह काला चश्मा ...ाये, मूस चमार का लड़का आ कर खड़ा हो गया. ...ी-अभी शहर से आया था और पंचायत हो रही है, ...कर सीधे यहीं चला आया. क्या पंचायत है, कौन ...भियुक्त है, क्या अभियोग है, सिपाही यहां क्यों है, ...हन बैल ले कर क्यों खड़े हैं--इन सब प्रश्नों का ...तर उसने चश्मा उतार कर एक ही नजर में पा...ने की नीयत से सबकी ओर देखा. वह कुछ समझता, ...उससे पहले ही मूस महरा आगे बढ़ आये.---चलो ...बचवा, कुछ खाओ-पीओ. इहां का घरा है!

बचवा ने बाप को झिड़का--चलते हैं, जरा पंचा...त देख लें. क्यों सिपाही जी, क्या मामला है?

दरोगा के अलावा बाकी सबको डांटने का अभ्यस्त सिपाही इस तरह के सवाल के लिए तैयार नहीं था. ...ल्ला कर बोला---हम भी तो यही पूछ रहे हैं, साहब! यहां कोई कुछ बतावे, तब न? मालूम होता है सबको थाने ले चलना पड़ेगा!

बस ताव खा गया वकालत पढ़ने वाला लड़का.--- कौन हो जी तुम सबको थाने ले जाने वाले? क्या किया है इन लोगों ने? गांव का मामला है, गांव में तय होगा. भागो.

आधे लोग तो सूख गये. पता नहीं अब सिपाही क्या करे! मगर मोहन बाबू भौंहों में हंसे. सिपाही तमतमाया हुआ उठा और कहता हुआ चला गया--अच्छा देखते हैं, थाने चल कर. ई सुराज ससुर क्या हुआ, पुलिस की इज्जत चली गयी. लौंडों की ई मजाल कि हमसे जबान लड़ावें! बकता-झकता सिपाही चला गया. इधर भीड़ का हीरो हो गया वकालत पढ़ने वाला मूस चमार का लौंडा हरखू. हरखू उर्फ हर्षनारायण मौर्य, बी. ए., एल-एल. बी. द्वितीय वर्ष.

मूस ने नाम दिया था हरखू, लेकिन हाई स्कूल पास करने के बाद अखबार में छपवा कर हरखू ने अपना नाम रख लिया हर्षनारायण मौर्य. मुंशी गोधन कहते थे कि मौर्य ही चमारों का सरनेम है. चंद्रगुप्त मौर्य के वंशज हैं हम लोग. दरअसल तो क्षत्रियों के बराबर हमारा दर्जा है. सभी चमारों का दर्जा क्षत्रियों के बराबर हो चाहे नहीं, हरखू उर्फ हर्षनारायण मौर्य अपने को सभी कुलीनों से उच्च मानता है. चमार कुल में जन्म पाना उसके सौभाग्य का सूचक है, क्योंकि वह शुरू से देखता आया है कि खाने को दोनों जून रोटी नहीं है, तब भी बाबाजी के लड़कों की फीस माफ नहीं होती और उसको वजीफा मिलता रहा.

लोग कापी, किताब फीस की कमी से आठवें-नवें दर्जे के बाद थक कर कचहरी में मुंशी के मुंशी हो गये हैं या गांव में जूआ खेलते घूम रहे हैं. हरखू ने एक नया मुहावरा गढ़ लिया है. चमारों के पेशे को ये बाभन गाली मानते रहे हैं. 'का चोरी-चमारी करते रहते हो?' इसके जवाब में अब हरखू जब किसी को गाली देते हैं तो कहते हैं, का बमनई करते हो, जी?

हरखनारायण इन बाभनों की औकात खूब जानता है. एल-एल. बी. में नाम लिखाने के साल उसके क्षेत्र में बाबूजी आये थे. बाबूजी यानी बाबू मनबोधन राम. वह डाकबंगले पर उनसे मिलने गया था और देख चुका है कि कैसे बड़े-बड़े पंडित लोग उनकी जूठी प्लेट उठाने को तरसते थे. कलक्टर साहब से ले कर क्षेत्र के सभी एम. पी. मिश्रजी और ठेकेदार शुकुल जी तक. लगता था बाबू जी का थूक हाथ पर लेंगे. तब हरखनारायण को अपनी जाति पर गर्व हुआ था. ऐसे ऊंचे-ऊंचे लोगों को देख चुका है वह. इस गांव के टुट-पुंजिया बाभनों को वह खूब समझता है. दो-दो आने पर सत्यनारायण की कथा बांचने के लिए झगड़ा करेंगे. और आठ आना पैसा पा जाने पर ताड़ीखाने में जा कर भीड़ लगायेंगे. वह एक-एक को जानता है कि कौन उसकी चमरटोली में किसके घर किस रास्ते से आता है. लेकिन वह इसका विरोध नहीं करता. चमारों की नस्ल बदलनी चाहिए और यह ऐसे ही बदलेगी. वैसे हरखू की आखिरी इच्छा है किसी बाभन की बेटी से शादी करने की, और अगर गांव में हो जाये तो अति उत्तम. लेकिन गांव के मूर्खों के बीच अपनी आकांक्षा कभी जबान पर वह नहीं लायेगा. वकालत चल निकले, तब सोचा जायेगा. इसीलिए पांच बरस की उमर में जो विवाह उसका हुआ है, उसको वह भूल चुका है. बेचारे मूस की बड़ी फजीहत है. अब तो उसने समधी को मना-मनू कर अपनी लड़की दूसरे के साथ बैठाने को राजी कर लिया है. लेकिन इस बात पर हरखुआ से वह मन ही मन रुष्ट है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सिपाही के पंछ दबा कर भाग जाने और हरखू के साहस से सारी पंचायत आतंक मिश्रित आनंद से भर उठी है. आज पहली बार सतुआ बाबा, औतार बाबा, बिरजू बाबा, सब लोग एक स्वर से हरखू की विद्या-बुद्धि की प्रशंसा कर रहे हैं.

चमर टोली के उत्साह की सीमा नहीं. चोकट अलबत्ता सकते में है. पता नहीं क्या हो? मुंड़वा हरखू के बराबर खड़ा हो गया है और बड़का सिटपिटा कर मंगल की बगल में आ गया है. धीरे-धीरे हरखू सारी बात जानने की कोशिश कर रहा है, लेकिन उसको एक साथ सभी लोग सबसे आगे बढ़ कर सब कुछ बता देना चाहते हैं, जिससे वह कोई बात नहीं सुन-समझ पाता है.

काशी और मुंड़वा की माई फिर गिड़गिड़ाने लगे—सरकार, माफी दे दिया जाये. सरकार, मुंड़वा कुछ नहीं देखा, सरकार. हम लोग मंगल के इहां खाये के तैयार हैं, सरकार.

एक बार लगा कि अब पंचों का दिल पसीजेगा. तभी गरजे सतुआ काका और बिरजू बाबा, एक साथ ही—अरे अब ई सवाल मंगल के और तुम्हारे बीच का सवाल थोड़े रहा! अब यह सवाल तोहरे और बामन मंडली के बीच का सवाल हो गया. अब कौन पंच के हिम्मत है कि तोहके माफी देई?

औतार बाबा कुछ बोलने को हो कर रह गये. काशी की घिग्गी बंध गयी. मुंड़वा फिर रोने लगा. उसकी माई फिर आंचल फैलाने लगी. मोहन बाबू बड़का के कान में खुसुर-पुसुर करने लगे.

हरखू अब तक सारा मामला समझ चुका... अब तक उसकी धाक भी जम चुकी थी. अब... इस मामले को अपने ढंग से लिया. मोहन बाबू... मार कर उठ खड़ा हुआ और सिनेमा वाले... के वकील के अंदाज में हाथ लहराता हुआ कहने... —सतुआ बाबा और बिरजू बाबा, आप लोग... हैं कि गांव में पार्टीबाजी चल रही है. औतार बाबा... चुनाव में मंगल और बड़का ने वोट नहीं दिया, इसी... औतार बाबा ने मुंड़वा और काशी को चढ़ा कर... तमाशा खड़ा किया है. सूअर खाना मुसलमानों में... है. हिंदू के लिए हराम नहीं है. गोंड भी खाते हैं... जंगली सूअर बाबा ठाकुर भी खाते हैं. इसमें कौन... है? सूअर खाते हैं तो हम अकेले थोड़े ही खाते हैं! जि... मन हो आ कर हमारे साथ खाये. मगर इसके नाम... पार्टीबंदी नहीं चलेगी. यह मामला विकरम और बड़... सूअर खाने का नहीं है, पार्टी का मामला है.

औतार बाबा और काशी के अवाक् चेहरों... छोड़ कर बाकी सब इस नये ज्ञान से चमत्कृत हो...

सब अनुभव करने लगे हैं कि यह मामला... संगीन है. इसमें माफी-दया की गुंजाइश नहीं. अब... भी हिम्मत हार गया है. लड़के की जरा-सी नादानी... क्या से क्या हो गया! अब इसमें पार्टी कहां से आ... लेकिन बोलने की हिम्मत उसकी अब नहीं रही. मुं... की माई कुछ न समझ कर और जोर से रोने लगी.

सतुआ काका ने कहा—अब ई मामला गंभीर...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब कस्बा से मुख्तार साहब का आना जरूरी ...ना है. वे ही आ कर दूध का दूध और पानी का ...करेंगे. उनसे मामला साफ होगा.

...किसी की हिम्मत कुछ कहने की नहीं पड़ रही है. ...सतुआ काका के इस निर्णय को मौन स्वीकृति दे ...जाते हैं. हरखू भी सिर हिलाता है. काशी और औतार ...दिल में ही कांप जाते हैं, न जाने अब क्या होगा. ...वा एक बदमाश है. लेकिन हरखू सतुआ काका के ...पर मोहन बाबू के घर साइकिल ले के कस्बा चले ...हैं. मुख्तार साहब को बुलाने पर काम बनेगा.

★ ★

मुख्तार साहब कस्बे के तहसीलदार की कचहरी में ...रगिरी करते हैं. मगर उनका मन लगता है गांवों ...में. इसका कारण बताते हुए कुछ लोग तो यह कहते ...कि किसी-किसी दिन कचहरी में उनकी बोहनी भी ...होती. तरकारी का पैसा भी नहीं मिलता. गांवों ...मुफ्त की तरकारी, दातौन, कभी-कभी गन्ने का रस, ...कम-से-कम यह सब तो मुफ्त में मिलता रहता है. ...कचहरी में दिन भर मुवक्किलों से बनवा कर ...फांकते हैं और शाम को आधी शताब्दी पहले का ...का कोट, जो अब कई रंगों का हो चुका है, उतार कर ...पर रख लेते हैं. घर पर उसे रख कर, फिर लोटा ...कर किसी गांव की ओर चल देते हैं. उधर से घूम ...कर और कभी-कभी किसी के यहां से भोजन करके ...लौटते हैं. साथ में कभी मुख्तारनी के लिए गन्ना, ...भी साग-भाजी तो कभी दही-सत्तू होता ही है.

पंचायत करने में उन्हें कई फायदे हैं. एक तो आज ...गांव की पंचायतों में डांड़ लगाने की प्रथा पुराने ...जमाने की तरह ज्यों-की-त्यों है. अदालती पंचायत है. ...कचहरी है. गांव की पंचायत भी है और उसके सदस्य- ...सभापति भी हैं. मगर ज्यादातर गांवों के मसले उन्हीं ...बड़े महाजन, पुरोहित, ओझा या धनाढ्य बाबाजी ...लोगों द्वारा ही तय होते हैं. नये पंच कुछ तो ऐसे हैं ...जिनको पंचायत करने की फुरसत ही नहीं. वे कचहरी ...के दलाल हैं. या मुंशी हैं या मुंशी के मुंशी हैं. पटवारी ...के मुंशी हैं या प्राइमरी पाठशाला के मास्टरजी हैं. ...कुछ ऐसे हैं जिन्हें फुर्सत तो है लेकिन उनकी बात ही ...मानने को गांव में कोई तैयार नहीं. बिना किसी मोटे ...आसामी की बात की मुहर लगे पंचायत नहीं हो सकती.

मुख्तार साहब जिस पंचायत में पहुंच जायें, उसमें ...अगर दंड सौ रुपये लगने की संभावना हो तो उनका पहला ...काम होता उसे दो सौ कराना. डेढ़ सौ स्वयं पचा कर ...बाकी बाबाजी लोगों को, दो-चार चौकीदार को और ...कभी-कभी दस-पांच दरोगाजी को भी चटा कर न्याय ...का झंडा फहरा देने में मुख्तार साहब माहिर हैं.

लेकिन पंचायत करने में मुख्तार साहब को रुपये ...की प्राप्ति से भी बड़ा एक लाभ होता है—दस आद- ...मियों के बीच घंटों जोर से बोल कर अपनी बात सुनाने ...का. तहसीलदार की कचहरी में तो उनकी वाणी कुंठित ...रहती है, किंतु पंचायतों में वह धारासार बरसती है.

पंचायत में बैठे लोगों की आशा के अनुरूप ही

सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू का हमला और उसका मुकाबला

आपके लिए कुछ ज़रूरी बातें

"मैंने एनासिन को बहुत गुणकारी पाया है," नर्स एंजेला फ़र्नान्डेस का बयान है।

इन्होंने यही देखा है कि एनासिन सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू की पीड़ा से जल्द आराम दिलाने के लिए काफ़ी तेज़ असर है।

सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू कैसे होते हैं?
ये छूत से फैलने वाले उस विष से होते हैं, जो इन रोगों में ग्रस्त लोगों से हवा में फैलता है। आम तौर से शरीर में उसके मुकाबले की शक्ति होती है। परन्तु ज़्यादा मेहनत या कम ख़ूराक के कारण शरीर में कमज़ोरी आ जाती है और रोग के मुकाबले की शक्ति कम हो जाती है।

रोग लक्षण क्या हैं?
बदन का दर्द, सर का भारीपन, छींकें आना और नाक बहना, जिसके साथ अक्सर कँपकँपी छूटती है, बेचैनी महसूस होती है और पसीना आता है। उसके बाद खाँसी, गले की ख़राबी, भूख की कमी और थकावट की शिकायत हो सकती है।

क्या इस से और तकलीफ़ें भी हो सकती हैं?
यदि लापरवाही बरती जाय तो निमोनिया और साँस की ऊपरी नाली में छूत का असर हो सकता है।

एनासिन कैसे सहायक होती है?
एनासिन सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू की पीड़ा से आराम दिलाती है। एनासिन तेज असर है– क्योंकि इस में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है जिसकी दुनिया-भर के डॉक्टर सब से ज़्यादा सिफ़ारिश करते हैं। एनासिन पर लाखों लोगों को विश्वास है– क्योंकि यह आपके डॉक्टर की दवा की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। सर्दी-ज़ुकाम या फ़्लू के पहले लक्षण देखते ही दिन में चार बार एनासिन लीजिए।

आपको और क्या करना चाहिए?
- उबाला हुआ पानी, सन्तरे या मौसंबी का रस और पीने के दूसरे पदार्थ काफ़ी पीजिए।
- पौष्टिक आहार खाइए।
- पूरा आराम कीजिए।
- पानी में ऐंटिसेप्टिक दवा या नमक डालकर ग़रारे कीजिए।
- कमरों को हवादार रखिए।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा

A-1-7/74

Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co. Ltd.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरखू के साथ मुख्तार साहब [illegible] पड़े. सतुआ काका और बिरजू बाबा ने बढ़ कर उनकी अगवानी की और ला कर खाट पर बिठाया. पहले कुछ रस-पानी का इंतजाम हुआ. मुंह पोंछते, डकार लेते मुख्तार साहब खटिया पर विराजमान हुए.

काशी, काशी बो, मुंड़वा, चोकट, बड़का, मूस इन सबको जैसे सांप सूंघ गया हो. सब चुप. बाबा मंडली में कुछ उत्साह, कुछ अनुत्साह दिखायी पड़ रहा है. मोहन बाबू बैल को खूंटे से बांध कर, खटिया मंगा कर, कुछ इस निश्चय के साथ बैठ गये लगते हैं कि अब फैसला करके ही उठेंगे.

हरखू अब कुछ उदासीन हो गया लगता है. औतार बाबा दुखी हो गये हैं. सतुआ काका और बिरजू महाराज विक्रमादित्य के सभासदों की मुद्रा में मुख्तार साहब को देखने लगे हैं.

मुख्तार साहब सबको बारी-बारी से घूरते हुए कहते हैं— मैंने सब केस समझ लिया है. अब गांव में धरम नहीं रहा. संस्कृत पढ़ने को बाबा लोग तैयार नहीं हैं तो धरम कैसे रहेगा! अब चमार-सियार सब बराबर हैं. इतने में हरखू उन्हें कड़ी नजर से देखता है, जिसे देख कर कुछ अप्रतिभ होते हैं. फिर संभल कर मुख्तार साहब आगे बढ़ते हैं —लेकिन चमारों की तरक्की से ही देश की तरक्की होगी. धर्म और संस्कृत अब नये हो जायेंगे.

मुख्तार साहब रुकते हैं. उन्हें लगता है कि विषय छूट रहा है. गला खंखार कर पंचायत के विषय पर उतर आते हैं— यह बात तो गलत है कि मुंड़वा और काशी मिल कर किसी बाबाजी की पार्टीबाजी के चक्कर में पड़ कर बड़का और बिकरम को बदनाम करें. इससे सारे ब्राह्मण समाज की बेइज्जती होती है. जिसके यहां ब्राह्मण देवता भोजन करें, वह सूअर खाता है, भाई यह कहना सरासर अधरम है. काशी को प्रायश्चित करना ही पड़ेगा. अब पंच लोग फैसला करें.

सभा मौन है. काशी मुंड़वा की ओर देख कर दांत पीसता है. उसकी मां रोती है. सतुआ काका और बिरजू बाबा उदास बैठे हैं. थोड़ी देर में मुख्तार साहब फैसला सुनाते हैं—काशी को दो सौ रुपये का दंड और बिरादरी को भात. बाबा लोगों को पक्की.

काशी सपरिवार फुक्का फाड़ कर रोने लगता है, कुछ लोग उसे चुप कराते हैं. वह गिड़गिड़ाता हुआ कहता है—सरकार, हमारे पास एकौ पइसा नहीं है. ई डांड़ हम कहां से देब?

सजातीयों में कुछ उसकी ओर से बोलना चाहते हैं, मगर वे सब मंगल और बड़का के डर से चुप हैं. अब तो पंचायत भी उन्हीं के साथ है. मोहन बाबू प्रसन्न हो रहे हैं. बैल खोल कर ले आने की मेहनत वसूल हो जायेगी, वह जानते हैं.

हरखू अब अन्यमनस्क होता जा रहा है. उसके मन में द्वंद्व है. उसे लग रहा है कि काशी को बेकार सताया जा रहा है. मगर पार्टी वाली बात उसकी सहानुभूति का गला घोंट देती है.

[illegible] है कि रोये जा रहा है, [illegible] तीन खेतों में एक पहले से रेहन. एक बैल [illegible] एक ही बचा है. कर्जा ऊपर से बाकी है. [illegible] का कर्ज कभी उसके बाप ने लिया था. वह [illegible] सूद पर रुपये ले कर महाजन को सूद अपने पास से कर लौटाता है.

वह कुछ कहने का साहस बटोर ही रहा था [illegible] मुख्तार साहब बोल उठे— एक बात जान लो, [illegible] मामला कानून का है. दंड तुम्हें देना ही पड़ेगा. [illegible] कोई छुटकारा नहीं. हां, रुपये-पैसे की तंगी हो तो [illegible] इंतजाम हो जायेगा. मुख्तार दूसरी ओर घूम कर [illegible] हैं—औतार बाबा, आप उसको कर्ज दीजिएगा? [illegible] तो ढबरू मास्टर को बुलाओ! वे तो देंगे.

मुख्तार की बात पर हरखू को बड़ा ताव [illegible] इसमें कौन कानून है भाई? कानून तो वह भी [illegible] से पढ़ रहा है. कौन कानून बाबा लोगों को यह [illegible] कार देता है कि वे जब चाहें, जिस गांव वाले को [illegible] कर खा जायें. भीतर-ही-भीतर हर्षनारायण [illegible] खून खौल रहा है. मन में आता है, वह सबको [illegible] दे. लेकिन क्या जरूरत है भाई! उसके लॉ के [illegible] पांडेय कहते हैं कि गांव की राजनीति में किसी [illegible] आदमी को नहीं पड़ना चाहिए. गांव के अनपढ़ [illegible] शहर के एक से एक काबिल लोगों को बेच कर [illegible] फिर यह काशी कौन दूध का धोया है? पढ़े-लिखे [illegible] सबसे ज्यादा खिल्ली तो वही उड़ाता है.

बिना काशी की स्वीकृति या अस्वीकृति के [illegible] साहब ने ढबरू मास्टर के यहां आदमी दौड़ा दिया.

ढबरू को देख कर कोई उन्हें मास्टर समझने [illegible] गलती कभी नहीं करेगा. मगर असलियत यही है [illegible] वह मास्टर हैं और ऐसे मास्टर जो चाहें तो गांव भर [illegible] खरीद लें. यों यह मास्टर खुद कभी नहीं कहते. [illegible] मास्टराइन ही कहती हैं. मास्टराइन चौड़ी काठी [illegible] स्त्री है. पति की संपत्ति के गर्व की साक्षात प्रतिमूर्ति [illegible]

स्कूल में लड़के-लड़कियों का बस्ता-खड़िया [illegible] हैं. मॉनीटर से पाकड़ के नीचे चारपाई डलवा कर [illegible] से लेट कर इमला बोलते हैं. कभी-कभी 'राम आम [illegible] है' में 'खाता है' बोलने से पहले ही झपकी आ [illegible] है. तब लड़के कलम-पटरी फेंक कर गुल्ली-डंडा [illegible] कर चल देते हैं. कुछ देर में मास्टर जी की नींद [illegible] है, तो फिर लड़कों को सहेज कर कुछ गिनती-पहाड़ा [illegible] तब तक समय हो जाता है बाजार जाने का. कल के [illegible] नकल लिखने को दे कर उधर से ही कस्बा चले जाते [illegible] कस्बे में एम. डी. आई. साहब के घर ट्यूशन करते [illegible] उनकी सब्जी-तरकारी लाते हैं. सात-आठ बजे [illegible] घर लौटते हैं.

ढबरू मास्टर का व्यक्तित्व गांव भर के लिए [illegible] आतंक, आदर और आश्रयदाता का मिला-जुला [illegible] है. अपनी तनख्वाह और ट्यूशन के पैसे में से कानी [illegible] भी खर्च करने को मास्टर अधर्म मानते हैं. दो-चार [illegible] खेती है. शरीर में बैल की तरह कूवत है. कमाते-खाते [illegible] बाकी अनाज बेच कर बैंक के हवाले करते हैं. [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखने के खतरे से परिचित हैं.
गांव में बड़े से बड़ा आदमी भी परेशान है. मास्टर उस परेशानी में सबकी मदद करने को खड़े हैं. कभी किसी को रुपये-पैसे की जरूरत हो, मास्टर की बही पर नाम चढ़वा ले. ले जाये जितने की हो. हिसाब-किताब में मास्टर साहब पक्के हैं. सूद का हिसाब साफ है. भाई, सूद के रुपये मूल से पहले काट लेंगे. यह सिद्धांत की बात है.

इधर कोआपरेटिव सोसायटी की वजह से मास्टर की महाजनी कुछ नये रूप ले रही है. जून में किसानों पर बैंक से दावे का नोटिस आने लगता है. तो नौ फीसदी सूद पर रुपया देता है. सेक्रेटरी-सुपरवाइजर कहते हैं, भाई, कर्ज लौटा दो. एक हफ्ते में दिला देंगे. लेकिन एक हफ्ते के लिए ही सही, रुपये कहां से? गन्ना मिल पर गिरा आये. पर्ची भुगतान पता नहीं तीन साल में हो कि चार साल. तब कहां से दें सोसायटी का कर्जा? ऐसे आड़े वक्त मास्टर साहब काम आते हैं.

इस तरह ढबरू मास्टर सबके भले के लिए खड़े हैं. उनका रुपया डूब जाये कहीं, इसका कोई डर नहीं. उनके पास मास्टराइन के रूप में वह सिपाही है, जो दरोगा का भी मुंह नोच ले.

* *

मास्टरजी बही संभालते हुए आ गये और आते ही उन्होंने फैसला सुना दिया कि काशी को वह अब कोई कर्ज नहीं देंगे. पहले से ही उनकी बही में काशी के नाम से कई सौ रुपये बाकी हैं. मूल तो मूल, अब तो सूद भी वह नहीं देता. हां, एक सूरत है. अगर वह अपना गोंयड़ा वाला पचकठवा खेत रेहन रख दे तो मास्टर तीन सौ रुपये अभी देने को तैयार हैं.

सुनते ही पंचों की बांछें खिल जाती हैं. काशी बो दहाड़ मार कर रो पड़ती है. मगर काशी अब की कुछ नहीं बोलता. चुपचाप अपनी जगह से उठता है. बायें हाथ का अंगूठा आगे बढ़ा कर मास्टर के सामने पागलों की तरह शून्य में ताकते हुए खड़ा हो जाता है. मास्टर थमक जाते हैं. यह क्या? मुस्तार साहब अपनी जगह से ही कहते हैं— हां भाई, मान तो रहा है. मास्टर बाबू! आपकी बात कसिया बेचारा मानता है. दीजिए उसको रुपये. दीजिए.

मास्टर साहब पता नहीं क्यों कुछ खिन्न हो जाते हैं. फिर जल्दी ही बही में कुछ खोज कर एक जगह काशी के बढ़े हुए अंगूठे में कजरौटा से काजल लगा कर, निशान बनवा लेते हैं. उसके सामने तीन सौ रुपये गिनते हैं, और उसमें से कुछ गिन कर फिर वापस ले लेते हैं.

हरखू टोकता है— ऐ ढबरू मास्टर! यह आप क्या करते हैं? सूद पर तो दे नहीं रहे हैं. खेत पर दे रहे हैं न! तब कैसा रुपया काट रहे हैं?

मास्टर सहम कर अपनी भूल स्वीकार करते हैं. कुछ कहना चाहते हैं पर रुपये वापस काशी के हाथ पर रख देते हैं.

काशी वैसे ही खड़ा है. उसका हाथ वैसे ही खुला है, बाकी नोट उस पर पड़े हैं. कुछ उड़ कर नीचे गिर रहे हैं. बिरजू महाराज उठते हैं. नोट उठा कर मुस्तार साहब के हाथ पर रखते हैं. काशी अब भी निश्चिंत खड़ा है. मास्टर साहब कुछ कहना चाहते हैं. मुस्तार साहब उनसे वहीं से कहते हैं—मास्टर बाबू, रेहन का कागज तहसील में आ कर ले जाइएगा. चाहे काशी को भेज दीजिएगा. खुद रुपये गिनने में लग जाते हैं. थोड़ी देर बाद धीरे से बिरजू महाराज से फुसफुसा कर कुछ कहते-सुनते हैं. मुस्तार साहब उनके हाथ पर कुछ रखते हैं. दोनों के चेहरों पर सहमति-असहमति के भाव आते-जाते हैं. अंत में मामला तय हो जाता है.

काशी अपनी जगह पर खड़ा है. मुंड़वा और उसकी माई रो रहे हैं. मंगल और बड़का खुश हैं. मोहन बाबू हरखू से कुछ कह रहे हैं. ढबरू मास्टर धीरे-धीरे लौट रहे हैं. औतार बाबा अपराधी बने चुपचाप बैठे हैं.

मुस्तार साहब अब एक मिनट भी बैठना नहीं चाहते. उठने को होते हैं तो किसनू उठने में सहारा देता है. साथ-साथ चलने लगता है. चलते हुए मुस्तार साहब दूर किसी के छप्पर पर आंखों-ही-आंखों में कुछ खोजते जाते हैं. किसना गोपन भाव से कुछ कहना चाहता है जिसे मुस्तार साहब सुनना नहीं चाहते.

मुस्तार साहब को गांव के सीवान तक पहुंचा कर किसना लौटता है तो देखता है, पंचायत ज्यों-की-त्यों बैठी है. औतार बाबा अब जा कर कुछ बोल रहे हैं. बिरजू बाबा, मोहन बाबू, दोनों मिल कर उनसे ऊंचे स्वर में कुछ कह रहे हैं. सबके चेहरे पर एक ही भाव है . . . चलो, देख लेंगे.

काशी वहीं, उसी जगह, वैसे ही खड़ा है. उसकी बगल में मुंड़वा हाथों में कुछ रुपये पकड़े खड़ा है.

किसनू तो पहले से ही असंतुष्ट है. मुस्तार सब माल ले कर चला गया. किसनू को कुछ नहीं मिला. बाभन न सही, पुरानी पंचायत का सदस्य तो वह भी है. दो-चार तो उसको भी मिलना ही चाहिए. लेकिन सब बेईमान हो गये हैं. बिरजू बाबा ने भी अपना हिस्सा ले लिया. किसनू के लिए चुप रह गये. उसे ये लोग अभी जानते नहीं हैं. एक-एक को देख लेगा.

सचमुच किसनू को गांव के लोग कितना जानते हैं! उसकी कदर तो बाहर ही होती है. गांव के बाबा लोग कभी उसका सीधा नाम ले कर नहीं बुलाते. शहर में किसुन महराज से कम कोई नहीं कहता. उसके शरीर का गोरा रंग और चेहरे का अभिजात्य उसे सवर्णों की प्रतिष्ठा सहज ही दिला देता है, इसका ज्ञान किसनू को बाल्यकाल से ही है. इसीलिए जाति का नाई होने पर भी कभी वह हजामत बनाने के घिनौने काम की ओर नहीं झुका. यह काम भाई-भतीजे करते हैं. वह तो पहले जमींदारों के और अब मारवाड़ी सेठों के यहां बैठने की, वहां इज्जत पाने की कला जानता है. अब तो सरदार जी की दूकान में दिन भर पंखे के नीचे बैठा रहता है. एक काम उसने सीख लिया है—हाथ देखने का. किसी का भी हाथ पकड़ कर उसके सुनहले भविष्य का सघन रेखाचित्र खींचने लगना उसकी आदत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन गयी है. चेहरा देख कर वह जान लेता है कि जजमान किस प्रकार के भविष्य का चित्र पसंद करेगा.

गांव का कोई नहीं जानता कि किसुन महाराज बड़े शहर में सामुद्रिक शास्त्र के इतने बड़े ज्ञाता हैं. किसुन महाराज जानते हैं कि मूर्ख भले हों, ये गांव के बाभन अगर यह जान जायें कि वह हाथ देखने का पेशा करता है, तो मार कर उसकी कमर तोड़ दें. शहर में रोज रहने से इज्जत घटने का अंदेशा न होता तो वह कभी गांव आता ही नहीं.

वैसे जब भी गांव की ओर किशुन आता है, तो दो-चार रुपये के जुगाड़ में ही रहता है. इस बार पहली पंचायत है जब दो सौ रुपये डांड में उसे एक पैसा भी नहीं मिला.

किसनू की खीझ को तोड़ता है मोहन बाबू का कर्कश स्वर. वह मुंडवा से कह रहे हैं—ले जा वे, अपना बैल. बांध अपने घर ले जा कर.

मुंडवा अपने बाप की हालत देख कर कुछ भी समझ नहीं पाता. वह जोर-जोर से रोने लगता है. कुछ लोग काशी और मुंडवा को समझाने के लिए उठते हैं.

★ ★

रास्ते पर बड़े जोर का हंगामा उभरता है. एक भीड़ पंचायत की तरफ चली आ रही है. कुछ लोग दो आदमियों को उठा कर ला रहे हैं. कुछ लोग बड़बड़ाते चल रहे हैं. कुछ जोर-जोर से गाली-गलौज कर रहे हैं. एक आदमी आगे-आगे नाच रहा है, उसी के साथ-साथ झूम रहा है गिरगिटवा. भीड़ पास आ जाती है. एकाएक बिना किसी से कुछ पूछे और बिना किसी के कुछ बताये लगभग सभी लोग समझ जाते हैं कि क्या मामला है.

यह सब तो आये दिन होता रहता है. यह भीड़ कचहरी के मुंशीजी लोगों की है. वे ही लोग इसके नायक हैं, जो दूसरों के कंधों पर हैं, या नाच रहे हैं और हवा में किसी अदृश्य दुश्मन को ललकार रहे हैं. इस समय मुंशी लोग दूसरे घोड़े पर सवार हैं.'

कचहरी के मुंशीजी लोगों की संख्या इधर आस-पास के गांवों में दर्जनों तक है. पुराने समय के मुंशी झगरू ग्रामीणों के लिए आज भी आदर्श पुरुष हैं. झगरू मुंशी मुहर्रिर थे. कचहरी की कमाई से जमींदारी में दो पाई हिस्सा उस गांव का खरीद लिया था उन्होंने. आज भी उनके नाती-पोते उन्हीं की कमाई पर मौज उड़ा रहे हैं. झगरू मुंशी को अपने जीवन काल में हजारों गरीब किसानों को झूठे मुकदमों में फंसा कर बर्बाद कर देने का जस अब तक मिलता है.

आजादी के बाद गांव के पास हाई स्कूल खुल जाने से शिक्षा के प्रति तेजी से झुकाव हुआ. उधर ग्रामीण नवयुवक पढ़ाई को पार्ट-टाइम काम मान कर नौटंकी से ले कर नेताबाजी तक में अधिक समय देने के कारण हाई स्कूल की दीवाल को अभेद्य मान कर कर्मक्षेत्र में उतरते गये. अभिभावक उनके कर्मक्षेत्र की सीमा कचहरी की मुंशीगीरी से ले कर सेठ की मुनीमी तक मानते और संतुष्ट रहते. नतीजा यह कि एक-एक वकील के पास चार-चार, पांच-पांच लोगों का जमघट हुआ. एक तहरीर लिखने के एक मिसिल नोट करने के लिए. एक पान के लिए. एक मुख्तार साहब के घर तरकारी के लिए. अगर मुख्तार साहब कुछ मनचले हों रात को उनका बिस्तर गरमाने के लिए. वकील मुख्तारों को भी कोई असुविधा नहीं. को शाम को चार आना, किसी को एक रुपया, को डेढ़. वह भी मुवक्किलों की जेब से.

दर्जा चार के बाद जिस जगह आ कर शिक्षा रेल पटरी से उतर जाये, वहीं जगह पहुंचाने का स्टेशन बन जाती है. अब तक का विद्यार्थी अब बाप के लिए लायक, कमाऊ जाता है. कचहरी का मुंशी बन जाता है.

इसके अलावा हल चलाने वाले से ले कर मेंड़ पर जवान मजदूरिनों की ओर दिन भर रहने वाले बाबू लोगों तक, सबका शाम के वक्त जाना बहुत जरूरी काम है. इसमें आर्थिक स्थिति हिसाब से दो गोल हैं—एक बड़ी गोल है दारू ताड़ी के साथ कलिया का चिखना उड़ाने वाली. छोटी गोल जिसकी किस्मत में चाह के साथ पांच पैसे की पकौड़ी ही होती है. अब तो एक सिनेमा खुल गया है. कस्बे के आकर्षण में और वृद्धि जा रही है. शाम को कचहरी से छूटे मुंशीजी और गांव से खेती-मजदूरी करके रंग छानने के कस्बे की ओर गये छैला लोगों की संगमस्थली दारू की भट्ठी. ताड़ीखाना. चौराहे की दुकानें. फिर वहां घड़ी-दो घड़ी मौज मार कर अपनी-अपनी गांव रात उतरने के साथ ही गांव की ओर आते हुए रसिक अकसर भीड़ के रूप में ही लौटते हैं. किसी दिन आमदनी ज्यादा हो जाने पर या रास्ते कोई दुर्घटना हो जाने पर भीड़ का रुख ऐसा होता है कि गांव के लोगों को भी इसमें दखल देने की जरूरत पड़ जाती है.

आज की भीड़ इसी प्रकार की है. इसमें समझू के मिडल फेल ज्येष्ठ पुत्र गिरवर मुंशी इतना पी हैं कि अपने पैरों चल नहीं सकते. उनको उठा कर से गांव की ओर आ रहे लोगों को रास्ते में एक भीड़ मिल गयी थी, जिसमें गोपी तिवारी के बाबू रास्ते के किनारे गन्ने के खेत में गांव की एक मुसल-मान लड़की के साथ 'कीर्तन' करते हुए पकड़े गये. मुसलमान तिवारी को लगातार पीटे जा रहे थे. दोनों को लाद कर कस्बे से लौटने वाले लोग ला रहे कि रास्ते में गिरगिटवा ने गांव की पंचायत की सूचना दे दी, जिससे उत्तेजना और तीव्र हो गयी.

अब कुछ लोग हिंदू-मुस्लिम फसाद की दुहाई दे कर समझा रहे हैं. कुछ काशी के साथ हुए अन्याय के खिलाफ आवाज उठा रहे हैं. कुछ काशी को ब्राह्मण पर लांछन लगाने के लिए कोस रहे हैं.

सबसे आगे गुदई पंडित ताड़ी के नशे में नाचते चल रहे हैं. उन्हीं के साथ ताल देता गिरगिटवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लपन की मौज में झूम रहा है. यह भीड़ आ कर पंचा-
में मिल-सी गयी है. अब तो पंचायत बिखर जायेगी.
लोग अपने-अपने घर चले जायेंगे. नहीं तो नये
से बैठेगी. अभी तो खाली हल्ला है. किसी की समझ
कुछ भी नहीं आ रहा है कि क्या किया जाये.

जुम्मन शेख की बेवा इतने में छाती पीट-पीट कर
जोर-जोर से रोती हुई आती है. सबका ध्यान उसकी
ओर खिंच जाता है. खेत की घटना उसे कई लोगों ने
हपों में सुनायी. किसी ने कहा, प्यारू बाबा के साथ
तिवारी शहनाज को भी गांव वालों ने मारा है. किसी ने
कहा कि शहनाज डर के मारे भाग गयी है कस्बे की
ओर. जितने लोग, उतनी बातें. इतनी ही देर में उसे
कुछ लोगों ने थाने चलने की भी राय दे दी है.

थाने वह नहीं जायेगी. उसे याद है, बेवा होने के
थोड़े ही दिनों बाद अपने देवर के खिलाफ रपट लिखाने
वह थाने गयी थी, जहां रात भर उसे बाघ-चीतों जैसे
सिपाहियों से जूझना पड़ा था. सबेरे थाने के दीवान ने
... कर कहा था कि फिर आना, तब तहकीकात में
... मन-ही-मन उसने कहा था कि अब वह कभी नहीं
जायेगी. महीनों बदन में दर्द होता रहा. यही सोच-
सोच कर उसका रोना और बढ़ जाता है कि अगर कहीं
शहनाज इन गांव वालों के डर से कस्बे की तरफ
भाग गयी और थाने वालों के हाथ पड़ गयी, तब तो
बेचारी नाजुक लड़की मर ही जायेगी.

प्यारू तिवारी से लड़की के रब्तजप्त की बात का
पता तो उसे था ही. उसके प्रति प्रकट रूप में उसने
कोई अरुचि कभी नहीं दिखायी. प्यारू के बाप गोपी
बाबा तो उसी के आशिक रहे हैं. जुम्मन जिंदा थे, तब
भी गोपी बाबा की राहें उसी के घर से हो कर जाती
थीं. जुम्मन के मरने के बाद बदनामी के डर से बाबाजी
ने अपने ही खलिहान में इंतजाम कर लिया था. अब
तो बेचारे दमे से जर्जर हैं. कभी भी दम तोड़ देंगे.
मगर उस घर से वह संबंध ज्यों-का-त्यों बना हुआ है.

प्यारू और शहनाज की रंगरेलियों से मुसलमान
युवकों में असंतोष भीतर-ही-भीतर बहुत बढ़ गया था.
वे ऐसे ही किसी मौके की तलाश में थे. आज उन्हें वह
मौका सहज ही मिल गया. प्यारू की ठुकाई करते हुए
कुछ ने यह भी कहा कि चलो साले, को मुसलमान
बना कर इसी से शहनाज का निकाह करवा दिया जाये.
इस समय भी मुसलमानी टोले में इकट्ठे हो कर
वे सभी कोई तैयारी कर रहे हैं, भीतर-ही-भीतर.

जुम्मन की बेवा पंचों से अपनी लड़की मांग रही
है. वह कहती है कि इन सब ने मिल कर हमारी बेटी
को मार कर कहीं गाड़ दिया है. हाय बेटी! वह रोती
जाती है और नाटकीयता की ओर से सचेत रह कर
छाती कूटती जाती है.

भीड़ में कुछ लोग उसी को घेर कर खड़े हो गये
हैं. कुछ लोग तो यह राय भी जाहिर कर रहे हैं कि
इसी ने शहनाज को कहीं छिपा दिया होगा.

हरखू और मोहन बाबू उत्तेजित हो कर आपस में
कुछ राय-मशविरा कर रहे हैं.

गिरगिटवा कभी इनका, कभी उनका मुंह देख
कर मन-ही-मन हंस रहा है.

सब हंगामे को दबाती हुई दहाड़ने की ऊंची,
कर्कश, लड़खड़ाती हुई आवाज उभरती है. सब लोग
एक साथ ही घूम कर उधर देखते हैं. कीचड़ में लदे-
फंदे, डगमगाते हुए, पंचायत को ललकार रहे हैं बिकरम
चौधरी. देसी शराब की तेज बदबू उनके चारों
ओर लिपटी है. लड़खड़ा कर गिरते-गिरते बच रहे हैं.
हाथ-पैर फेंक-फेंक कर चीख रहे हैं. किसी की ओर नहीं
देखते हुए वह सीधे उस खटिया की ओर बढ़ रहे हैं,
जहां पंचायत के सरदार लोग बैठे हैं. भीड़ में आतंक,
कुतूहल, चुलबुलेपन की एक लहर दौड़ गयी है.

खटिया के ठीक सामने पहुंच कर बिकरम चौधरी
धाराप्रवाह बोलने लगते हैं—का हो बाबा! कैसी
पंचायत कर रहे आप लोग? कौन साला सूअर खाया
है? कौन साला डांड लगाता है? बड़े आये हो राजा बिक-
रमाजीत के नाती! कोई आदमी अपने मन से कुछ खाता
है तो पंच के बाप का क्या लगता है! हम खाता है सूअर
का गोस्त. किसके बाप के डर से न न खायें? निकालो
हमको बिरादरी से. लगाओ हमको डाड़. किसको-किसको
डांड़ लगाओगे? मोहन बाबू कहां है? बुलाओ बबुआ
मोहन परसाद को. धरमू बाबा को बुलाओ. हम
बताते हैं कौन क्या खाता है? मट्ठी पर सात तरह का
चिखना मिलता है. घुघुनी. पकौड़ी. कलेजी. समोसा.
मछली. दो किसिम का गोस्त. मसालेदार गोस्त बकरी
का. सादा गोस्त सूअर का. रोज बनता है. बाबा लोग
पहले वही चखता है. चलो हम दिखाता है. ए मोहन
बाबू, ए धरमू बाबू, काहे चुप हो? बोलते काहे नाहीं?
तुमहूं तो खाये हो. काहे नहीं बोलते हो?

हंसते हैं बिकरम चौधरी.

सब की आंखें मोहन बाबू को खोजने के लिए घूमती
हैं. वह कहीं दिखायी नहीं देते. सब लोग सन्न रह जाते है.
सिर्फ बिकरम चौधरी की डूबती हुई आवाज सुनायी
पड़ती है.——मट्ठी पर साला रोज खाता है. हम एक
दिन चोकट भाई के घर खा लिया तो हमको बिरा-
दरी से बाहर करेगा. बड़का कहां है? धरमू को बुलाओ.
मोहन बाबू को भी. आज उनको भी सबके सामने
खिलाएगा. आज मुंड़वा को भी खिलायेगा.

सतुआ काका बेहोश हो जाते हैं. वह खटिया पर से
लुढ़क पड़ते हैं. उन्हें संभालने को लोग बढ़ते हैं तो
देखते हैं कि औतार बाबा की आंखों से झरझर पानी
बरस रहा है. बिरजू बाबा घुटनों में सिर गाड़ कर बैठे
हैं. ऐसा लगता है कि वह जम कर पत्थर बन गये हैं.

दूर पर काशी ज्यों का त्यों खड़ा है.

गिरगिटवा बाबाजी लोगों को समझा रहा है——
बाबाजी, शराबी की बात का क्या भरोसा! आप
लोग देवता हैं! देवता!! बिकरम चौधरी की बात से
उदास होते हैं? वह तो पियक्कड़ है. आप लोग
देवता हैं!... □□□

१२४, बिलंदपुर कसपा रोड, गोरखपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपहार □ दिलीपकुमार बनर्जी

उसके लौटते ही रानू ने पूछा—ले आये?

उसने रानू को ओर उदास निगाहों से देखा. रानू की आंखें उस छोटे-से पैकेट पर जमी थीं जिसे वह डाक खाने से छुड़ा लाया था. उसने मुसकराने का प्रयास किया किंतु लगा कि वह रो पड़ेगा. पैकेट रानू को थमा कर वह सोफे पर जा धंसा और धूल-धूसरित पैरों को मेज पर फैला कर आंखें मूंद लीं.

बबलू बाहर आंगन में पतंग उड़ा रहा था. पतंग समेट कर वह दौड़ पड़ा और उसके पीछे-पीछे टवलू, जो बड़े भाई के किसी खेल में शरीक न हो सकने पर भी साथ रह कर तालियां बजाता और उछल-उछल कर आनंद लेता और उसकी हर प्रक्रिया को दुहराता.

—क्या है मां? बबलू ने पूछा और टबलू ने भी उसी प्रश्न को दुहरा दिया.

उसने बच्चों की ओर कनखियों से देखा, फिर अपने धूल-धूसरित पैरों को, और फिर पैरों को फर्श पर रख कर सीधे तन कर बैठ गया और सिगरेट सुलगा कर पीने लगा.

रानू ने पैकेट के भीतर की वस्तु को निकाल लिया था, जिसे उलट-पलट कर देखने के बाद उसके मुंह से अनायास ही एक चीख निकल पड़ी—हाय राम! और क्षणांश बाद ही वह खिलखिला कर हंस पड़ी.

—क्या है मां? बबलू अधीर हो रहा था.

रानू ने हंसते हुए ही कहा—तेरे पापा अब नेकटाई बांधेंगे. . . ले, देख!

—ये तो मफलर हैं मां, रानू के हाथ से बित्ते भर चौड़ी टाइयों को हाथ में ले कर बबलू ने कहा.

दिलीपकुमार बनर्जी ने मध्यमवर्गीय परिवारों की नैतिकता, आर्थिक और सामाजिक स्थिति तथा उनकी अपेक्षाओं और आवश्यकताओं को अपनी कहानियों का माध्यम बनाया है. इनके पात्र परिस्थितियों से समझौता करके नयी परंपराओं को तो जन्म देते हैं लेकिन नये संस्कारों से नहीं जुड़ पाते.

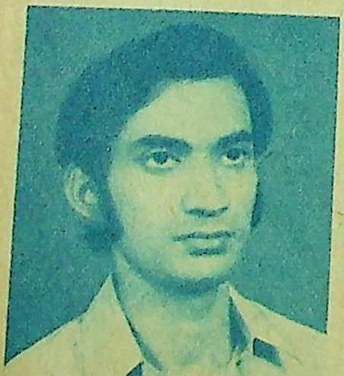

टबलू रोनी-सी सूरत बना कर मां का आंच[ल] ... रहा था.

—ले टबलू, एक तेरा है, एक मेरा. . .अं[कल ने] भेजा है. . . .वह कह कर बबलू ने एक टाई छोटे [को] थमा दी और दोनों फिर उछलते हुए बाहर आं[गन की] ओर दौड़ पड़े.

बच्चों के ओझल होते ही वह चीखा—चा[य] कुछ बनायेगी या हंसती रहेगी? रानू का हंस[ना] अच्छा नहीं लग रहा था.

रानू ने सतर्कता से उसकी ओर देखा. वह ... गंभीर मुद्रा में था. पति की मनोदशा वह समझ ... वह उसके पास आ कर बैठती हुई बोली—अब ... करने से क्या फायदा? जो होना था, सो हो गया ... हाथ नहीं धोओगे क्या?

—अभी तो मुझे फिर निकलना है, नाश्ता ... कर ही करूंगा – वह कुछ सहज होता हुआ ... चाय नहीं पिलाओगी?

रानू उठ कर चली गयी. उसकी निगाहें साम[ने] सोफा पर कुछ पल टिकी रहीं. शादी के बाद ही ... के आग्रह से उसने सोफा-सेट खरीदा था. कु[शन] कवर जीर्ण-शीर्ण हो गया है. अब इन्हें बदल[ने की] वह नहीं सोचता. खर्चे में हर संभव कटौती ... कर ली है. रानू ने भी नौकरानी की छुट्टी कर ... चौका-बरतन खुद करने लगी है. बचत की वृहद् यो[जना] बनायी है दोनों ने मिल कर, बच्चों का भविष्य दे[खना] है, बढ़ती हुई महंगाई से जूझना है. सहकर्मी और प[ड़ोसी] उसे कंजूस कहने लगे हैं, वह ध्यान नहीं देता.

रानू चाय ले आयी और सामने बैठ गयी. प[्याला] उठाते हुए उसने कहा – मुझे साले पर बहुत ... आ रहा है. . . .कौन उससे कुछ मांगता है? फिर साले ... और कुछ नहीं मिला भेजने के लिए? उसके बा[प ने] भी कभी पहनी थी टाई?

—छी! गाली नहीं देते. . .रानू समझाने ... कुछ भी हो, है तो तुम्हारा भाई ही. . .

—साला भाई नहीं, दुश्मन है! जमीन बेच[कर] अमेरिका भेजा, वहीं बस गया. . .ठीक है, कहीं र[हे] ... बड़ा डाक्टर बन गया. . .ठीक है. कभी कदाच एक ... चिट्ठी. . .वो भी बड़ी-बड़ी बातें. . .गाड़ी खरीद ली है. . . चायनीज लड़की से शादी कर रहा हूं. वह भी डाक[्टर] है. . .हवाई द्वीप जा रहा हूं हनीमून मनाने. . .ठी[क] है बाबा. . .तरक्की करो. . . ऐशोआराम करो. मजे ... रहो. मैंने कभी एक पाई भी नहीं मांगी उससे. दस ... में एक बार भी खयाल नहीं आया कि उसका एक ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• महेंद्र बंसल

बड़ा भाई है, गरीब है, शादी की है, बच्चे हैं ! चलो ठीक है, मैं उससे कुछ उम्मीद नहीं करता, हाथ नहीं पसारता, कुछ नहीं मांगता. पर यह क्या ? एक छोटा-सा गिफ्ट भेज रहा हूं. . .गिफ्ट . . .! नानसेंस!

उसका स्वर ऊंचा होता जा रहा था. रानू ने टोका—छोड़ो भी, चाय ठंडी हो रही है.

—क्यों छोड़ दूं ? यह भी कोई गिफ्ट है? साठ रुपये कस्टम ड्यूटी देने के बाद एक जोड़ा नेकटाई. . . वो भी आठ-दस इंज चौड़ी! साले ने मुझे भी अमेरिकन लोफर समझ रखा है!

साठ रुपये का दु:ख रानू को भी था. फिर भी उसने ढाढ़स देते हुए कहा—इससे क्या, उपहार तो उपहार ही है. लोगों से कह तो सकोगे कि अमेरिका से मेरे भाई ने भेजा है!

उसके मुंह से अस्फुट एक भद्दी-सी गाली निकली.

—जल्दी आओगे न ? रानू ने पूछा.

—हां, क्यों?

—शॉपिग करनी है.

—कैसी शॉपिग?

—तुम्हारे सभी कमीजों के कालर फट चुके हैं, कुछ तो अब सिलवानी ही पड़ेगी. कुछ अच्छे कपड़े बनवा लो जिन पर टाई भी फबे.

—तुम्हारा दिमाग तो ठीक है ?

—कुछ अपनी भीं तो इच्छाएं होती हैं. इतनी तकलीफें सहकर बचत किस काम आयेगी? अभी से बच्चों का भविष्य देख रहे हो, हो सकता है और पंद्रह साल के बाद बबलू भी अमेरिका में हो और तुम्हें टाई ही भेजे! कहती हुई रानू मुसकरा पड़ी.

कुछ नरम हो कर उसने कहा—कहती तो ठीक हो. . मगर . . .टाई पहनकर राशन की लाइन. . .किरानी का काम. . .खैर, देखा जायेगा.

बुदबुदाता हुआ वह बाहर निकल गया.

बबलू की पतंग कट गयी थी और वह आसमान पर उलझती पतंगों को टकटकी बांधे देख रहा था. टबलू लाईट लिये खड़ा था.

क्षण भर रुक कर उसने दोनों बच्चों की ओर देखा. दोनों ने टाइयों को मफलर की तरह बांध रखा था.

सहसा एक पतंग कटी और बबलू उसे लूटने के लिए मैदान की ओर भागा. एक खीझभरी मुसकान के साथ वह आगे बढ़ गया. □□□

लाइसियाम मेस, ४२५, शाहगंज इलाहाबाद-२११००३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

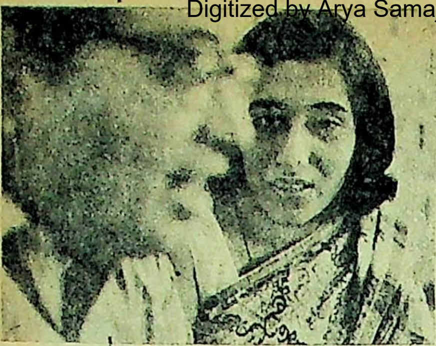

• अतीनदास

राकेश के पहले / राकेश के साथ
राकेश के बाद
यादों का एक लंबा सिलसिला

चंद सतरें और (२३)

• अनीता औलक

पिछले अंकों में आपने पढ़ा है कि देश-विभाजन ने अनीता औलक के परिवार को भी विभाजित कर दिया था. वह जगह-जगह स्थापित हो रहा था और उखड़ भी रहा था. इस बीच राकेशजी का अनीताजी के घर से भी परिचय बढ़ रहा था. अनीताजी ने घर में कह दिया कि वह राकेशजी से शादी करना चाहती हैं. घर में हंगामा हो गया और कुछ फैसले किये गये. राकेशजी से उनका मिलना-जुलना बंद कर दिया गया, लेकिन फिर भी कॉलेज के बहाने वे मिलते रहे. एक दिन उन्होंने चुपके से शादी की और बंबई चले आये. उन्हें फिर दिल्ली वापस जाना पड़ा. अम्मा की मृत्यु के बाद राकेशजी अधिक नहीं जी सके. अब आगे पढ़िए. . .

राकेशजी के व्यक्तित्व के बारे में कुछ भी लिखना या कहना अपने में एक बहुत बड़ी चुनौती है—एक बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है. मैं स्वयं उसके बारे में कुछ भी कह सकने में अपने को असमर्थ और पराजित पाती हूं.

कुछ मित्र ऐसे हैं जो शायद यह समझते हैं कि वे राकेशजी को पूरी तरह समझते हैं—यह अपने में एक बहुत बड़ी छलना है. लेकिन इतना तो सत्य है कि उन्हें मेरे समेत जितना भी, जो भी समझ सका, वह ही अपने में एक बहुत बड़ी उपलब्धि है. एक बहुत बड़ी सार्थकता है.

मुझे तो वैसे ही उनके साथ रहने का, उन्हें समझने का, बहुत ही कम समय मिला. . .केवल इतना अंतर ले कर कि मैंने अन्य लोगों की बनिस्बत उनके साथ कुछ अतिरिक्त सुबह और शामें होती देखी हैं. इस सबके बावजूद मुझे लगता है कि यह अपने में बहुत थोड़ा, बहुत न्यून है. इस तेज रफ्तार से आदि और अंत हुआ कि समझ ही नहीं आता कि उनके किस विषय में कुछ कह सकती हूं और किस विषय में नहीं. शायद उन्हें पूरा जानने के लिए एक पूरी जिंदगी भी कम थी, सिर्फ इसलिए ही नहीं कि उनका व्यक्तित्व बहुत बुलंद था, बल्कि इसलिए और भी कि उनका बहुत कुछ था जो सिर्फ उनके अपने लिए ही था. किसी और के साथ शेयर करने के लिए नहीं.

मेरा उन्हें जानना सिर्फ उतने दायरे तक ही सीमित था कि जितना उनके साथ जीवन व्यतीत करने के लिए आवश्यक था. यों इतना भी अपने में कोई कम अनुभव नहीं था. यह भी उन पंचभूतों से कम नहीं था कि जिनमें एक की भी कमी होने से जीवन का अंत हो जाता है.

उनके साथ सहजीवन की सबसे बड़ी और सबसे पहली शर्त थी 'ईमानदारी'. वह किसी का तो क्या, अपना झूठ बोलना भी बर्दाशत नहीं कर सकते थे. उनका कहना था कि वह आदमी क्या जो अपने शब्दों को भी नहीं ऑनर कर सकता. सबसे पहले आदमी को अपने प्रति ईमानदार होना चाहिए, तभी वह दूसरे के साथ भी ईमानदार हो सकता है. एक घटना याद आयी. एक बार श्रीमती जवाहर चौधरी ने फोन किया और कहा कि उन दोनों की इच्छा हो रही है कि वे दोपहर को हमारे यहां आयें. राकेशजी ने जवाब दिया कि उन्हें कहीं जाना है, इसलिए वे लोग दोपहर में न आ कर शाम चार बजे ही आयें, क्योंकि तब तक वह भी लौट आयेंगे. . .फिर सीधे जा कर अपनी स्टडी में काम करने लगे. लेकिन उनसे काम नहीं हुआ. शाम चार बजे श्री और श्रीमती जवाहर चौधरी आये तो तब कहीं जा कर राकेश जी अपनी फॉर्म में आये. रात को जैसे ही वे लोग जाने लगे तो राकेशजी से रहा नहीं गया. बोले—माफ करना भाभी, मैंने आपसे झूठ बोला था. . . दरअसल मैं चार बजे तक काम करता हूं. इसलिए मैं उससे पहले किसीसे नहीं मिलता. . .बात सही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी. लेकिन झूठ बोल कर बात ना, यह उन्हें अपने में बर्दाश्त था. अगर वह चलने से पहले भी को सच न बता देते सारी रात या तो करवटें बदलते रहते या फिर रात में किसी पकड़ कर उनके घर जा पहुंचते. उन्हें किसी व्यक्ति में किसी बात को न कर सकने की असमर्थता तो समझ में आती थी, लेकिन उसकी जगह अगर कोई व्यक्ति झूठ का सहारा ले, तो यह उनके बर्दाश्त के बाहर की बात थी. सिर्फ इसीलिए राकेशजी मुझसे कभी कुछ नहीं छिपा सके. और न मैं ही. कोई भी व्यक्ति अगर उनसे मेरे बारे में कोई भी बात करता तो उन्हें कभी विश्वास नहीं आता, क्योंकि उन्हें विश्वास था कि जब तक अम्मा इसे कबूल नहीं करेगी तब तक वह बात झूठी है. इतना जबरदस्त विश्वास पाना कोई एक दिन का संघर्ष नहीं था. यों इस संघर्ष का सामना करना मैंने पहले दिन से ही शुरू कर दिया था. हालांकि मेरे इस पत्र के बारे में वह सहजीवन शुरू करने से पहले भी थोड़ा-बहुत जान गये थे.

जिंदगी में इतना कुछ स्वयं झेला, खोया और अर्जित किया था कि अब आ कर किसी का कुछ भी उनके लिए करना उन्हें बर्दाश्त नहीं होता था. विशेषकर उन लोगों से जो करने के साथ उसे छह बार सुनाते भी थे. जिंदगी में जिन-जिन लोगों ने उनके लिए कुछ किया था या दिया तो उसे उन्होंने सिर्फ इसलिए ही स्वीकार किया कि मना कर देने से अगला आदमी कहीं अन्यथा न ले ले. यही आदत मैंने अम्मा में भी देखी थी. उन्हें भी अगर कोई कुछ देता तो वह उसे स्वीकार पीछे करतीं, पहले तो उस देने के बोझ के नीचे आ जातीं.

लेकिन राकेशजी में और अम्मा में जो बात सबसे बड़ी थी, वह यह कि उन्हें कोई चीज पसंद हो या न हो, किसीकी बातें अच्छी लगें या न लगें, उन्हें निभाना बहुत आता था, अगले आदमी को यह कभी महसूस नहीं होता था कि उन्हें उसका कुछ भी बुरा लगा है. बिल्कुल वैसी ही बातें जब मैं राकेशजी के साथ करती, तो वह मुझे डांट देते कि तू भी ऐसी ही बातें कर रही है! तुम्हें बाहर वालों में और घर में कुछ भी अंतर महसूस नहीं होता. अगर मैं बाहर वालों के साथ भी अपने घर का-सा व्यवहार कर सकता तो मुझे फिर अपने 'घर' की क्यों जरूरत पड़ती? और यह बात सच भी थी कि राकेशजी कहीं कितने भी इनफॉरमल क्यों न रहे हों—घर में तो वह उससे कोसों आगे थे—अलग थे. वह आदमी बाहर जितना इनफॉरमल लगता था– मन में उतना ही फॉरमल था. इसीसे इधर आ कर उन्होंने इतना भी निभाने-निभाने का प्रोग्राम समाप्त-सा कर दिया था. उनका कहना था कि अब काम ज्यादा और निभाना कम अफोर्ड कर सकता हूं—पहले-पहल तो मैं उनकी इस विभाजित प्रकृति से काफी कन्फ्यूज्ड भी रही लेकिन धीरे-धीरे मुझे उन्हें और जानने, और समझने का मौका मिलता रहा. जहां-जहां वह आदमी मुंह-फट भी था, वहां-वहां उसमें बर्दाश्त का भी बहुत माद्दा था. ऐसे में कई बार वह घड़ियां मैंने उनके साथ बैठ कर बांटी भी. इसी विभाजित प्रकृति का ही कारण था कि उन्होंने किसीको अपने घर पर आ कर रहने का निमंत्रण नहीं दिया. इससे उनकी आजादी में बहुत फर्क पड़ता था.

उन्होंने जितने सुख लोगों के साथ बांटे, उतने दुख नहीं बांटे. जीवन को उन्होंने अलग-अलग तरीके से झेला और भोगा था, लेकिन इस विषय में अपने मित्रों में बैठ कर उन्होंने उसे कम ही दोहराया था. उन्हें सेल्फ-पिटी से बहुत नफरत थी, इसलिए जहां भी गये, जिनमें भी बैठे, उन्होंने अपने उत्तरोत्तर ठहाके ही दूसरों को दिये. बीते हुए कल में उन्हें विश्वास नहीं था. उन्हें तो सिर्फ आने वाले कल में ही आस्था थी. जो बीत गया, वह खत्म हुआ, जो आने वाला है, उसी की प्रतीक्षा रहती.

कई मित्रों ने 'न आने वाला कल' टाइटल से उन्हें बहुत जोड़ कर देखा और लिखा है, जो कहीं बहुत गलत है. राकेशजी की जीने में बहुत बड़ी आस्था—एक बहुत बड़ी शक्ति दिखती थी. वह एक व्यक्ति था, जिसे जीना आता था और जिसने जिंदगी असली अर्थ में जी थी—उन्हें हर कल में आस्था और दृढ़ विश्वास था. वह जितने दिन भी जीये, सिर्फ अपने लिए और अपनी शर्त पर जीये—उन्होंने जिंदगी जीने में कभी भी किसी किस्म का कंप्रोमाइज नहीं किया. उसके विपरीत जब-जब उन्होंने झेला, उन्होंने उसे अपने तक ही रखा और और जब-जब खुशियां आयीं उसे अपने मित्रों में ही बांटा. कारण, उन्हें खुशियों में विश्वास था और उसे ही जिंदगी समझते थे. सिर्फ इसीलिए दो बार जिंदगी में उन्होंने कंप्रोमाइज नहीं किया, उसे अपनी ही शर्त पर जीने की आस्था ले कर ठहाके लगाते आगे और आगे ही बढ़ते रहे.

राकेशजी सबको आधा-अधूरा छोड़ गये, यह भी गलत है. उनसे जिस-जिस व्यक्ति ने जो-जो पाया, वही अपने में पर्याप्त है, पूर्ण है. उसीके भरोसे वे लोग अपनी-अपनी पूरी जिंदगी व्यतीत कर सकते हैं. जो कुछ उन्होंने लोगों को दिया, वह कम नहीं है—यह बात अलग है कि मनुष्य बहुत लालची होता है. जितना उसे मिलता है, उसके लालसा बढ़ती जाती है—लेकिन वहां यह भी सच है कि जब मिलना बंद हो जाता है तो आदमी उसीमें संतोष भी करना सीख जाता है. लेने वालों ने और पाने वालों ने उस व्यक्ति से बहुत कुछ लिया और पाया. क्योंकि देने वाला ही बहुत उदार दिल का था—देने में उसे बहुत ज्यादा वापस मिलता था—सूद समेत. उस व्यक्ति का सूद उसका जबरदस्त ईगो था, जिसका उसके मित्रों ने हमेशा खयाल रखा—हमेशा मान रखा.

राकेशजी सिर्फ व्यवहार में ही नहीं, बल्कि अपने लेखन में भी उतने ही ईमानदार थे. उनके कम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखने के कई कारण रहे हैं—पहले जिंदगी की अस्थिरता—फिर आर्थिक संकट के कारण गाहेबगाहे नौकरियां करना (उन्हें भी उन्होंने ईमानदारी से निभाया) और सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण कारण उनका सेल्फ रिजेक्शन था. **'स्याह सफेद', 'कांपता हुआ दरिया', 'अंधेरे बंद कमरे', 'नीली रोशनी की बाहें', 'लहरों के राजहंस', 'आधे-अधूरे' 'पैर तले की जमीन'** के छह-छह, सात-सात ड्राफ्ट मौजूद हैं. उनके अनुसार अगर उनके पास पर्याप्त समय होता तो शायद अब भी वह उन्हें जरूर दोहराते.

अपनी ही कृति को ले कर इतनी जबरदस्त पेशेंस थी उनमें. अपने ही लेखन का मान-दंड उनके लिए यह नहीं था कि लोगों ने कहां तक उसे पसंद किया या स्वीकारा. उनका मान-दंड उसकी निजी ईमानदारी ही थी. बस.

फिर एक आदत और भी थी. कुछ दिन बाहर जाने की वजह से तथा फिर तबीयत खराब रहने की वजह से अगर कुछ दिन वह काम नहीं कर पाते तो बाद में उसे छोड़ी जगह से आगे नहीं बढ़ा सकते थे—उन्हें उसे फिर पहले पन्ने से ही शुरू करना पड़ता था. इन्हीं वजहों से वह आदमी कम लिखने पर मजबूर था.

इसके साथ-साथ राकेशजी एक बहुत बड़े पॉलिटीशियन भी थे. 'नई कहानी' आंदोलन और 'थियेटर मूवमेंट' इसी बात के द्योतक हैं. उन्होंने जब भी तीर छोड़ा तो ठीक निशाना बांध कर ही छोड़ा. कच्ची गोलियां चलाने में उन्हें विश्वास नहीं था.

उन्हें हा-हुल्लड़ मचा कर जनता में भगदड़ मचाने से एक और ही आनंद मिलता था. इसीलिए उनके छोड़े गये तीरों से आहत हुए योद्धा उनके चले जाने के बाद आज भी पीड़ा से कराह रहे हैं.

जहां वह आदमी इतना ज्यादा प्रचंड था, वहां वह बहुत ज्यादा इमोशनल भी था. कभी-कभी बहुत छोटी-छोटी बातों से भी तकलीफ पा जाता था.

एक और श्री ओमप्रकाशजी से उनका मतभेद हो गया था. फिर क्या था, कई-कई दिनों तक न तो उन्होंने काम ही किया और न उन्हें फोन ही किया. मैं सब जानते हुए भी चुप ही रही. . .क्योंकि मेरी कोई भी बात करने से समस्या नहीं सुलझ सकती थी—बल्कि उनका ईगो ही हर्ट हो सकता था. कभी-कभी मन करता कि ओंजी को ही फोन करके स्थिति समझाऊं लेकिन यह और भी डेलीकेट सिचुएशन हो जाती. ओंजी भी और राकेशजी दोनों ही कंप्रोमाइज्ड महसूस करते. लेकिन बात अपने आप ही सुलझ गयी—क्योंकि हार कर ओंजी ने ही हथियार डाल दिये थे—और कोई दूसरा तरीका ही नहीं था.

राकेशजी कई बार ऐसे-ऐसे कष्टों में पड़ जाते थे. लेकिन सिर्फ उन्हींके साथ कि जिनसे उनका आत्मीयता का रिश्ता था. उनके चेहरे से ही मुझे पता चल जाता कि कोई-न-कोई बात हुई है. कोई-न-कोई परेशानी है. . .और यह भी पता चल जाता था कि वह चाहते हैं कि मैं उसे उनसे शेयर करूं या न करूं.

लेकिन शेयर किये बिना भी नहीं रह सकते थे, क्योंकि उनकी आदत थी कि कोई बात वह ज्यादा देर तक अपने अंदर नहीं रख सकते थे. कोई बात तत्काल और कोई कुछ समय के बाद बता जरूर देते थे.

कहीं का उद्घाटन, कहीं का भाषण और कहीं की कॉन्फ्रेंस उन्हें बहुत दुखी करती थी—इसी से वह बहुत बड़े सूडो भी माने जाते थे. पिछली एशिया थियेटर कॉन्फ्रेंस में अगर श्री गुजराल इतना अनुरोध न करते तो सुरेश अवस्थी जानते हैं कि वह नहीं जा रहे थे.

फिर बंबई इसलिए भी आये थे कि श्री करंजिया से अनुरोध करते कि उन्हें एफ. एफ. सी. से मुक्त कर दिया जाये—लेकिन करंजिया नहीं माने. लेकिन जहां-जहां वह निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र थे, वहां-वहां उन्होंने पद्श्री को उठा कर ताक में भी रख दिया था.

एक बात और—और यह थी कि अगर वह किसी को किसी बात के लिए कन्विंस करने पर आते तो अगला आदमी विश्वास किये बिना नहीं रहता. दूसरी बात कि जो बात वह अगले आदमी के मुंह से कहलवाना चाहते—कहलवा लेते थे.

किसी व्यक्ति की कही किसी बात से परेशान हैं, तो यह उनके कमरे में चहलकदमी करते ही पता चल जाता था. उसके बाद अगर वह व्यक्ति लोकल है तो फिर उससे हिसाब-किताब करने उसके घर चले जायेंगे और अगर शहर से बाहर है तो अपनी टेबल पर उसके नाम चिट्ठी स्टिकर लिखते पाये जायेंगे. फिर उसे पोस्ट तभी करेंगे जब उसे मुझे दिखा देंगे. 'ठीक है न!' ऐसे में मॉरल स्ट्रेंथ की बहुत जरूरत महसूस होती थी. क्योंकि ऐसी समस्याएं केवल आत्मीय मित्रों को ले कर ही उत्पन्न होती थीं.

३ दिसंबर को उनके मित्रों को एक और धक्का खाना पड़ा. प्रत्येक मित्र यही समझता था कि अगर राकेश ने अपना सब कुछ शेयर किया है तो सिर्फ उसके साथ ही शेयर किया है. यह इतने मित्र उनके और कहां से आ गये? मैं तो समझता था कि. . .फिर खयाल आया कि राकेश की कुल संपत्ति तो उसके मित्र ही थे.

यह बात सच है कि उनके जितने मित्र थे—वे सब राकेशजी के साथ बिल्कुल साथ हो कर जीये हैं—और उन लमहों में प्रत्येक दोस्त उसे सिर्फ अपनी निजी संपत्ति ही समझता था. यह भी सच है कि उनके व्यक्तित्व के इतने पहलू थे कि वह कभी भी किसी एक से शेयर नहीं कर सकते थे. उनके मित्रों के पास उनके छोड़े गये खजाने आज भी पीछे रह गये हैं. वे इतने भरपूर और संतुष्ट हैं कि अपने-अपने पास छोड़ी गयी संपत्ति को औरों की नजरों से दूर अपने अंदर छिपाये बैठे हैं—कि कहीं उसे किसीकी नजर न लग जाये. वह उन लोगों के जीवन की कुल संपत्ति जो है. . .

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

र में राकेशजी किसी के साथ
... के लिए भी फॉर्मल नहीं
...ते थे. उनकी देर तक सोने की
... थी. इसलिए १०–११ बजे
...ब भी वह सोते, घर में एक-
...ांति रखनी पड़ती थी. उनकी
... बड़ी कच्ची थी और वह
... प्रकार का डिस्टर्बेंस बर्दाश्त
... कर सकते थे. फिर अगर
... करने बैठे हैं तो इसीलिए
... रखनी पड़ती थी––महज
... वजह से उन्होंने कभी
...ी को घर में निमंत्रण नहीं
... और अगर किसी वजह से
... रह भी गया है तो फिर अगली
... के चार बजे तक उससे नहीं
...ते थे. यों कोई बाहर का व्यक्ति
... में है, इसी एहसास से ही वह
...ी आजादी में फर्क महसूस करते
...—अपने रोज के कार्यक्रम में मन
...ीं लगा पाते थे––अपने में नहीं हो
...ते थे.

...बजे उठते तो कई बार अपने पर हंसते. कहते––हूं... सुबह ५ बजे उठ कर सालों की नौकरियां बजाओ... अरे, यहां तो सिर्फ अपनी नौकरी बजाने तक की फुरसत नहीं है.

उनके विभाजित व्यक्तित्व को दो भागों में बड़ी सूक्ष्मता से आंका जा सकता था. एक तरफ तो हाइली इंटलेक्चुअल लेवल था और दूसरी तरफ हाइली इमोशनल लेवल था. इन दोनों लेवल्स को उस व्यक्ति ने बखूबी निभाया भी. कभी भी इन दोनों में कंप्रोमाइज नहीं होने दिया. इन दो एक्स्ट्रीम पहलुओं पर जीने वाला वह अपने किस्म का एक ही व्यक्ति था.

उस आदमी ने सिर्फ अपनी और अपनी ही शर्त पर जिंदगी जी थी. उसने मित्रता भी की तो अपनी ही शर्त पर. जिन-जिन लोगों ने उसे स्वीकारा था, सिर्फ उसकी शर्तों को मान कर ही स्वीकारा था. इसलिए उनका कोई मित्र ऐसा नहीं जो उन्हें समझा न हो––लेकिन उनकी शर्त मानने के बाद तो फिर उन सबका गुलाम भी हो जाता था. जिस-जिसने उनकी शर्तें मान कर उनको मान दिया, उन सभी को उस व्यक्ति ने भी उतना ही मान और प्यार वापस दिया. लेकिन उस व्यक्ति को अपना बनाने के लिए पहले अपनी कुरबानी एक बहुत बड़ी शर्त थी–– उसके साथ ही बाकी की संभावनाएं बंधी थीं.

अगले अंक में

क्या अकेलेपन का दायरा टूट सकता है? कैसे?...

वार्षिक ग्राहकों के लिए विशेष छूट

'सारिका' के प्रत्येक अंक का मूल्य एक रुपया है, किंतु वर्ष भर के लिए वार्षिक शुल्क मात्र दस रुपये है, यानी साल भर में २ अंक मुफ्त! यदि आप दो साल के लिए ग्राहक बनते हैं, तो शुल्क केवल उन्नीस रुपये है यानी दो वर्षों में ५ अंक मुफ्त. हां, तीन वर्ष के लिए शुल्क केवल सत्ताईस रुपये है और इस तरह आप तीन वर्षों का शुल्क एक साथ भर कर ९ अंक मुफ्त में प्राप्त कर सकते हैं.

सारिका

शीघ्रता कीजिए, आपके लिए सारिका की छूट प्राप्त दरें इस प्रकार हैं:

एक वर्ष — १० रुपये
दो वर्ष — १९ रुपये
तीन वर्ष — २७ रुपये
विदेश में समुद्री डाक से एक वर्ष – २२ रुपये

कृपया यह कूपन ज़रूरी राशि के चेक / ड्राफ्ट / मनीआर्डर के साथ आज ही भेज दें —

सर्कुलेशन मैनेजर,
सारिका, टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग,
बम्बई – ४०० ००१

कृपया मुझे / हमें निम्न पते पर एक वर्ष / दो वर्षों / तीन वर्षों के लिए 'सारिका' भेजने की व्यवस्था करें. १० रुपये / १९ रुपये / २७ रुपये चेक / ड्राफ्ट / मनीआर्डर द्वारा भेजे जा रहे हैं.

हस्ताक्षर .... पता ....
दिनांक ....

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक कहानी-संग्रह

आग

लेखक : दामोदर सदन
प्रकाशक : शब्दकार,
गली डकौतान, दिल्ली—६
पृष्ठ : १४३ ; आठ रुपये.

माता-पिता के दायित्व, परिवार और नगर-मोहल्ले (या गांव) के परिवेश, कैशोर्य की कल्पनाओं व खिन्नताओं और नवयौवन की द्विविधाओं और आकांक्षाओं के सहज ग्राह्य तंतुओं से आदमी एक बार वैसा बन चुका होता है, जैसी उसकी सीमाएं और संलग्नताएं होती हैं. यह आधारभूत व्यक्तित्व और मूल मानसिकता यदि मोटे तौर पर सही होती है, तो शेष, यानी स्वतंत्र जीवन, में उसे बहुधा बारी-बारी या एक साथ नाना विरोधाभासों, अन्यायों, असमताओं और अमानवीयताओं से झगड़ना-जूझना पड़ता है. समझौते, छल-कपट, कुटिलताएं, मुखौटे और विद्रोह और असामंजस्य इसी जीवन (संघर्ष) की देन होते हैं. इसी जीवन की कसौटियों पर परखा जाने के बाद आदमी सच्चा या गलत होता है.

इधर हाल ही का समर्थ कथाधर्मी इसी निजद्वंद्व और प्रतिद्वंद्व में जीने (-मरने) वाले, इन्हीं गोधूलियों, घटाटोपों, सतत (अकसर अनचाहे, विविध, छोटे-बड़े) अपराधों और पश्चात्तापों में डूबने-उतराने वाले सहज-सही आदमी को ज्यों-का-त्यों अपने दृष्टिकोण से देखने-समझने, बखानने और विवेचित करने का आदी हो चला है. यह एक सुखद स्थिति है कि दामोदर सदन इसी आदमी को इसी दृष्टि से देखते हैं.

'आग' में दामोदर की तेरह कहानियां हैं, जिनके पात्र बिना किसी अपवाद के निम्न, नौकरी-पेशा, मध्यमवर्ग के हैं. (एक-आध जगह, मसलन 'ब्लडहाउंड्स' में वह उन्हें लॉट-अफसर श्रेणी का भी बताते हैं) और वे सब कहीं-न-कहीं अपराधी हैं, कहीं-न-कहीं प्रायश्चित की आंच में तप या झुलस रहे हैं, कहीं-न-कहीं गुनहगार हैं, कहीं-न-कहीं लाचार हैं. और अपमान और मिथ्याभिमान के शिकार हैं. मगर ये सब निर्विवाद रूप से अपने से ऊपर या परे की, सामर्थ्य से बाहर की किसी व्यवस्था का शिकार हैं.

मगर सही दृष्टि और लेखकीय संस्कारों से सज्जित दामोदर सदन बाजवक्त धैर्य एवं तीक्ष्णता से काम नहीं लेते. विरोधाभास, आक्रोश अथवा खलिश की स्थिति की ऊपरी प्रचंडता से वह इतने उद्वेलित हो जाते हैं कि तुरंत कलम भांजने लगते हैं. जबकि इन अवसरों पर, ऐसा शिद्दत से महसूस होता है कि वह थोड़ा ठहरते, प्रारंभिक उफान गुजरने देते तो वह अपने पात्रों की नियति या स्थिति की विषमता ज्यादा गहराई और विस्तार से देख-समझ पाते. अधिकांश कहानियां कथ्यों के सही रेखांकन के बावजूद प्रभाववत्ता का वांछित परिमाण उपलब्ध नहीं कर पातीं. और इस 'उत्साह' की चपेट में 'आग' नामक कहानी भी थोड़ी-बहुत आ ही जाती है. 'कुत्ते,' 'पुल', और 'अर्थपुरुष' भी इसी जल्दबाजी को भेंट हो जाती हैं.

मगर महत्वपूर्ण बात यह है कि अधिकांश कहानियों में दामोदर

दामोदर सदन

एक मुद्दा और एक दर्द ... आते हैं. और यह मुद्दा ... दर्द निश्चय ही सम... परिवेश और मामूली आदमी ... नाना नियतियों की ओर ... शाली प्रामाणिक संकेत क... 'आग' के अलावा 'मौत' ... 'ब्लडहाउंड्स' इस संदर्भ में ... हैं; प्रत्येक के पात्र शोषण ... और शोषित होने, अपमान ... और अपमानित होने के ... हुए जीवनक्रम को भोगने-सोंप... को लाचार हैं.

दामोदर की ईमानदारी ... से स्पष्ट हो जाती है कि ... 'तुषार' और 'ब्लडहाउंड्स' के ... अफसरों की कमीनगियों ... उसी मर्दनकारी, अधोमुख ... के दर्शन करते हैं, जोकि ... और 'मौत' के किरानीवर्गीय ... चारियों की मलिन जीवन... के मूल में है.

□ राम अरो...

एक लघु-उपन्यास

प्रेत

लेखक : श्रवणकुमार
प्रकाशक राजपाल एण्ड संस,
दिल्ली; ४.०० रुपये

श्रवणकुमार का पहला लघु-उपन्यास सही मायने में एक ... की शुरुआत है—निषेधक, ... रात्मक, ह्रासकारी शक्तियों ...

श्रवणकुमार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शक्तियां हम और आपसे ...कतवर हैं, ज्यादा संगठित ...ा और शासन के ज्यादा ... श्रवणकुमार ने 'प्रेत' के ...से इन शक्तियों को चुनौती

... का नायक जीवन की ...ओं में उलझा है. जीवन ...ूल्यन उस पर हावी है. ... अव्यवस्थित है. यह जो ... स्वातंत्र्योत्तर भारत में ... लिए उसके सामने रखा ... वह जीवन, उसके मूल्य ... ह्रासकारी शक्तियां, उसका ... उसका हाहाकार बराबर ...छे को धकेलना चाहता है. ...ावस्तु संक्षिप्त है. नायक ...ता उसके बच्चे को ...ी आस लिये चल बसते हैं. ... अतीत की धारा में वह ...है. अतीत उसका उज्ज्वल ...था, वर्तमान भी उज्ज्वल ...है. वह उसी की उपलब्धि ...वद भविष्य भी सुंदर नहीं ... पर बात ऐसी नहीं होनी थी. ...्योत्तर भारत में हमेशा ...च्छे भविष्य का सपना हमें ...या गया है. नायक सोचने ...ाध्य है, उसके साथ धोखा ...है. पूरा उपन्यास इसी अंत-...त्र की देन हैं. जो अभिशप्त ...न उसे जीने के लिए दिया ...है—वह उसके खिलाफ बगावत नहीं कर सकता. ...था-तंत्र ने उसे जिस तरह ...ा है, वह वहां से बाहर आ कर ...खुल्ला चुनौती देने की ...ति में नहीं है. व्यवस्था इसी ...े व्यक्तित्व पर हावी होती है. 'प्रेत' में व्यवस्था से विद्रोह ...है, पर इसका स्तर वैयक्तिक ...कथानायक जीवन के तमाम ...अनुभवों से गुजरता है, पर ...की खीझ, झुंझलाहट, घुटन, ...ता, पीड़ा को वह इस व्यवस्था ...देन भी समझता है. अंत में एक ...स्फोटक स्थिति उत्पन्न होती है ...र वह तमाम ह्रासकारी शक्तियों ...ो चुनौती देता है.

□ आशीष सिनहा

पाकिस्तानी कहानियों का विशिष्ट खंड

सारिका के अगस्त १९७५ अंक में

साहित्य के जरिये पाकिस्तान की मौजूदा आबोहवा का जायजा!

पिछले तीन-चार वर्षों में पाकिस्तान में जहां राजनीतिक परिवर्तन हुए हैं, वहीं पर आर्थिक और सामाजिक स्तर पर भी काफी उथल-पुथल हुई है. पाकिस्तानी साहित्य के सोच का दायरा भी पहले से ज्यादा विस्तृत हुआ है — वहां का साहित्य रूमानियत के घेरे को तोड़कर यथार्थवादी भूमि पर उतर रहा है और उसकी चिंताएं आम आदमी की जिंदगी से जुड़ रही हैं.

इस अंक में पाकिस्तान की विभिन्न भाषाओं — बलूची, पश्तो, हिंदको, सिंधी, पंजाबी और उर्दू — की इसी नयी रचनात्मकता की एकदम ताजा रचनाएं दी जा रही हैं — यानी कहानियां, लघुकथाएं, तेज-तर्रार व्यंग्य, विचारोत्तेजक लेख और टिप्पणियां!

कुछ प्रमुख लेखक हैं : शेख अयाज, अमर जलील, शौकत हुसैन, अरबाब सिंधी, अनवर सरहदी, फारिग बुखारी, फरखंदा लोधी, अशराफ हुसैन अहमद, मुस्ताक अहमद वजदी, अशफाक अहमद, अहमद सलीम, इंतजार हुसैन, अहमद नदीम कासमी आदि.

- जहीर नियाजी और वासुदेव 'सिंधु-भारती' की टिप्पणियां

- साथ ही — लक्ष्मी नारायण लाल, कुलभूषण, रामदरश मिश्र, आदि भारतीय लेखकों की कहानियां.

तथा इसी अंक में फिर से पढ़िए सभी स्थायी स्तंभ : गुस्ताखियां, गर्दिश के दिन, कबिरा खड़ा बजार में, कृतियां, मीनाकुमारी की शायरी, गुलजार की नज्में, चंद सतरें और आदि.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

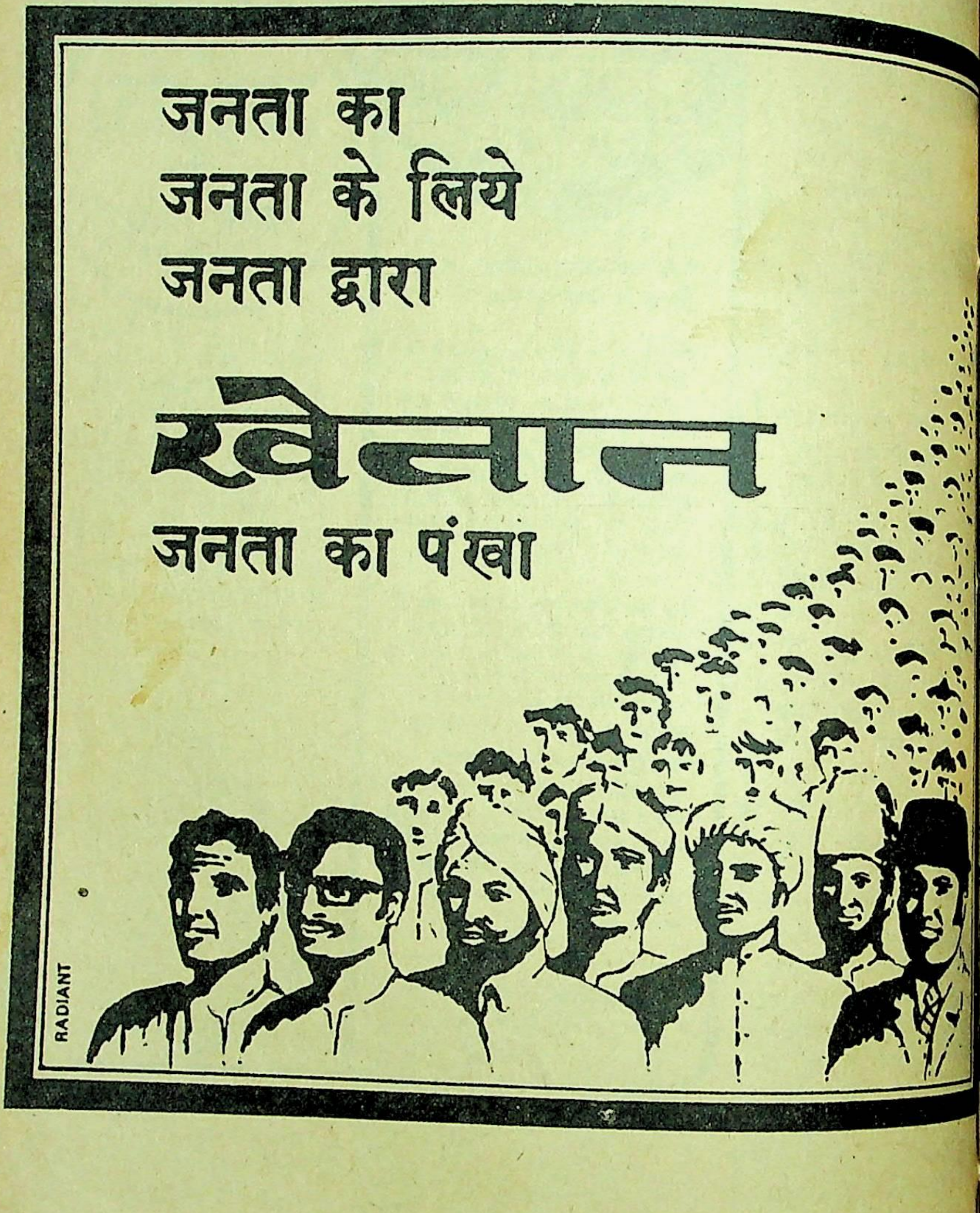

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तों के डाक्टरों की राय में

नियमित रूप से दाँत ब्रश करने और मसूढ़ों की मालिश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है

खिए, फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट नियमित इस्तेमाल करनेवालों ने अपने आप या लिखा है:

मसूढ़ों की तकलीफ़ थी और... दिक, होमियोपैथिक, एलोपैथिक; तरह की दवाई ली लेकिन थोड़ी देर आराम मिला। अन्त में दाँतों के र की सलाह अनुसार मैंने फ़ोरहॅन्स स्ट इस्तेमाल करना शुरू किया। आज भी मेरे दाँत और मसूढ़े बढ़िया और मज़बूत हैं कि पूछिए ।'

(सही) गोपालसिंह, कोटा

'...मेरी पत्नी को दाँतों में बड़ी पीड़ा थी ...लेकिन जबसे उसने फ़ोरहॅन्स इस्तेमाल करना शुरू किया, इतना अच्छा रहा कि अब किसी को भी दाँत या मसूढ़ों में तकलीफ़ होते ही वे फ़ोरहॅन्स लेने की सलाह देती हैं। वही क्यों, इंग्लैंड में मेरे भाई हैं न, उन्होंने भी भारत से फ़ोरहॅन्स के ६ ट्यूब भेजने के लिए बार बार लिखा है।'

(सही) टी.जी.एम्.डीसूज़ा, बम्बई

'...राजमुन्दरी में एक दाँतों के डाक्टर हैं ...उन्होंने मुझे दाँतों व मसूढ़ों की भलाई के लिए फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट इस्तेमाल करने की सलाह दी। मैंने फ़ौरन ऐसा ही किया। थोड़े ही समय में सांस की दुर्गन्ध जाती रही, मसूढ़े फिर अच्छे हो गए। तब से, सच मानिए, मैं ही नहीं मेरे पूरे परिवार के ९ लोग फ़ोरहॅन्स ही इस्तेमाल करते हैं और मुझे पूरा विश्वास है कि हमारी यह आदत और हमारी यह आस्था पीढ़ियों तक चलती रहेगी।'

(सही) पी. जे. लाज़ार
चिराला, आन्ध्र प्रदेश

(इन पत्रों की फोटोस्टॅट कॉपी आप जैफ़्री मैनर्स एण्ड कं. लि. के किसी भी कार्यालय में देख सकते हैं)

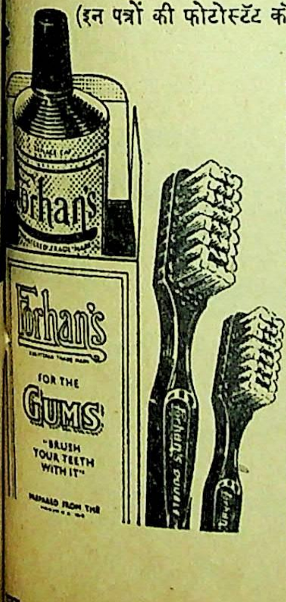

दाँतों की समुचित देखभाल के लिए रोज सवेरे और रात को फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट और फ़ोरहॅन्स डबल-एक्शन टूथब्रश इस्तेमाल कीजिए...और नियमित रूप से डाक्टर की सलाह भी लेते रहिए।

मुफ़्त! "आपके दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा" नामक रंगीन सूचना-पुस्तिका। अपनी प्रति * प्राप्त करने के लिए (डाक-खर्च के लिए) २५ पैसे के टिकट इस कूपन के साथ इस पते पर भेजिए: मैनर्स डेण्टल एडवाइज़री ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-१ S.12

नाम: ________________ उम्र: ________

पता: ________________

* कृपया जिस भाषा की पुस्तिका चाहिए, उसके नीचे रेखा खींच दीजिए: अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू, पंजाबी, बंगाली, आसामी, तामिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड़

फ़ोरहॅन्स दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट

129 F 203 HN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माधुरी के हर अंक में आपके लिये ढेर से पुरस्कार !

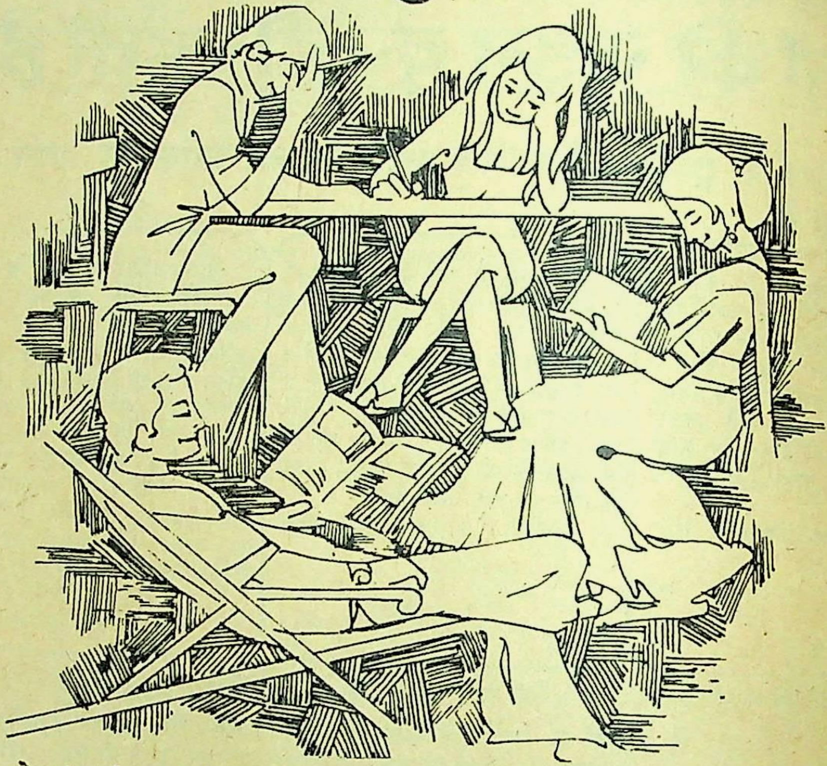

बाइस्कोप ! अपने शहर के सिनेमाघर का दिलचस्प वर्णन कीजिये और माधुरी से पुरस्कार लीजिये !

आपकी अदालत में ! अपनी राय माधुरी के अन्य पाठकों को बताइये और माधुरी से पुरस्कार लीजिये !

शीर्षक प्रतियोगिता ! सुंदर फोटो ! और उन पर आपके शायराना शीर्षकों पर माधुरी के पुरस्कार !

आपकी बात ! फिल्म और माधुरी संबंधी आपके पत्रों पर हर अंक में पुरस्कार !

★ आर्ट पेपर पर कलात्मक मुखपृष्ठ ★ अधिक सामग्री

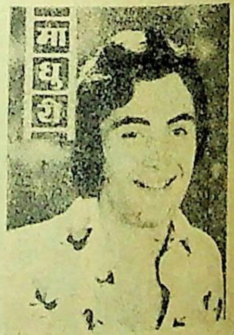

फिल्म पत्रिकाओं की रानी माधुरी

टाइम्स ऑफ इंडिया प्रकाशन

ARMS-BC/M-55-800 HN-R

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेनेट कोलमेन एंड कंपनी लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिए श्रीकृष्ण गोविंद जोशी द्वारा टाइम्स आफ इंडिया प्रेस, बंबई में मुद्रित व प्रकाशित. पो बाक्स २१३, बंबई-१। ... कलकत्ता आफिस : १३ और १३/२ गवर्नमेंट प्लेस ईस्ट. लंदन आफिस : ३०-ए, डिस्ट्रिक्ट रोड, सडबरी, वेम्बले, मिडिलसेक्स, यू. के.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पंजीयत सं. एम. एच दक्षिण बंबई-३०९
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वो दो जो मेरी साँसों में बसा करते हैं—

एक तुम

एक बिनाका ग्रीन

सच, बिनाका ग्रीन की निर्मल ताज़गी में बसीं मेरी साँसें... और मेरी हर साँस में समाए तुम! मुझे तुमसे प्यार है... मुझे बिनाका ग्रीन से प्यार है क्योंकि क्लोरोफ़िलयुक्त बिनाका ग्रीन में पाये जाने वाले प्राकृतिक गंधनाशक से मेरी साँसों में फूल खिल जाते हैं.... आह! वह बहार... तुम्हारे साथ गुज़रे वह सुनहरे क्षण... वह महका महका सा मेरी साँसों का मधुबन!

महकी साँसों का मधुबन

बिनाका टूथब्रश की गोल बनायी गयी नोकें आपके मसूढ़ों को छिलने से बचाती है।

CIBA-GEIGY

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar